बचित्र नाटक

एक अद्वितीय रचना



प्रि. बेअंत कौर

संपादक - संत सिंह

बचित्र नाटक

एक अद्बितीय रचना

लेखिका की अन्य रचनाएँ :

1	सूबा गन्डा सिंह (जीवन कथा)	– 1990
2	सतिगुरु प्रताप सिंह जी अते होले महह्ले (घटनाएँ)	– 1991
3	लाल ऐहि रतन, भाग–1 (उपदेश)	– 1995
4	दरसनु देहु दइआपति दाते (बारहमाह)	– 1996
5	लाल ऐहि रतन, भाग–2 (उपदेश)	– 1999
6	इहि सुन्दरि सयाम की मान तमै (बारहमाह)	– 1999
7	बचित्र नाटक–एक अपूर्व कृति (गुरूवाणी)	– 1999
8	The Namdhari Sikhs (History)	– 1999
9	सुन्दर श्याम (बारहमाह)	– 2000
10	दरस प्यासी	– 2000
11	नमो नाथ पूरे	– 2001
12	लाल ऐहि रतन, भाग–3 (उपदेश)	– 2002
13	लाल ऐहि रतन, भाग–4 (उपदेश)	– 2003
14	नमो लाक माता	– 2003
15	आदि शक्ति	– 2003
16	लाल ऐहि रतन, भाग–5 (उपदेश)	– प्रकाशन अधीन

बचित्र नाटक

एक अद्वितीय रचना

लेखिका – प्रिं: बेअंत कौर
संपादक – संत सिंह

प्रकाशक
आरसी पब्लिशर्ज, चांदनी चौंक, नई दिल्ली–6

Bachitter Natak, Ek Advitiya Rachna (a unique composition)

By
Pr. Beant Kaur
F213 A-1, Mansarover Garden,
New Delhi - 110015

Editor : Sant Singh

Phone : 25422956

केंद्रीय हिंदी निदेशालय (मानव संसाधन विकास मंत्रालय) संस्वीकृति पत्र संख्या 5&40 / 2001 के. अनु. ए. दिनांक 24 फरवरी, 2004, के माध्यम से प्राप्त वित्तीय सहायता से प्रकाशित हुई है।

मूल्य : 59 रू

लेजर टाइप सैटिंग : एस आर एस कम्प्यूटर,
नई दिल्ली, 110 015
☎ 25422956

प्रकाशक व मुद्रक : आरसी प्रिंटिंग एजेन्सी,
चादनी चौक, दिल्ली, 110 006
☎ 23280657

विषय सूची

यह पुस्तक श्री गुरु गोबिंद सिंह द्वारा रचित दशम ग्रंथ साहिब जी में संकलित वाणी बचित्र नाटक पर आधारित है। इस ग्रंथ में गुरुमुखी लिपि में लिखित गुरुवाणी के मौलिक रूप को बिना किसी मात्रा एवं शब्द के बदलाव के देवनागरी लिपि में लिखने का प्रयास किया गया है। आशा करती हूँ कि पाठक जन इसका शुद्ध उच्चारण करके आनंदित होंगे।

— लेखिका

ੴ

श्री सद्गुरू राम सिंह जी सहाए

आदि कथन

कागद दीप सभै करि कै अरु सात समुंद्रन की मसु कैहो।।
काट बनासपती सगरी लिखबे हूके लेखन काज बनै हो।।
सारसुती बकता करि कै जुगि कोटि गनेसि कै हाथ लिखै हो।।
काल क्रिपान बिना बिनती न तऊ तुमको प्रभ नैक रिझै हो।।101।।

श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के बहुमुखी व् अद्वितीय व्यक्तित्व को शब्दों में वर्णन करना अति कठिन है। वह तो सर्वगुण सम्पंन महापुरूष थे। उनके गुणों का गान करना मनुष्य के सामर्थ्य से बाहर है। अकाल पुरुष प्रभु ने आपको सुपुत्र बना कर, इस सृष्टि में किसी विशेष लक्ष्य की पूर्ति के लिये भेजा। एक ओर आपने धर्म के प्रचार व् खालसा पंथ की स्थापना के लिए अवतार धारण किया व् दूसरी ओर दुष्टों का संहार करने का भी एक विशेष कार्यक्रम निश्चित किया। यदि एक ओर आप जी की मनमोहक छवि में अध्यात्मिकता स्पष्ट झलकती थी तो दूसरी ओर आप जी की रौबीली छवि दुश्मनों को थर-थर कंपा देती थी। यदि एक ओर बचपन में आप अपने प्रिय पिता, तिलक-जनेऊ के रक्षक श्री गुरु तेग बहादुर जी की धर्म-रक्षा करने के लिये क्रूर सत्ता के साथ लोहा लेने के लिये सराहना करते तो दूसरी ओर नौ वर्ष की छोटी सी आयु में गुरुगद्दी पर सुशोभित हो कर दुष्टों का संहार करने का निश्चय करते हैं।

आप जी ने अपने समक्ष यह विशेष उद्देश्य रखा था कि स्वयं जो भी कार्य करेंगे उसमें अवश्य विजय प्राप्त होगी। आप राजाओं में महाराजा, लेखकों में महालेखक और कवियों में महाकवि बनकर सुशोभित होते थे। योद्धाओं में आप परम योद्धा थे।

डॉ0 जोध सिंह जी के शब्दों में–*ध्यानपूर्वक देखने पर एक-आधे अपवाद को छोड़कर यह पूर्णतया स्पष्ट है कि भारतीय इतिहास में व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास लगभग एकांगी ही रहा है, अर्थात् संत, ऋषि आदि केवल अध्यात्म में ही निपुण रहे हैं और योद्धा मात्र रणकौशल, सैन्य-संचालन में ही दक्ष रहे हैं। योद्धा और संत को एक–दूसरे पर आश्रित रहना पड़ा है और कहा जा सकता है कि ऋग्वेद के पुरुषसूक्त के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, सूद्र की परमपुरुष के शरीर से उत्पत्ति दिखाने वाले मंत्र की सही व्याख्या न समझाए जा सकने के कारण और लोगों को गुमराह कर इस वर्ण–व्यवस्था को निहित स्वार्थों के लिए कालांनतर में रूढ़ बना दिए जाने के कारण ही भक्ति और शक्ति की धाराएं भारत में सदैव पृथक्-पृथक् ही चलती रही हैं। परशुराम, द्रोणाचार्य आदि जैसी महान विभूतियां (जो कि जन्म से ब्राह्मण तथा कर्म से क्षत्रिय थे) केवल वीर योद्धा के रूप में ही इतिहास के माध्यम से हमारे सामने उभरी और दूसरी ओर विश्वामित्र (जो कि जन्म से क्षत्रिय थे) जैसे महान पुरुष ब्रह्मर्षि की उपाधि से विभूषित हुए। महाकाव्यों के समय में हम देखते हैं कि ऋषि-मुनि अध्यात्म के महान स्रोत होने के बावजूद भी यज्ञों की रक्षा में अपने को असमर्थ पाकर राजाओं से सहायता लेते हैं और प्रत्येक राजा अध्यात्मिक और नैतिक बल के लिए ऋषि-मुनियों की कृपादृष्टि पर आश्रित है।*

गुरु गोबिंद सिंह जी एक ऐसे संत सिपाही थे जिन्होंने भक्ति और शक्ति का सुमेल करते हुए एक हाथ में माला और एक हाथ में तलवार ले कर चलने वाले 'खालसा पंथ' की

सृजना की।

आपकी असंख्य रचनाओं में दशम ग्रंथ में संकलित वाणी अपना एक विशेष महत्व रखती है। श्री दशम ग्रंथ साहिब की अनेक हस्तलिखित प्रतिलिपियों के अतिरिक्त बहुत सारे प्रकाशित संस्करण भी उपलब्ध हैं। मुख्यतः प्रचलित प्रकाशित संस्करण भाई जवाहर सिंह, कृपाल सिंह अमृतसर वालों का है, जिसके कुल पृष्ठ 1428 हैं एवं अंत में 8 पृष्ठ असफोटक कबित हैं। उसमें सम्मिलित वाणी का विवरण इस प्रकार है।

1. जापु साहिब
2. अकाल उस्तति
3. बचित्र नाटक
4. चंडी चरित्र उकति बिलास
5. चंडी चरित्र दूसरा
6. वार श्री भगौती (भगवती) जी की (चंडी की वार)
7. ज्ञान प्रबोध
8. चौबीस अवतार
9. रामकली पातशाही 10 (शब्द हजारे)
10. सवैये (33)
11. खालसा महिमा
12. शस्त्र नाम माला
13. पखियान चरित्र
14. ज़फरनामा
15. अस्फोटक कबित पृष्ठ 'क' से 'ण' तक

इसके अतिरिक्त सरबलोह ग्रंथ, गुरिंड नामा, बेअंत साखियों में भविष्यत वाक्य एवं अन्य अनमोल बहुमूल्य साहित्यिक रचनाएं उपलब्ध हैं।

श्री दशम ग्रंथ साहिब में बचित्र नाटक स्वयं ही एक विशेष महत्व रखता है। बचित्र नाटक के नाम से ही यह बात पूर्ण रूप

से सपष्ट है कि यह दैवी शक्तियों की अदभुत लीलाओं और चरित्र प्रसंगों का संग्रह है। वास्तव में दशम ग्रंथ में संकलित रचनाएं चंडी चरित्र उकति बिलास, चंडी चरित्र 2, चौबीस अवतार, ब्रह्मावतार और रुद्र अवतार, बचित्र नाटक के ही अंश हैं, परंतु इस पुस्तक में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने आत्म चरित्र का ही वर्णन किया है। इसमें गुरु जी अपने वंश के पूर्वजों का उल्लेख करते हैं कि कैसे सोडी और वेदी वंशों की उत्पत्ति हुई। भारत में ऐसा कोई भी अन्य धार्मिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं जिसमें लेखक ने अपने पूर्वजों का और अपने पूर्व जन्म का वर्णन किया हो। यह भी एक विचित्र बात है कि विष्णु जी के सारे अवतारों का विवरण एक साथ एक ही ग्रंथ में किया गया हो। इसके साथ ही ब्रह्मा जी और रुद्र के अवतारों का वर्णन पाठकों को विसमादित करता है।

यह संपूर्ण सृष्टि ही उस परम परमेशवर ईश्वर की बनाई हुई, विस्मय से भरी हुई है। इस रंग-बिरंगी सृष्टि में विचरण कर रहे हर तरह के जीव, प्राणीं, पशु-पक्षी, फूल-पत्तियां इत्यादि विसमादित करती हैं। यह सब कुछ देख कर होठों से अक्समात ही निकल पड़ता है वाह ! वाह ! मेरे साहिब, वाह ! मेरे मालिक, वाह ! वाह ! तुम्हारी प्रकृति !

बचित्र नाटक रचना के प्रारंभ में उस सर्वव्यापक अकाल पुरुष के विभिंन स्वरूपों का अत्यंत सुंदर, बहुत विचित्र निरूपण किया गया है। कहीं वह सरब काल में हो कर विराज रहे हैं, कहीं महाकाल का रूप धारण किया हुआ है तो कहीं सर्वलोह रूप हो कर सुशोभित हो रहे हैं। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी अपने पूर्व जन्म की चर्चा करते हुए अपनी वंशावली का मूल श्री राम चंद्र जी को बताते हैं, वह वेदियों एवं सोढियों की उत्पत्ति के बारे में विस्तार से दर्शाते हैं। पाठक यह सब कुछ पढ़कर अपने ज्ञान को तो बढ़ाते ही हैं, साथ में अचंभित भी हो उठते हैं।

हुसैनी अत्यंत उत्साह के साथ श्री गुरु गोबिंद सिंह जी पर धावा बोलने के लिए आनंदपुर साहिब के लिए बढ़ रहा था, परंतु रास्ते में उसका युद्ध पहाड़ी राजाओं के साथ हो जाता है, वह तत्काल मारा जाता है। कितनी विचित्र घटना है, कि जा रहा था सदगुरु जी पर धावा बोलने के लिए परंतु उसी पर धावा बोला जाता है। सदगुरु जी इस आश्चर्यजनक घटना के संदर्भ में अकाल पुरूष प्रभु का कोटि-कोटि धन्यवाद इन शब्दों में करते हैं।

राखि लीयो हम को जगराई।।
लोह घटा अन तै बरसाई।।

शहज़ादों के आगमन का समाचार सुन कर कई लोग घबरा कर भाग गए। दूर पर्वतों की कंदराओं में जा कर छुप गए। सदगुरु जी ने उनको बहुत समझाया परंतु उन्होंने सदगुरु जी का आदेश न माना। कितनी विस्मयपूर्ण बात है कि जो अपनी जान बचाने के लिए भागे, वह तो मारे गए, पर जो अपने सदगुरु जी की शरण में रहे वह बच गए एवं उनका कुछ भी न बिगड़ा, उनका तो बाल भी बांका न हुआ।

सदगुरु जी बचित्र नाटक के चौदह अध्यायों में विभिंन विषयों से संबधित घटनाओं का वर्णन करते हैं। सबसे पहले मंगलाचरण करते हुए बचित्र नाटक का प्रारंभ करते हैं। प्रथम अध्याय में काल पुरुष की महिमा का गुणगान अत्यंत सुंदर शब्दों में किया है। वह प्रभु सदैव स्थिर रहने वाला है और अजन्मा है। वह देवों का भी महादेव है और राजाओं का भी महाराजा है। वह प्रभु निराकार है, विकारों से रहित है, सदैव रहने वाला है और सबसे भिंन है। वह विशेषकर न तो बूढ़ा होता है न ही युवक और न ही बालक है। उसमें कोई द्वैष भाव नहीं है, न ही उसका कोई भेष है। वह निराकार है और सदैव काल सजीव है। वह किसी से द्वैष नहीं करता और भेष रहित

है। उसका किसी से रोष नहीं और वह शोक रहित है। वह किसी से धोखा नहीं करता और मोह से मुक्त है। वह प्रभु देवों का भी देव है और योगियों का भी महा योगी है।

वह ईश्वर कहीं तो रजोगुणी है, कहीं तमोगुणी और कहीं सतोगुण को धारण किये हुये हैं। कहीं तो उसने स्त्री का रूप धारण किया हुआ है और कहीं पुरुष का। कहीं देवी-देवताओं के रूप में विचर रहा है और कहीं दैंत के रूप में। संसार में जितने भी पीर पैगंबर हुये हैं उन सब पर काल ने विजय प्राप्त की है परंतु वे काल पर विजय न पा सके।

प्रभु की चार भुजाएं अति सुंदर हैं, सिर पर बालों का जूड़ा सुशोभित है। उनके पास गदा और फांसी है जिससे यमराज के अभिमान का नाश हो रहा है। उस काल की जिह्वा अग्नि के समान लाल है। उनकी दाढ़ें बहुत भयानक हैं। युद्ध भूमि में जाते समय ऐसे प्रतीत होती हैं जैसे समुद्र घोर गर्जन कर रहा हो।

प्रभु के सुंदर रूप को देख कर कामदेव भी लज्जित हो रहे हैं। उनकी शोभा तीनों लोकों में अलौकिक है। उस अनुपम शोभा को देखकर लोग मोहित हो रहे हैं। प्रभु की आज्ञा का चक्कर चौदह लोकों में चल रहा है। वह प्रभु बढ़े हुए को घटाने वाले और घटे हुओं को बढ़ाने वाले हैं, वह सब की खाली झोली भर देते हैं। इस जगत में जल-थल में रहने वाले जितने भी जीव हैं उनमें इतना साहस कहाँ जो उस प्रभु आज्ञा की अवहेलना करे। कोई कितने भी बड़े बड़े दुर्ग बना ले, करोड़ों साधन अपने बचाव के लिए बना ले फिर भी काल के चक्र से वह बच नहीं सकता। मौत से बचने के लिए चाहे जितने भी जंत्र लिख ले और कितने मंत्रों का जाप कर ले, प्रभु की शरण के बिना और कोई सहारा काम नहीं आता। जिन सम्राटों ने करोड़ों युगों तक राज्य किया अतः भांति-भांति के रस का पान

किया; अंत समय नंगे पांव इस दुनिया से कूच कर गए। वह हठी राजा काल के सामने झुकते हुए देखे गए। उस प्रभु की शरण में जाने के अतिरिक्त बचने का कोई उपाय नहीं। चाहे वो देवता हो या दैत्य। चाहे कोई राजा है या रंक, चाहे कोई पातशाह है या उमराव, वे सब अपने बचने के करोड़ों उपाय क्यों न कर लें, प्रभु की शरण के अतिरिक्त उनके बचाव का कोई और साधन नहीं। जो कोई भी इस सृष्टि में उत्पन्न होता है, उस को काल के वश में होना ही पड़ता है।

दूसरे अध्याय में अपने वंश की परंपरा का वर्णन करते हुए सृष्टि की उत्पत्ति के बारे में बताते हैं। इस अध्याय में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अकाल पुरुष दीनदयाल की महिमा का गुणगान करते हुए सृष्टि की रचना, वेदी तथा सोढी वंश की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला है। सब से पहले शेख सांई श्री विष्णु भगवान हुए। उनकी शैय्या शेषनाग की थी।

सहसराछ जाको सुभ सोहै।।
सहस पाद जाके तन मोहै।।
सेखनाग पर सोइबो करै।।
जग तिह सेखसाइ उचरै।।

शेख सांई जी ने अपने एक कान से मल निकाली जिससे मधु और कैटभ नाम के दो राक्षस उत्पन्न हुए। दूसरे कान की मल से सृष्टि की उत्पत्ति हुई। सूर्यवंश में रघु राजा हुए। रघु राजा से अज और फिर दशरथ नाम के राजा हुए। राजा दशरथ की तीन रानियां और चार बेटे—श्री रामचंद्र जी, भरत, शत्रुघन, और लक्ष्मण हुए। श्री रामचंद्र जी के दो बेटे थे, लव और कुश। लव ने लाहौर और कुश ने कसूर शहर को बसाया। उनकी कई पीढ़ियां बीतने के बाद लव के स्थान पर काल राए तथा कुश की गद्दी पर काल केतू राजा हुए। उन दोनों का आपस में बहुत दिनों तक युद्ध हुआ। अंत में कालराय की जीत

हुई। उसने कालकेतु को पंजाब से निकाल दिया। वह सनौढ चला गया और वहाँ के राजा की लड़की से विवाह कर लिया। उनका एक बेटा हुआ जिसका नाम सोढीराय रखा और सोढी वंश का आरंभ हुआ।

तीसरे अध्याय में लव-कुश के युद्धों का वर्णन है। यह युद्ध सोढीराय के बेटों और कालराय के बेटों के बीच में हुआ। युद्ध का वर्णन करते हुए गुरु गोबिंद सिंह जी बताते हैं कि बहादुर शूरवीर शस्त्रों के साथ जुटे हुए हैं, हथियारों के चलने से चिंगारियां निकल रही हैं, तलवारें और कटारें चल रही हैं, लोहे से लोहा टकरा रहा है और बहुत भयानक युद्ध हो रहा है। बहादुर योद्धाओं की लड़ाई से धरती भी कांप उठी।

क्रिपाणं कटारं।। भिरे रोस धारं।।
महांबीर बंकं।। भिरे भूम हंकं।।

सोढीराय के वंशजों ने कालराय के वंश को हरा दिया और पंजाब पर अधिकार कर लिया।

लवी सरब जीते कुसी सरब हारे।।
बचे जे बली प्रान लै कै सिधारे।।
चतुर बेद पठियं कीयो कासि बासं।।
घनै बरख कीने तहां ही निवासं।।

लव के (कालराय) वंशज भागकर काशी चले गए और विद्याध्यापन के कार्य में जुट गए। वेदों का ज्ञान प्राप्त करके वे वेदी बन गए। कुश की संतान पंजाब में राज्य करते हुए अपना समय व्यतीत करने लगी।

चौथे अध्याय में 'वेद पाठ भेंट राज' के बारे में बताया है। काशी जाकर कुश के वंशज वेदों का अध्ययन करके विद्वान हो गए। वेद वक्ता होने के कारण उनका नाम वेदी हो गया। उधर लव के वंशज सोढी को जब मालूम हुआ कि उनके भाई वेदों का ज्ञान प्राप्त करके विद्वान हो गए हैं उन्होंने पुरानी

शत्रुता को भुलाकर अपने भाईयों को लाहौर में निमंत्रित किया। वे लाहौर उनको मिलने के लिए आ गए। सोढियों ने अपने वेदी भाईयों से वेदों का पाठ सुना। उन्होंने सामवेद, ऋगवेद, यर्जुवेद आदि का पाठ सुना तथा उनसे वेदों की व्याख्या भी सुनी। अथर्ववेद का पाठ सुन कर उनके सारे पाप नष्ट हो गए। वे अत्यंत प्रसंन हुए। उन्होंने अपना सारा राजपाट वेदियों को सौंप दिया और भजन करने के लिए वन में चले गए।

रहे होर लोगं।। तजे सरब सोगं।।
धनं धाम तिआगे।। प्रभं प्रेम पागे।।

वन जाते समय लोगों ने राजा से बहुत आग्रह किया और विचलित करने की चेष्टा की परंतु उसने सारी चिन्ताएं छोड़कर धन और धाम त्याग दिया और अपने आप को उस परमपिता परमात्मा की भक्ति के रंग मे रंग लिया। वेदी राजपाट पाकर अत्यंत प्रसंन हुए। उन्होंने प्रसंन होकर सोढियों को वरदान दिया कि जब भी श्री गुरु नानक देव जी उनके वंश में अवतार लेंगे तो चौथा गुरु सोढी वंश में अवतार लेगा।

पांचवें अध्याय में पातशाहियों का वर्णन है। वेदियों का आपसी खानदानी झगड़ा बढ़ गया। वे आपस में ही लड़ने लगे। उनके आपसी झगड़ों के कारण उनके पास जो था सब छिन गया। वेदी कुल में श्री गुरु नानक देव जी ने अवतार धारण किया और भूली भटकी जनता को धर्म का मार्ग दिखाया तथा पाखण्ड, भ्रम और संदेह को दूर किया।

तिन बेदीयन के कुल बिखे प्रगटे नानक राइ।।
सभ सिख्खन को सुख दए जह्ह तह्ह भए सहाइ।।

श्री गुरु नानक देव जी ने गुरुगद्दी गुरु अंगद देव जी को सौंप दी और देहधारी गुरु की परंपरा चल पड़ी। जब वरदान का समय आया तो चौथे गुरु राम दास जी सोढी वंश के गुरु बने। इस प्रकार सोढी वंश गुरुओं की गद्दी का आरंभ हुआ। यह

सभी गुरु एक ही जोत स्वरुप हैं। जिन्होंने इनको एक जोत स्वरूप माना उनको सब कुछ मिल गया, जिन्होंने पृथक माना उनके हाथ कुछ नही लगा। इसी गुरुगद्दी पर सुशोभित नौवें पातशाह गुरु तेग बहादुर जी ने तिलक और जंजू की रक्षा के लिए अपने शरीर का बलिदान देकर हिंदू धर्म की रक्षा की। उन्होंने कलियुग में बड़े शांतमयी ढंग से धर्मयुद्ध किया। उन्होंने देश की जनता की ख़ातिर अपना शीश अर्पण कर दिया पर मुख से एक बार भी 'उफ' तक नहीं निकली। उनके बलिदान से सारे संसार में हाहाकार मच गई परंतु देवलोक में उनके आगमन से जय जयकार हो गई।

छठे अध्याय में काल की आज्ञा अनुसार श्री गुरु गोबिंद सिंह जी जगत में प्रवेश करते हैं। इस संसार में अपने आने का लक्ष्य बताते है। वे प्रभु भक्ति द्वारा अपने परमपिता परमात्मा के साथ अभेद थे। प्रभु जी ने उनको बुलाकर इस मृत्युलोक में अवतार धारण करने की आज्ञा दी और आप जी ने आज्ञा का पालन करते हुए इस संसार की भूली भटकी मानवता को सीधे रास्ते पर लाने के लिए अवतार धारण किया। कई महापुरुष पहले इस संसार मे अवतरित हुए और उन्होंने अपने अपने नाम जपवाये, अकाल पुरूष प्रभु के नाम का स्मरण नहीं करवाया। गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं जो लोग मुझे परमेश्वर कहेंगे वे नरक के अधिकारी होंगे।

जे हम को परमेसर उचरि है।।
ते सभ नरकि कुंड महि परि है।।
मोको दासु तवन का जानो।।
या मै भेदु न रंच पछानो।।

मुझे उस प्रभु का दास मानो। इस बात में तनिक भी अंतर नहीं जानना चाहिए। इस प्रकार श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने संसारी जीवों को प्रभु का नाम स्मरण करवा कर उचित

रास्ते पर लाए।

सातवां अध्याय श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के अवतार के बारे में है। इस में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी अपने जन्म का वर्णन करते हैं। उनके माता-पिता ने पूर्व दिशा का भ्रमण करते हुए अनेक तीर्थों के दर्शन किए। इलाहाबाद में त्रिवेणी के संगम पर पहुंच कर उन्होने बहुत दान-पुण्य किये। इसी के फलस्वरूप गुरु गोबिंद सिंह जी ने पटना में अवतार लिया।

तही प्रकास हमारा भयो।।
पटना सहर बिखै भव लयो।।

वहाँ उनका पालन-पोषण बड़े उत्तम ढ़ंग से किया गया तथा अनेक प्रकार की शिक्षा दी गई। अल्प आयु में ही आप जी के पिता श्री गुरु तेग बहादुर जी महान बलिदान देकर देव लोक सिधार गए।

आठवें अध्याय में राज साज एवं भंगाणी युद्ध का वर्णन किया है। पिताजी के शहीद होने के बाद राजपाट का भार श्री गुरु गोबिंद सिंह जी को सौंपा गया। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी नाहन के राजा मेदनी प्रकाश के निमंत्रण पर 17 वैशाख संवत 1742 में अपने परिवार सहित नाहन पहुँचे। सदगुरु जी ने यमुना के किनारे एक सुंदर स्थान अपने रहने के लिए चुना जहाँ राजा ने उनके लिए बड़ा सुंदर महल बनवा दिया तथा उस स्थान का नाम पांउटा साहिब रखा। पांउटा साहिब से 7 मील दूर गांव भंगाणी था। सदगुरु जी ने उस गांव में मोंचा गाड़ दिया तथा अंतर्यामी सदगुरु जी युद्ध की प्रतीक्षा करने लगे। पहाड़ी फौजों के आने से युद्ध आरंभ हो गया। सदगुरु जी की ओर से कई वीर–संगोशाह, जीतमल, गाजी गुलाब, माहरी चंद, लाल चंद, मामा कृपाल दास तथा साहिब चंद– युद्ध करने के लिए आ डटे। पहाड़ियों की ओर से फते चंद, भीम चंद, गुपाल, हरी चंद, केसरी चंद, मसंदर शाह, गाजी चंद,

नजाबत ख़ान, हयात ख़ान, तथा भीखन ख़ान योद्धाओं ने युद्ध में भाग लिया। बहुत भयानक युद्ध हुआ।

कहा लगे बरनन करौ मचियो जुद्धु अपार।।
जे लुज्झे जुज्झे सभे भज्जे सूर हजार।।

श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि मैं कहाँ तक युद्ध का वर्णन करुँ। जो आमने-सामने हो कर लड़े वे शहीद हो गए। हज़ारों भीरू योद्धा, डर कर युद्ध के मैदान से भाग खड़े हुए। सदगुरु जी स्वयं इस युद्ध में आ डटे। अंत में सदगुरु गोबिंद सिंह जी विजयी हुए और पहाड़ी राजा भाग गये। सदगुरु जी का यह पहला युद्ध था जो 18 वैशाख संवत 1746 में हुआ। तत्पश्चात गुरु जी ने बहुत समय शांतिपूर्वक बिताया। संत जनों की रक्षा की तथा दुष्टों का नाश किया।

नौवें अध्याय में नदौन युद्ध का वर्णन है। नदौन कांगड़े के जिले हमीरपुर की तहसील खाना दोआबा के गांव कटौच राजपूतों की राजधानी है। पहाड़ी राजाओं ने औरंगज़ेब की सरकार को तीन वर्ष से कर (टैक्स) नहीं दिया। इस कर को इकट्ठा करने के लिए औरंगज़ेब ने मियां ख़ान को संवत 1746 में भेजा। मियां ख़ान स्वयं तो जम्मू की ओर चला गया तथा अपने भतीजे अलफ़ ख़ान को फौज देकर पहाड़ी राजाओं की ओर भेज दिया। अलफ़ ख़ान ने कांगड़े जाकर रुपये पैसे देकर समझौता कर लिया। उसने अलफ़ ख़ान को कहा कि सबसे बड़ा राजा भीम चंद है इसलिए सबसे पहले उससे मुआवज़ा लिया जाए। दयाल चंद बिजड़वालिये ने इस बात की पुष्टि कर दी। इनकी प्रेरणा से अलफ़ ख़ान ने कहलूर पर आक्रमण कर दिया। उसने भीम चंद को संदेश भेजा कि वह तीन साल का कर भुगतान करे अन्यथा युद्ध के लिए तैयार हो जाए। भीम चंद ने कर तो नहीं दिया परंतु युद्ध के लिए तैयार हो गया। उसने अपनी सहायता के लिए और राजाओं को बुला भेजा। भीम चंद

चाहे श्री गुरु गोबिंद सिंह का विरोधी था परंतु इस अवसर पर उसने सभी वैर भाव त्यागकर सदगुरु जी से सहायता मांगी। सदगुरु जी ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली तथा नदौन पहुँच गए। बड़ा भयानक युद्ध हुआ जिसमें कई शूरवीर योद्धा शहीद हो गए तथा अलफ़ ख़ान ने नदी के पार डेरा डाल लिया। अंत में जलती हुई आग को छोड़कर और धौंसे बजते हुए छोड़कर वहाँ से भाग गया। भीम चंद ने विजय के उन्माद में सदगुरु जी को अपने पास आठ दिन तक रखा। सदगुरु जी उसको अपार खुशियां देकर स्वयं आनंदपुर साहिब लौट आए। रास्ते में आलसून गांव था, जहाँ के लोग सिक्खों को बहुत तंग करते थे, उनको लूट कर उजाड़ दिया। दूसरी ओर भीम चंद कृपाल चंद कटोचिये तथा दयाल चंद बिजड़वालिये के साथ समझौता करने के लिए चल पड़ा।

दसवें अध्याय में खानज़ादे का आगमन है। अलफ़ ख़ान हार कर लाहौर लौट गया। उसका हाल सुनकर दिलावर खां ने अपने बेटे को आनंदपुर साहिब भेजा। रात्रि के समय उसने चुपचाप नदी किनारे अपना डेरा डाल लिया। सरदार आलम सिंह ने जाकर श्री गुरु गोबिंद सिंह जी को सारा समाचार सुना दिया। गुरु जी की आज्ञानुसार उस समय नगाड़े बजने लगे। इधर शोर सुनकर मुसलमानी सेना को पूर्ण विश्वास हो गया कि उनके आने की खबर श्री गुरु गोबिंद सिंह जी को मिल गई है। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। वे बहुत परेशान थे तथा सदगुरु जी की फौज का धमाका सुनकर वे वहाँ से भाग खड़े हुए। रास्ते में उन्होंने बरवॉं गाँव को लूटा। फिर मलान की ओर बढ़ गए।

ग्याहरवें अध्याय में हुसैनी युद्ध का विवरण है। जिस समय दिलावर ख़ान का बेटा रुस्तम ख़ान हार कर लाहौर पहुंचा तो उसके पिता ने उसको बहुत फटकारा तथा भरे दरबार में ललकार कर कहा कि कोई ऐसा वीर है जो पहाडी राजाओं

तथा गुरु गोबिंद सिंह जी का मुकाबला कर सके। यह ललकार सुनकर हुसैनी ख़ान युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। दिलावर ख़ान ने उसकी सहायता के लिए 2000 पठानों की फौज देकर उसे विदा किया। पहाड़ों में पहुंचते ही उसने लूट मार करनी शुरू कर दी। सबसे पहले उसने मधुकर शाह डढवालिए को अपने अधीन कर लिया। फिर कहलूर की ओर चल पड़ा। उसके आने का समाचार पाकर भीम चंद कहलूरिया तथा कृपाल चंद कटौचिया उसको भेंट देने के लिए उसके पास पहुँचे। यह देखकर हुसैनी को बहुत अहंकार आ गया। उसने आनंद पुर साहिब को लूटने का विचार किया। इस बात की खबर गुरु गोबिंद सिंह जी को पहुंच गई। हुसैनी जब आनंदपुर साहिब की ओर आ रहा था तो रास्ते में गुलेरिआ राजा गोपाल 4000 रुपये लेकर हुसैनी को मिला। कटौचिए ने हुसैनी को भड़काया कि वह गोपाल से 4000 रुपये न लेकर 10000 रुपयों की मांग करे। हुसैनी इस चाल को न समझ सका। उसने गोपाल को पकड़ लेने का फैसला कर लिया। गोपाल उसकी चाल को समझ गया। उसने हुसैनी को कहा कि वह घर से उसे 10000 रुपये लाकर दे देगा। वह घर जाकर वापस नही आया। इससे हुसैनी को बहुत क्रोध आया और उसने गोपाल को पंद्रह प्रहर किले में घेर कर रखा। उस समय गोपाल ने गुरु गोबिंद सिंह जी से सहायता मांगी। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने संगतिआ सिंह को हुसैनी के साथ समझौता करने के लिए दूत बनाकर भेजा। संगतिआ सिंह को आया देख भीम चंद ने विचार किया कि अब गोपाल को गुरु जी की सहायता मिल गई है। उसने एक चाल चली। उसने संगतिया सिंह को धर्म की सौगंध देकर कहा कि वह गोपाल को उनके पास ले आए। उसने सौगंध पर भरोसा कर लिया और गोपाल को उनके पास ले आया। उनके हृदय में मक्कारी तो पहले से

ही थी। उन्होने गोपाल को पकड़ लेने की योजना बनाई। गोपाल यह सारी चाल समझ गया तथा भागकर अपनी फौज में शामिल हो गया। सगंतिआ सिंह को बहुत क्रोध आया, वह शस्त्र उठाकर युद्ध के मैदान मे पहुंच गया। बड़ा भयानक युद्ध हुआ। गुरु जी ने युद्ध का वर्णन वीर रस में इस प्रकार किया है जिसको पढ़कर पाठक स्वयं को उसी युद्ध में खड़ा पाता है।

कड़क्कै कमाणं।। झणंके क्रिपाणं।।
कड़क्कार छुट्टै।। झणंकार उठ्ठै।।

कहीं कमानों के कड़कने की आवाज़ आ रही है तो कहीं तलवारें चमक रही हैं। हथियारों के कड़-कड़ की आवाज़ हो रही है, कहीं शस्त्रों से शोले उठ रहे हैं। सगंतिआ अपने सैनिकों के साथ युद्ध में शहीद हो गया। दरसो भी लड़ाई में वीर गति को प्राप्त हुआ। अंत में भीम चंद हुसैनी को मरवा कर युद्धभूमि से भाग गया। इस प्रकार गोपाल ने युद्ध जीत लिया।

बारहवें अध्याय में जुझार सिंह के युद्ध का वर्णन किया है। हुसैनी खां के मरने का समाचार सुनकर दिलावर खां ने उसी समय रुस्तम खां को लड़ने के लिए भेजा। उसकी सहायता के लिए चंदन राय तथा जुझार सिंह रणभूमि में जुट गए। इन्होंने भलान गाँव को लूट लिया। गज सिंह जसवालिए को जब ज्ञात हुआ तो उसने रुस्तम खाँ तथा उसकी सेना को भगा दिया। रुस्तम खाँ तथा चंदन राय ने बड़े जोश से जसवालिये पर हमला कर दिया, बड़ा भयानक युद्ध हुआ। अंत में चंदन राय तथा जुझार सिंह युद्ध में मारे गये तथा शाही सेना वापस लाहौर चली गई।

तेरहवें अध्याय में शहज़ादा व् अहिदियों का आगमन है। सेना की बार-बार हार का समाचार सुनकर औरंगज़ेब ने अपने बेटे मुअज़म खान को इस युद्ध को विजय करने के लिए भेजा।

तिह आवत सभ लोक डराने।।
बडे बडे गिर हेर लुकाने।।
हमहूं लोगन अधिक डरायो।।
काल करम को मरम न पायो।।

शहजादे के आगमन का समाचार सुनकर कई कायर पहाड़ो में जा छुपे। कुछ डरपोक लोग सदगुरु जी के आत्म बल को गिराने का प्रयास करने लगे तथा सलाह देने लगे कि वे भी तूफान से डर कर किसी और स्थान पर चले जाएँ। मुअज़म खां स्वयं तो लाहौर चला गया तथा अपने एक सहायक मिर्जा जाफ़र बेग को आनंदपुर साहिब भेज दिया। मिर्जा जाफ़र बेग बड़े अच्छे स्वभाव का था। वह गुरु गोबिंद सिंह जी की नगरी पहुंच कर उनसे बहुत प्रभावित हुआ। उसने सदगुरु जी से जो बेमुख हुए थे उनके घर गिरा दिए तथा उन्हें दण्ड दिया। वह बेमुखों को सुधार कर वापिस चला गया। इस के उपरांत औरंगज़ेब ने अपने चार योद्धा और भेजे। उन्होंने भी जो बेमुख शेष बच गये थे उनके घर उजाड़ दिए तथा दण्डित किया तथा वापिस चले गए।

इह बिध तिनो भयो उपहासा।।
सभ संतन मिलि लखियो तमासा।।
संतन कसट न देखन पायो।।
आप हाथ दै नाथ बचायो।।

इस तरह उनका उपहास उड़ाया गया। सब संतो ने इक्ट्ठे होकर यह तमाशा देखा। गुरुमुखों को कोई कष्ट नहीं हुआ। उस परम पिता परमात्मा ने स्वयं ही हाथ दे कर उनकी रक्षा की।

चौदहवां अध्याय सरबकाल की विनती के साथ समाप्त होता है। इस अध्याय में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि प्रभु अपने भक्तों की सभी प्रकार के संकटों से रक्षा करते हैं। भक्तों के शत्रुओं का विनाश कर देते हैं। उस प्रभु जी ने मेरी

(श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की) भी अपना सेवक जान कर सहायता की। अपना हाथ देकर संकटों से बचाया। प्रभु कृपा से ही सारे कौतुकों का वर्णन संभव हुआ है। वह सर्वशक्तिमान परमात्मा मेरे पिता हैं। महाशक्ति मेरी माता है। शुद्ध मन मेरा गुरु है तथा शुद्ध बुद्धि माता है जिसने मुझे अच्छी शिक्षा एवम् संस्कार दिए। वह परमपिता परमात्मा मेरा हर समय रक्षक है। उस महाशक्ति देवी की भी मेरे ऊपर बड़ी कृपा है। जब मैंने आपकी अपार कृपा के बारे में समझ लिया तब मैं निर्भय हो गया। आपकी कृपा का मुझे गर्व है जिससे मैं सब का रक्षक बन कर गर्व महसूस करता हूँ।

इस प्रकार यह चौदह अध्याय विषयों की विभिंनता से ओत-प्रोत हैं।

श्री गुरु गोबिंद सिंह जी विद्वता के सूर्य हैं। उनके पास अपने भावों को व्यक्त करने के लिए शब्दावली का अथाह भंडार था। शब्दावली भावों की अभिव्यक्ति अत्यंत सुंदर ढंग से स्पष्ट करती है। सदगुरु जी भाषा को अधिक सुंदर व् स्पष्ट करने के लिए अलंकारों एवं छंदों का प्रयोग करते हैं।

पाठक शब्दावली से प्रभावित होकर आगे बढ़ता जाता है, आत्मा रस-विभोर हो कर झूम उठती है। गुरु गोबिंद सिंह जी ने बचित्र नाटक के चौदह अध्यायों में 471 छंदों का प्रयोग किया है जिनका विवरण इस प्रकार है।

अड़िल	– 01	दोहरा चारणी	– 02
सवैये	– 11	नराज	– 33
चौपई	– 162	पाधड़ी	– 10
छपा	– 01	भुजंग	– 20
तोटक	– 06	भुजंग प्रयात	– 85
त्रिभंगी	– 02	मधुभार	– 12
दोहरा	– 36	रसावल	– 90

सदगुरु जी के पास यद्यपि शब्दों के भंडार हैं परंतु फिर भी आप लिखते हैं, कि उस काल पुरुष की महिमा का व्याख्यान, शब्दों में करने में वे असमर्थ हैं। शब्द उस अनंत की महिमा का गुणगान कर ही नही सकते –

कहा नाम ता को कहा कै कहावै।।
कहा मै बखानो कहे मो न आवै।।

महाकाल का रूप अति सुंदर है, अति लुभायमान है। उसके अदभुत रूप का वर्णन सदगुरु जी, इन शब्दों में करते हैं।

अनूप रूप राजिअं।। निहार काम लाजिअं।।
अलोक लोक सोभिअं।। बिलोक लोक लोभिअं।।

काल पुरुष सर्वव्यापक है। उससे न कोई बच सका है एवं न कोई बच सकता है। काल की कृपा को जानना अति कठिन है।

क्रिया काल जू की किनू न पछानी।।
घनियो पै बिहै है घनियो पै बिहानी।।

जितने भी जीव जल-थल में विचर रहे हैं, वह सभी अति बली काल ने मार डाले हैं–

जिते जीव जंतं सु दुनिया उपायं।।
सभै अंति कालं वली काल धायं।।

सदगुरु जी ने बहुत सुंदर एवं रोचक शैली में काल पुरुष की महिमा का गुणगान किया है। अपने पूर्व जन्म की कथा का वर्णन पाठकों को ज्ञान प्रदान करता है कि किस प्रकार सदगुरु जी ध्यान मग्न हो कर अकाल पुरुष प्रभु के स्मरण में लीन थे। उनका इस दुनियां में आने का बिलकुल मन नहीं था, परंतु अपने अकाल पुरुष पिता के समझाने व् इस दुनियां में विशेष मंतव्य को सम्मुख रख कर अवतार धारण किया।

– **धरम चलावन संत उबारन।।**
दुष्ट सभन को मूल उभारनि।।

मै हो परम पुरख को दासा।।
देखनि आयो जगत तमासा।।

जब पातशाह जी युद्धों का वर्णन करते हैं तो उन युद्धों-जंगों का साक्षातकार करा देते हैं। पाठक उस ही लय में आनंद विभोर हो कर आगे बढ़ता जाता है कभी तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह भी उन युद्धों का एक अटूट अंग बनकर उनमें भाग ले रहा है। संपूर्ण दृश्य एक एक कर आँखों के समक्ष चलचित्र की तरह चलता जाता है।

उठे टोप टूकं गरजै प्रहारै।।
रूले लुथ जुथं गिरे बीर मारे।।

नांगलू-पांगलू शब्दावली जैसे शब्द कभी भी पढ़ने को नहीं मिले। अपनी रसना के साथ बोलने पर नांगलू-पांगलू आँखों के समक्ष आ कर खड़े हो जाते हैं।

चले नांगलू पांगलू वेद रोलं।।
गुलेरे चले बांध टोलं।।

श्री गुरु गोबिंद सिंह जी बेमुखों का वर्णन बड़े स्पष्ट शब्दों में करते हैं। उनका इस लोक में व परलोक में कोई भी स्थान नहीं।

जे अपने गुर ते मुख फिरहैं।।
ईहां उहां तिन के ग्रह गिर हैं।।
ईहां उपहास न सिर पुर वासा।।
सब बातन ते रहे निरासा।।

वह प्रभु अपने प्यारे भक्तों के कष्टों को नहीं सहार सकते। वह अपना हाथ देकर उन की रक्षा करते हैं।

संतन कष्ट न देखन पायो।।
आप हाथ दै नाथ बचायो।।

बचित्र नाटक गुरुवाणी की अनेक विद्वानों ने अपनी समझ के अनुसार टिप्पणी करने की चेष्टा की है, परंतु सदगुरु जी की

वाणी को समझना इतना सहज नहीं। मैंने भी सदगुरु जी की प्रदानित बुद्धि के अनुसार बचित्र नाटक को सरल रूप में समझने का उपाय किया है।

लिखते हुए अनेक त्रुटियां रह गई होंगी, सदगुरु जी मुझे उनके लिए क्षमा करें।

डॉ0 जोध सिंह जी साहित्यिक जगत के जाने माने विद्वान हैं। सदगुरु जी की अपार कृपा स्वरूप आपको गुरुवाणी का ज्ञान प्राप्त है एवं श्री दशम ग्रंथ साहिब में संकलित वाणी का अध्य्यन करने में गहन रुचि रखते हैं। आपने श्री दशम ग्रंथ साहिब को हिंदी में प्रकाशित किया एवं इसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में कर एक विशेष उपलब्धि प्राप्त की है। मैं अत्यंत आभारी हूँ डॉ0 जोध सिंह जी की जिन्होंने अपने अति व्यस्ततापूर्ण स्थिति से कुछ पल निकाल कर इस पुस्तक को पढ़ा व् अपने बहुमूल्य विचार प्रक्ट किए।

30-1-2002

प्रि: बेअंत कौर
ऐफ 213, ऐ–1,
मानसरोवर गांडन,
नई दिल्ली–110015

प्रस्तावना

बीसवीं शताब्दी का यह अंतिम वर्ष सिक्ख इतिहास में एक विचित्रतापूर्वक वर्ष होना था, एवं इस में पूरी उम्मीदें थीं कि वर्तमान सिक्ख जगत अपने आप को उत्तम कर्मों वाला मानता हुआ उस दशमेश पिता को धन्यवाद देगा व उनके आदर्शों पर चलने का प्रण कर, उनके संदेश को जीवन में उतारने का प्रयत्न करने के लिए मनुष्य मात्र को सामग्री प्रदान करेगा, उदाहरण प्रस्तुत करेगा एवं सर्वस्व दानी के त्याग एवं पंथ प्रति उत्तरदायित्व की भावना को दृढ़तापूर्वक स्थापित करेगा, परंतु पंथ की स्थापना होते ही पंथ में से एक विचित्र मनोवृति ऐसी जमात उत्पन्न हो गई, जिसको खालसे के 300 वें जन्म दिवस के संदर्भ में अहम व लोभ के कारण चाहे वो राजसी हो या धार्मिक सदैव स्मरण किया जायेगा। यह लोग वो खिलाड़ी हैं जो अन्य राष्ट्रीय व अंतराष्ट्रीय टीमों के साथ मैच खेल कर उनको आगे लगाने की बजाय अपनी ही 'डी' में गोल फेंक रहे हैं। सिक्ख धार्मिक स्थानों का पवित्र-प्राचीन रूप कहीं नहीं रहने दिया गया, लंगर शब्द का यद्यपि 'लंच' व डिनर के लिए प्रयोग कर इसका अर्थ-विस्तार कर दिया गया है, परंतु पंगत में बैठ कर खाने के सिद्धांत को नुकसान पहुंचा है। इसी प्रकार कीर्तन व पाठों का सम्पूर्ण व्यापारीकरण हो चुका है एवं ब्राहमणी रहु-रीतें पूरे जोर-शोर के साथ सिक्ख धार्मिक कार्यों में सबल हो उठी हैं। दूसरी ओर राजनीति का जमा-खर्च हमारे सामने है। इस विचित्र स्थिति को गुरु गोबिंद सिंह जी की रचना 'बचित्र

नाटक' के संदर्भ में समझने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

वैसे गुरु गोबिंद सिंह जी की शेष रचनाओं में अनोखापन है एवं उन सभी में वर्तमान समय व भविष्य के संदर्भ में एक विशेष दृष्टि प्रस्तुत की गई है। जिसको ऊपर की दृष्टि से न पढ़कर, उसके संदेश को खोलने की आवश्यकता है। परंतु बचित्र नाटक तो कुछ मूल मुद्दों पर सीधा प्रहार करता है, इसी लिए यह विचित्र है। भारत के हज़ारों सालों के साहित्यिक-धार्मिक इतिहास में हम देखते हैं कि किसी भी ग्रंथ को प्रारंभ करते समय सरस्वती वंदना व गणेश की पूजा की जाती है। भारतीय इतिहास में सरस्वती विद्या की देवी है एवं गणेश विहन-विनाशक माने गए हैं। गुरु गोबिंद सिंह जी ग्रंथ को प्रारंभ करने के समय सर्वप्रथम खड़ग् की वंदना करते हैं एवं खड़ग् से ग्रंथ पूरा करने के लिए सहायता की प्रार्थना करते हैं।

नमसकार स्री खड़ग को करौं सु हितु चितु लाइ।।
पूरन करो गिरंथ इह तुम मुहि करहु सहाइ।।

इसके साथ ही सवैये में खड़ग् को परमात्मा रूप में प्रतिष्ठित करते हुए इस को संतों को सुख देने, दुरमति का विनाश करने व अनेकों प्रकार के संतापों को नाश करने वाली माना गया है। ग्रंथ के साथ खड़ग् को यथास्थान देखना भारत के लिए पहला व विचित्र प्रयोग था क्योंकि ऐसे खड़ग्धारी व शास्त्रवेता कभी भी एकत्रित नहीं हो सके थे। खड़ग् चलाने वालों की अपनी एक परंपरा व श्रेणी थी एवं इसी प्रकार शास्त्रार्थ करने वालों की अपनी श्रेणी थी। शक्ति को आधार बना कर उस पर भक्ति का महल तैयार करना इस लिए भी आवश्यक था क्योंकि शक्तिशाली का प्रेम, समानता व भाईचारा किसी को आकर्षित नहीं करता एवं न ही वह समाज के लिए बहुत अधिक लाभप्रद हो सकता है। भारत में केवल व्यक्तिगत भक्ति भावना वाले तो लाखों साधू सन्यासी ऋषि मुनी हो चुके हैं परंतु जब भी

आक्रमणकारियों का कोई छोटा सा समूह चाहता वह भारत पर आक्रमण करता एवं यहाँ की धन-संपदा एवं सुंदरता को लूट कर अपने साथ ले जाता। क्षमा भाव वाले साधू-संत या तो आत्मा व बह्म की एकता सिद्ध करने हेतु लीन रहते या शास्त्रार्थ के साथ एक दूसरे को नीचा दिखाने के प्रयत्न में लगे रहते। भारत ने सैंकड़ों वर्षों की गुलामी भोगी परंतु किसी ने परंपरा को तोड़ने का साहस न किया, बचित्र नाटक में प्रथम बार यह ठोस व विचित्र प्रयोग किया गया। जिसकी सफलता ने खालसा सृजना में पूर्ण योगदान प्रदान किया, यद्यपि इस प्रयोग का प्रारंभ गुरु नानक देव जी के समय से ही प्रारंभ हो गया था। इसकी पूर्णता व शिखर गुरु गोबिंद सिंह एवं उनका खालसा था जिसने भारत के धार्मिक इतिहास व युद्ध प्रवीणता को एक नई दिशा प्रदान की।

दूसरी विचित्र बात 'बचित्र नाटक' की यह है कि इसमें देवताओं व राक्षसों के सदैव से बने हुए व्यक्तित्व के बारे में बड़े संशय को उभारा गया है। देवी को सिक्ख फिलासफी में साधारण मनुष्यों के स्तर पर रखा गया है। जिनकी सृजना उस परम अकाल पुरुष ने की है। यह कोई सदैवकालीन हस्तियाँ नहीं हैं, बल्कि गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं –

साध करम जे पुरख कमावै।।
नाम देवता जगत कहावै।।
कुक्रित कर्म जे जग मै करही।
नाम असुर तिन को सब धरही।।

अर्थात जो मनुष्य कर्म करता है उसको देवता कहा जाता है एवं जो कुकर्म करता है उसको असुर या राक्षस कहा जाता है। यहाँ दो बातें नई व स्पष्ट हैं। प्रथम तो यह कि कर्मों के आधार पर देवताओं को वयक्तित्व का मूलांकन किया जाना चाहिए, जन्म के आधार पर नही। द्वितीय, इस सिद्धांतानुसार किसी को भी अच्छे

कर्मों के आधार पर देवता माना जा सकता है एवं कोई भी देवता कुकर्मों के कारण राक्षसी स्तर पर आ जाता है। इस विचित्र सिद्धांत ने समाज की वर्ण व्यवस्था पर भी असर डाला एवं हम देखते हैं कि खालसा सृजना में यह ऊँच-नीच, भेद-भाव समाप्त करने के लिए सिद्धांत बहुत सहाई सिद्ध हुआ है।

कोई बहादुर चाहे दुश्मन भी है तो भी उसकी प्रशंसा होनी चाहिए। बचित्र नाटक का भंगाणी युद्ध का वर्णन गुरु साहिब की अद्वितीय शख्सीयत का पक्ष हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। हंडूर का पहाड़ी राजा हरी चंद, कहिलूर के पहाड़ी राजा भीम चंद की सहायता के लिए श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के साथ सन 1688 में लड़ने के लिए भंगानी के मैदान में आए। यह धनुरधारी बड़ा शूरवीर था। इसने जीतमल को अपने तीर से समाप्त कर दिया था। 'बचित्र नाटक' में गुरु साहिब लिखते हैं कि यह शूरवीर जिसको भी तीर मारता था वह शरीर त्याग जाता था। यह दो-दो तीर एक बार चलाने में सक्षम था।

दुयं बाण खैचे एक बार मारे।।
बली बीर बाजीन ताजी बिदारे।।
जिसै बाण लागै रहै न संभारं।।
तन बेधिकै ताहि पारं सिधारं।।

इसी ने गुरु गोबिंद सिंह जी पर तीन तीर चलाए एवं तीसरा तीर गुरु जी की पेटी को बेधता हुआ पेट तक जा लगा था।

चुभी चिंच चरमं कछु घाए न आयं।।
कलं केवलं जान दासं बचायं।।
जबै बाण लागयो।। तबै रोस जागयो।।
करं लै कमाणं।। हनं बाणं ताणं।।
सभै बीर धाए।। सरोघं चलाए।।
तबै ताकि बाणं।। हनिओ ऐक जुआणं।।
हरी चंद मारे।। सु जोधा लतारे।।

इस प्रकार कलगीधर के वाण के साथ इस शूरवीर का अंत हुआ। परंतु उसकी बहादुरी को गुरु साहिब ने खुले मन से स्वीकार किया।

'बचित्र नाटक' का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष अभी शेष है। सोढी एवं बेदी वंश की उत्पत्ति का इसमें वर्णन आया है जो अत्याधिक क्रमानुसार तो नहीं है परंतु सांकेतिक अवश्य है एवं वर्तमान सिक्ख संकट पर पूर्ण रूप से खरा उतरता है। कहानी साधारणतः आरम्भ होती है श्री रामचंद्र जी के दो पुत्रों लव व कुश के राज-काज के वर्णन के साथ। 'बचित्र नाटक' में बताया गया है कि लव ने लाहौर बसाया एवं कुश ने कसूर नामक नगर बसाया जहाँ यह दोनों राज्य करने लगे। पीढ़ियां बीतती गईं एवं इन दोनों परिवारों में परस्पर वैर-वैमनस्य, ईर्ष्या बढ़ती चली गई। जिसके परिणाम स्वरूप लड़ाई-झगड़े चलते रहे। अंत यह हुआ–**लवी सरब 'जीते कुशी सरब हारे**–एवं हार कर कुश के वंशधर बनारस की ओर चले गए और अनेक वर्षों तक वहीं निवास किया। कई पीढ़ियों के पश्चात लव वंशजों ने पुनः कुश वंशजों ने वेदियों को राजपाट सौंप दिया एवं आप जंगलों में तपस्या करने चल पड़े। परंतु राज्य करने वालों में परस्पर ही लड़ाईयाँ झगड़े प्रारंभ हो गए। एवं धीरे-धीरे संपूर्ण राज-पाट एवं धन-संपदा उनके पास से छिन गई–

– **बहुर बिखाध बीधायं।।**
किनी न ताहि साधियं।।
करंम काल यो भई।।
सु भूम बंस ते गई।।1।।
बीस गाव तिन के रहि गए।।
जिन मो करत क्रिसानी भए।।

–**तिन बेदीयन के कुल बिखे प्रगटे नानक राइ।।**
सभ सिख्खन को सुख दए जहह तहह भए सहाइ।।

इसके पश्चात 'बचित्र नाटक' के पांचवें अध्याय में गुरु नानक से गुरु गोबिंद सिंह जी तक को एक ज्योति रूप में स्वीकार किया गया है एवं–**जोति उहा जुगति साई सहि काइया फेरि पलटीऐ**–के अनुरूप बात की गई है।

अब यहाँ एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न उत्पन्न होता है जिस के लिए कई विद्वान बहुत चिंतित हैं। प्रश्न यह है कि यदि गुरु गोबिंद सिंह, गुरु नानक की बंसावली लव–कुश एवं श्री राम चंद्र जी के साथ जोड़ी जाती है तो सिक्खों का हिंदू धर्म से न्यारापन कैसे बचेगा एवं क्या पंथ खतरे में नहीं पड़ जाएगा। पंथ को तो वास्तव में कोई खतरा नहीं हो सकता क्योंकि 500 वर्षों से राम, रहीम, कृष्ण एवं खुदा का नाम बाणी में आने के कारण एवं दशम ग्रंथ की अन्य रचनाओं में एवं भाई गुरदास की वारों में आने के कारण पंथ के न्यारेपन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा व दिन प्रतिदिन यह अपनी विलक्षण प्रदर्शन इन ग्रंथों के आधार पर ही सिक्ख किए जा रहे हैं। तो अब क्या खतरा हो सकता है जब कि धर्म एक विश्व धर्म के आधार पर अपना नाम दर्ज करा चुका है। हाँ, धर्भ के नाम पर वे अपनी रोजी रोटी चलाने वाले व्यवसायियों के कारोबार पर अवश्य कुछ असर पड़ सकता है।

वास्तव में 'बचित्र नाटक' के इस भाग में गुरु नानक देव जी की या अपनी वंशावली खोजना गुरु गोबिंद सिंह जी का उद्देश्य नहीं है। वैसे भी भारत में जन्मे किसी व्यक्ति की 2–3 हज़ार साल प्राचीन वंशावली की यदि खोज की जा सके तो यह भारत के ही किसी तथाकथित ऋषि मुनि, राजे, राक्षस इत्यादि के साथ ही जुड़ेंगी, मक्का मदीना, इसराईल या अमरीका के व्यक्ति के साथ नहीं। यदि इस प्रकार ही सिक्ख पंथ को खतरा होने लग पड़ा तो फिर आज भी जाटों, खत्रियों की कई गौत्र, मुसलमानो-सिक्खों एवं हिंदू-सिक्खों में सांझी हैं फिर भी

मुसलमान कट्टर मुसलमान हैं एवं सिक्ख निरोल सिक्ख हैं, हिंदू पूर्ण आस्तिक हिंदू। वास्तव में 'बचित्र नाटक' का संदेश कुछ अन्य है, जिससे हम पीछा छुड़ाना चाहते हैं।

संदेश यह है कि इस लंबी वार्ता के द्वारा गुरु साहिब सृजित किए खालसे को चेतावनी देना चाहते हैं कि परस्पर फूट एवं ईर्ष्या के कारण बड़े-बड़े चक्रवर्ती राजाओं के उत्तराधिकारी भी आखिर 20 गावों की मालकी तक पहुँच सकते हैं, इतना ही 'बचित्र नाटक' में परस्पर लड़ाईयों के कारणों की भी खोजबीन की गई है। धन एवं ज़मीन के झगड़ों के पुरातन कारण हैं जिन्होंने सारे संसार को घेरा हुआ है। मोह अहंकार एवं आडंबर के प्रचार और कालरूप क्रोध ने तो सारा जग जीता हुआ है। धन ही अब धनतायोग कहा जाता है क्योंकि सारा संसार इसी का गुलाम है। सभी का ध्यान इसी पर टिका हुआ है एवं सब धनवान को ही सलाम करते हैं। वास्तव में लोभ ही सभी सांसारिक तृष्णाओं की जड़ बन गया है, इसी के अधीन लोग यह चाहते हैं कि शेष सभी नष्ट हो जाएँ ताकि वो उनका सब कुछ हजम कर सकें।

धन अरू भूम पुरातन बैरा।।
जिन का मूआ करति जग घेरा।।
मोह बाद अहंकार पसारा।।
काम क्रोध जीता जग सारा।।

।।दोहरा।।

धंनि धंनि धन को भाखीऐ जा का जगतु गुलामु।।
सब निरखत या को फिरै सब चल करत सलाम।।

लोभ मूल इह जग को हुआ।।
जासो चाहत सभै को मूआ।।

—दशम ग्रंथ पृष्ठ 49

गुरु नानक देव जी से सीधे चल कर यदि हम महाराजा रणजीत सिंह के समय तक जाएँ तो हम एक सरकार खालसा देखते हैं जिसकी सीमाएं पंजाब के धुर दक्षिण से ले कर उत्तर-पश्चिम में काबुल-कंधार तक जाती हैं। परस्पर धोखेबाजी, व्यक्तिगत स्वार्थों ने पंथ व 'सरकार खालसा' को सेंध लगाकर आज सिक्खों को केवल 13 जिलों में सीमित कर दिया है। यदि अभी हमने 'बचित्र नाटक' में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के दिए संदेश व चेतावनी को न समझा तो वह दिन दूर नहीं जब हम पुनः 20 गांव के स्वामी वाली स्थिति तक पहुंच सकते हैं एवं इस संपूर्ण कार्य का ताज किस के सर पर पड़ेगा यह कहने की आवश्यकता नहीं।

'बचित्र नाटक' को अभी कई परिप्रेक्ष्यों में समझने व समझाने की आवश्यकता है एवं इस आवश्यकता को सम्मुख रखते हुए बीबी बेअंत कौर जी ने इस कठिन कार्य को हाथ में लेते हुए 'बचित्र नाटक' के शब्दार्थ व भावार्थ को प्रत्येक अध्याय के प्रारंभ में सरल हिन्दी में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। इसमें कितनी मेहनत लगी होगी, इसको मैं भली भांति समझ सकता हूँ एवं आशा करता हूँ कि सहृदय पाठक इस रचना से पूर्ण लाभ उठा कर गुरु गोबिंद सिंह जी की विचारधारा से पूरा-पूरा लाभ उठाएँगे।

डॉ0 जोध सिंह
प्रोफैसर सिक्ख धर्म अध्ययन एवं
डीन फैकलटी आफ हिऊमैनिटीज
एंड रिलीजिअस स्टडीज
पंजाबी विश्वविद्यालय, पटियाला

१ ओं सतिगुर प्रसादि।।

अथ

अथ–अब, इसके पश्चात।

प्राचीन समय से 'अथ' शब्द का प्रयोग ग्रंथ के प्रारंभ में एक मंगल सूचक के रूप में किया जाता रहा है, इसी परम्परानुसार यहां श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने भी 'अथ' शब्द का प्रयोग किया है।

बचित्र नाटक ग्रंथ लिखयते।।

बचित्र–अदभुत, अनोखा।

नाटक–दृश्य, काव्य।

ग्रंथ–पुस्तक।

तव् प्रसादि।।

तव् प्रसादि–तेरी कृपा।

स्री मुखवाक पातशाही 10 ।।

इस अदभुत रचना का उच्चारण श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अपने पवित्र मुखार बिंद से किया है।

1 काल जी की उसतति

इस अध्याय में गुरु गोबिंद सिंह जी ने सरब काल, महाकाल, सरब लोह, महा लोह आदि शब्दों से उस अकाल पुरुष की महिमा का गुणगान किया है। उस की कृपा के बिना मनुष्य असहाय है, दीन है। उस का स्मरण करके, उस की आराधना के द्वारा ही मनुष्य का जीवन सफल हो सकता है। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी इस रचना में यह दरसाते हैं कि उस प्रभु को पाखण्डों द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता, वह पत्थरों की पूजा करने से भी नहीं मिलता, योगी का भेस धारण करने से भी उसके दर्शन नहीं होते। वह प्रभु तो केवल हृदय में सच्चा प्रेम होने से पाया जा सकता है। वह अनंत है, बेअंत है, उस की महिमा शब्दों के द्वारा नहीं की जा सकती। इस अध्याय में 11 सवैये, 6 तोटक, 1 त्रिभंगी, 1 दोहरा, 12 नराज, 43 भुजंग प्रयात और 27 रसावल छंद हैं। इन सबको मिला कर 107 छंदों का प्रयोग किया गया है।

।।दोहरा।।

नमसकार स्री खड़ग को करौ सु हितु चितु लाइ।।
पूरन करौ गिरंथ इह तुम मुहि करहु सहाइ।।1।।

शब्दार्थ : स्री–शोभायुक्त। खड़ग–संहार करता तलवार। हितु–प्रेम।

भावार्थ : मैं शोभायुक्त काल रूपी तलवार को प्रेम सहित हृदय से नमस्कार करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि यह ग्रंथ संपूर्ण करने में आप मेरी सहायता करें।

।।त्रिभंगी छंद।।
स्त्री काल जी की उसतति।।

शब्दार्थ : स्त्री काल–महा काल जो सारे विशव का संहार करता है। उसतति–महिमा, उपमा।
भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी इस त्रिभंगी छंद में काल की महिमा करते हैं जो कि सब को मारने की शक्ति रखता है।

खग्ग खंड बिहंडं खल दल खंडं अति रण मंडं बरबंडं।।
भुज दंड अखंडं तेज प्रचंडं जोति अमंडं भान प्रभं।।
सुख संता करणं दुरमति दरणं किलबिख हरणं अस सरणं।।
जै जै जग कारण स्रिसट उबारण मम प्रतिपारण जै तेगं।।2।।

शब्दार्थ : खग्ग–तलवार। खंड बिहंडं–पुर्जा-पुर्जा करके मारने वाली। दल–समूह। रण–युद्ध। बरबंडं–अधिक बलशाली। भुज–भुजा, बाहें। अखंडं–ना काटे जाने वाली। तेज प्रचंडं–बहुत तेज प्रताप वाली। जोति अमंडं–सूर्य के समान चमकती तीव्र ज्योति। दरणं–विनाश करने वाली। किलबिख–पाप। अस–तलवार। प्रतिपारण–मेरी पालना करने वाली।
भावार्थ : महाकाल की काल स्वरूप तलवार दुष्टों का पुर्जा-पुर्जा कर देती है और शत्रुओं के समूहों का नाश कर देती है। यह शक्तिशाली होने के कारण युद्ध का मंडन करती है। यह तलवार बलशाली भुजाओं का अखंड तेज है। महाकाल की स्वयं प्रकाशित होने वाली ज्योति प्रचंड है और इसकी प्रभा भानु के समान है। यह संतों को सुख प्रदान करने वाली, मंदबुद्धि का विनाश करने वाली और पापों को नष्ट करने वाली है। मैं

ऐसे गुणों वाले महाकाल की तलवार स्वरूप शक्ति की शरण में हूँ। हे ! विशव की रचनहार शक्ति, हे ! सृष्टि को उबारने वाली और मेरा पालन करने वाली तेरी सर्वदा जय हो !

।।भुजंग प्रयात छंद।।

सदा एक जोतयं अजूनी सरूपं।।
महांदेव देवं महा भूप भूपं।।
निरंकार नितयं निरूपं त्रिबाणं। ।
कलं कारणेयं नमो खड़ग पाणं।।3।।

शब्दार्थ : जोतयं–प्रकाश करने वाला। भूपं–राजाओं का राजा। निरंकार नितयं–सदैव स्थिर रहने वाला निराकार। निरूपं–अरूप। त्रिबाणं–हर तरह की आदत. के बिना। खड़ग पाणं–हाथ में तलवार ग्रहण करने वाला।

भावार्थ : वह प्रभु सदैव स्थिर रहने वाला है और अजन्मा है। वह देवों का भी महादेव है और राजाओं का भी महाराजा है। वह निराकार है और सदा रहने वाला है। उसका कोई रूप नहीं है। उसे किसी प्रकार की कोई आदत नहीं है। उस सर्व शक्तियों के करता और हाथ में तलवार धारण करने वाले प्रभु को मेरी नमस्कार है।

निरंकार त्रिबिकार नितयं निरालं।।
न ब्रिधं बिसेखं न तरुनं न बालं।।
न रंकं न रायं न रूपं न रेखं।।
न रंगं न रागं अपारं अभेखं।।4।।

शब्दार्थ : निरंकार–आकार से रहित। त्रिबिकार–विकारों से रहित। नितयं–सदैव। निरालं–सबसे अलग। ब्रिधं–बहुत बूढ़ा। बिसेखं–विशेष रूप से। तरुनं–युवक। बालं–बालक। रंकं–कंगाल।

भावार्थ : वह प्रभु निराकार है, विकारों से रहित है, सदैव रहने वाला है और सबसे भिन्न है। वह विशेषकर न तो बूढ़ा होता है, न ही युवक और न ही बालक है। वह न तो निर्धन है, न ही राजा, न उसका कोई रूप है और न ही कोई रेखा है। उसका न कोई रंग है, न ही कोई श्रृंगार, ना ही उसका कोई अंत है और वह भेष रहित है।

न रूपं न रेखं न रंगं न रागं।।
न नामं न ठामं महा जोति जागं।।
न द्वैखं न भेखं निरंकार नितयं।।
महां जोग जोगं सु परमं पवितयं।।5।।

शब्दार्थ : ठामं–स्थान। द्वैखं–द्वैष। परमं–बहुत अधिक।

भावार्थ : वह प्रभु रूप रहित है, ना उसकी कोई रेखा है, ना उसका कोई रंग है और ना ही श्रृंगार है। वह नाम और स्थान से विहीन महाज्योति स्वरूप होकर प्रकाशित है। उसमें कोई द्वैष भाव नहीं है। न ही उसका कोई भेष है। वह निराकार है और सदैव काल सजीव है। वह महायोगियों का भी योगी और पवित्र काल है।

अजेयं अभेयं अनामं अठामं।।
महा जोग जोगं महा काम कामं।।
अलेखं अभेखं अनीलं अनादं।।
परेयं पवित्रं सदा त्रिबिखादं।।6।।

शब्दार्थ : अजेयं–जो जीता ना जा सके। अभेयं–भेद रहित। अनीलं–जो गणना में ना आये। अनादं–जिसका कोई आदि नहीं। परेयं–सब से परे। त्रिबिखादं–विषाद से रहित।

भावार्थ : वह जीता नहीं जा सकता, उसका कोई भेद नहीं पा सकता, उसका कोई नाम और स्थान नहीं। वह योगियों में

महायोगी है भोगियों में भी महाभोगी है। वह किसी लेखन में नहीं आता, उसका कोई भेष नहीं है। वह किसी गणना में नहीं आता और उसका कोई आदि नहीं। वह सबसे परे है, पवित्र है और विषादों से रहित है।

सु आदं अनादं अनीलं अनंतं।।
अद्वैखं अभेखं महेसं महंतं।।
न रोखं न सोखं न द्रोहं न मोहं।।
न कामं न क्रोधं अजोनी अजोहं।।7।।

शब्दार्थ : सु आदं–सबका आदि। अनादं–जिसका कोई आदि नहीं। महेसं–महान हस्ती। महंतं–उत्तम। न रोखं–रोष रहित। न द्रोहं–धोखे से रहित। अजोहं–अदृश्य।

भावार्थ : वह प्रभु सबका आदि है परंतु उसका कोई आदि नहीं। वह किसी गणना में नहीं आता और वह बेअंत है। वह किसी से द्वैष नहीं करता और भेष रहित है। वह महा ईश और अति उत्तम है। उसका किसी से रोष नहीं और वह शोक रहित है। वह किसी से धोखा नहीं करता और मोह से मुक्त है। वह काम-क्रोध से मुक्त है, जन्म-मरण में नहीं आता और अदृश्य है।

परेयं पवित्रं पुनीतं पुराणं।।
अजेयं अभेयं भविखयं भवाणं।।
न रोगं न सोगं सु नितयं नवीनं।।
अजायं सहायं परमं प्रबीनं।।8।।

शब्दार्थ : परेयं–मन बाणी से परे। पुराणं–पुरातन। भवाणं–वर्तमान में भी है। नवीनं–सदैव नया। अजायं–अजन्मा। सहायं–सहायक। प्रबीनं–माहिर।

भावार्थ : वह महाकाल प्रभु मन वाणी से परे है, पवित्र भी है, शुद्ध भी और पुरातन भी। उसे कोई जीत नहीं सकता और न

ही उसका कोई भेद जान सकता है। वह आने वाले समय में भी होगा और वर्तमान में भी है। वह रोग और शोक से मुक्त है और सदैव नया है। वह प्रभु अजन्मा सरब सहायक और प्रवीण है।

सु भूतं भविखं भवानं भवेयं।।
नमो त्रिबिकारं नमो त्रिजुरेयं।।
नमो देव देवं नमो राज राजं।।
निरालंब नितयं सु राजाधिराजं।।9।।

शब्दार्थ : भवानं–अभी भी है। भवेयं–तीनों कालों में विचरने वाला। त्रिजुरेयं–निरोग। निरालंब–निर आश्रित। राजाधिराजं–राजाओं का राजा।

भावार्थ : वह ईश्वर भूतकाल में भी था, वर्तमान में भी है और भविष्य में भी होगा। वह प्रभु तीनों कालों में विचरने वाला है। उस त्रिविकार प्रभु को मेरी नमस्कार है, और नमस्कार है उस रोगों से रहित परमात्मा को। उस देवों के देव को, उस राजाओं के राजा को मेरी नमस्कार है। वह निर आश्रित है, सदीव है और राजाओं का भी महाराजा है।

अलेखं अभेखं अभूतं अद्वैखं।।
न रागं न रंगं न रूपं न रेखं।।
महां देव देवं महां जोग जोगं।।
महां काम कामं महां भोग भोगं।।10।।

शब्दार्थ : अभूतं–बिना तत्वों के। न रागं–मोह रहित। रेखं–मर्यादा।

भावार्थ : वह प्रभु किसी लेखन में नहीं आता, वह भेष रहित है, वह तत्व रहित है और द्वेषों से परे है। उसको किसी प्रकार का मोह नहीं, उसका कोई रंग-रूप नहीं है और ना ही उसकी कोई सीमा है। वह प्रभु देवों का भी देव है और योगियों का भी महा योगी है। वह कामियों में महाकामी और भोगियों में महाभोगी है।

कहूं राजसं तामसं सातकेयं।।
कहूं नार को रूप धारे नरेयं।।
कहूं देवीयं दईत रूपं।।
कहूं रूप अनेक धारे अनूपं।।11।।

शब्दार्थ : राजसं–रजोगुण। तामसं–तमोगुण। सातकेयं–सतोगुण। नार–स्त्री। नरेयं–पुरूष। देवीयं–देवी। अनूपं–सुंदर।

भावार्थ : वह ईश्वर कहीं तो रजोगुणी है, कहीं तमोगुणी और कहीं सतोगुण को धारण किये हुये हैं। कहीं तो उसने स्त्री का रूप धारण किया हुआ है और कहीं पुरुष का। कहीं देवी-देवताओं के रूप में विचर रहा है और कहीं दैंत के रूप में। कहीं अनेकों रूप धारण करके अत्यन्त सुंदर लग रहा है।

कहूं फूल ह्वैकै भले राज फूले।।
कहूं भवर ह्वैकै भली भांति भूले।।
कहूं पवन ह्वैकै बहे बेगि ऐसे।।
कहे मो न आवै कथौ ताहि कैसे।।12।।

शब्दार्थ : कहूं–कहीं। फूल–विराज रहे हो। भवर–भ्रमर। भूले–मस्त। बेगि–तीव्र गति।

भावार्थ : कहीं वह पुष्पों की भांति विराज रहा है। कहीं भंवरा बन कर मस्त होकर फूलों पर मंडरा रहा है। कहीं पवन होकर तीव्र गति से बह रहा है। मुझे कहना ही नहीं आता, फिर मैं उसका वर्णन कैसे करूँ।

कहूं नाद ह्वैकै भली भांति बाजे।
कहूं पारधी ह्वै धरे बान राजे।।
कहूं म्रिग ह्वैकै भली भांति मोहै।।
कहूं काम की जिउ धरे रूप सोहै।।13।।

शब्दार्थ : नाद–आवाज़। पारधी–शिकारी। राजे–सुशोभित।

म्रिग–हिरन।

भावार्थ : वह ईश्वर कहीं तो नाद रूप होकर बज रहा है, कहीं शिकारी बन कर वाणों से सुशोभित है और कहीं मृग बन कर उसी आवाज़ पर मोहित है। कहीं काम रूप धारण करके बहुत ही अनूप लग रहा है।

नही जानि जाई कछू रूप रेखं।।
कहा बास ताको फिरै कउन भेखं।।
कहा नाम ताको कहा कै कहावै।।
कहा मै बखानो कहे मो न आवै।।14।।

शब्दार्थ : नही जानि जाई–जाना नहीं जा सकता। बास–रहने का स्थान।

भावार्थ : हे प्रभु ! तुम्हारे रूप आकार को जाना नहीं जा सकता। तुम्हारा आवास कहाँ है, तुम किस वेष में घूमते हो, तुम्हारा नाम क्या है, तुम कहाँ के हो, इसका मैं क्या वर्णन करूँ, मुझसे कहा नहीं जाता।

न ताको कोई तात मातं न भायं।।
न पुत्रं न पौत्रं न दाया न दायं।।
न नेहं न गेहं न सैनं न साथं।।
महाराज राजं महा नाथ नाथं।।15।।

शब्दार्थ : तात–पिता। भायं–भाई। दाया–बालक को पालने वाला। नेहं–मोह। गेहं–घर। सैनं–सेना।

भावार्थ : उस प्रभु का ना तो कोई पिता है, ना कोई माता है, ना कोई भाई है, ना कोई पुत्र है, ना कोई पौत्र है। ना उसे पालने वाला कोई धाय है और ना कोई खिलाने वाला। उसे ना तो किसी से कोई मोह है और ना ही उसका कोई घर है। ना ही उसकी कोई सेना है, ना ही उसका कोई साथी है। वह

महाराजाओं का भी महाराजा है और नाथों का भी नाथ है।

परमं पुरानं पवित्रं परेयं।।
अनादं अनीलं असंभं अजेयं।।
अभेदं अछेदं पवित्रं प्रमाथं।।
महा दीन दीनं महा नाथ नाथं।।16।।

शब्दार्थ : पुरानं–पुरातन। असंभं–अजन्मा। अजेयं–जो जीता न जा सके। अछेदं–जो काटा न जा सके। प्रमाथं–शिरोमणि। दीन–गरीब।

भावार्थ : वह प्रभु सर्वश्रेष्ठ है, पवित्र है और परे से भी परे है । उसका कोई आदि नहीं, उसकी कोई गणना नही की जा सकती, वह अजन्मा है और उसे कोई जीत नहीं सकता। उसका भेद नहीं पाया जा सकता, वह पवित्र और अति शिरोमणि है। वह निर्धनों में महा निर्धन है और धनवानों में सबसे अधिक धनवान है।

अदागं अदग्गं अलेखं अभेखं।।
अनंतं अनीलं अरूपं अद्वैखं।।
महा तेज तेजं महा जव्‌ाल जव्‌ालं।।
महां मंत्र मंत्रं महा काल कालं।।17।।

शब्दार्थ : अदागं–बेदाग। अदग्गं–निर्मल, उज्जवल।

भावार्थ : वह परमात्मा दाग रहित, निर्मल और उज्जवल है। वह किसी लेख में नहीं आता और भेष रहित है। वह बेअंत और कलुष रहित है, उसका न कोई रूप है और न ही किसी से कोई बैर है। महातेज में भी उसका बड़ा तेज है और वह महा अग्नियों की भी अग्नि है। वह महांमंत्रों का भी मंत्र और महाकालों का भी काल है।

करं बाम चापयं क्रिपाणं करालं।।
महा तेज तेजं बिराजै बिसालं।।
महां दाड़ दाड़ं सु सोहं अपारं।।
जिनै चरबीयं जीव जग्गयं हजारं।।18।।

शब्दार्थ : करं बाम–बायां हाथ। चापयं–धनुष। करालं–भयानक। चरबीयं–चबाय है। जीव जग्गयं–सांसारिक प्राणी।

भावार्थ : उस महाकाल के बायें हाथ में धनुष है और भयानक कृपाण है। वह महातेजस्वी तेजवान होकर विराज रहा है। जितने भी बड़े दातों वाले हैं उन सब में उसका बड़े दातों वाला अपार स्वरूप है, जिसने इस संसार के हज़ारों प्राणियों को चबा लिया है।

डमा डंम डउरू सिता सेत छत्त्रं।।
हाहा हूह हासं झम्मा झम्म अत्त्रं।।
महा घोर सबदं बजे संख ऐसं।।
प्रलैकाल के काल की ज्वाल जैसं।।19।।

शब्दार्थ : सिता सेत–सफेद और रंग बिरंगे भांति-भांति के छत्र। झम्मा झम्म–चमकते हुये। अत्त्रं–अस्त्रों की। प्रलैकाल–विनाशकारी काल की। ज्वाल–काल की अग्नि।

भावार्थ : उस महाकाल के डमरू से डम-डम शब्द हो रहा है, उसका काला और सफेद सतो तमो गुणमय छत्र है। वह हा हा, हू हू करके हंस रहा है और उसके अस्त्र चमक रहे हैं। शंखों का भयानक शब्द ऐसे हो रहा है जैसे प्रलयकाल के समय अग्नि की लपटें।

।।रसावल छंद।।

घणं घट बाजं।। धुणं मेघ लाजं।।
भयो सद्द एवं।। हड़यो नीरधेवं।।20।।

शब्दार्थ : घणं–घणघोर। धुणं–ध्वनि। सद्द–आवाज़। एवं–इस तरह। नीरधेवं–जैसे समुद्र में बाढ़ आ रही है।
भावार्थ : उस प्रभु के बोल इस तरह प्रतीत हो रहे हैं, जैसे अनेकों घन्टों की ध्वनि हो जिसे सुनकर बादलों की गर्जना भी शर्मसार हो रही है। काल की आवाज़ इस तरह सुनाई दे रही है जैसे समुद्र में बाढ़ आने की आवाज़ हो, मानों समुद्र उछल रहा है।

घुरं घुंघरेयं।। धुणं नेवरेयं।।
महां नाद नादं।। सुरं निरबिखादं।।21।।

शब्दार्थ : घुरं घुंघरेयं–घुंघरूओं की झनकार। नेवरेयं–पायलों की। महां नाद–समुद्र। निरबिखादं–एक रस।
भावार्थ : घुंघरू इस तरह बज रहे हैं जैसे पायलों की ध्वनि हो। वह ध्वनि समुद्र के नाद की भांति एक रस हो कर सुनाई दे रही है।

सिरं माल राजं।। लखे रुद्र लाजं।।
सुभे चार चित्रं।। परमं पवित्रं।।22।।

शब्दार्थ : सिरं माल–रूंड माला। राजं–सज रही हैं। सुभे–सुशोभित हो रही है। चार–सुंदर।
भावार्थ : उस महाकाल के गले में रुंड माला सुशोभित हो रही है जिसको देख कर शिवजी भी लज्जित हो रहे हैं। उसकी सुंदर मूरत बहुत ही पवित्र है।

महा गरज गरजं।। सुणे दूत लरजं।।
स्रवं स्रोण सोहं।। महा मान मोहं।।23।।

शब्दार्थ : लरजं–कांप रहे हैं। स्रवं–शवों में से बहता हुआ रक्त। महा–बहुत बड़ा।

भावार्थ.: महाकाल की गरजना सुनकर यमदूत भी कांप रहे हैं, उसके गले में पहनी रुंड माला में से बहता हुआ रक्त सुशोभित हो रहा है, जो महा अभिमानियों को भी मोह रहा है।

।।भुजंग प्रयात छंद।।
स्रिजे सेतजं जेरजं उतभुजेवं।।
रचे अंडजं खंड ब्रहमंड एवं।।
दिसा बिदिसायं जिमी आसमाणं।।
चतुर बेद कथयं कुराणं पुराणं।।24।।

शब्दार्थ : स्रिजे–उत्पन्न किये। सेतजं–पसीने से पैदा होने वाले जीव। जेरजं–जेर से उत्पन्न होने वाले जीव। उतभुजेवं–वनस्पति। अंडजं–अण्डे से पैदा होने वाले जीव। एवं–इस तरह।
भावार्थ : उस प्रभु ने पसीनें से पैदा होने वाले जीव और ज़मीन से पैदा होने वाली वनस्पति उत्पन्न की। इसी तरह अण्डे से पैदा होने वाले जीव और खण्ड ब्रहमांडों की भी रचना की है। दिशा, उपदिशा धरती और आकाश की रचना की है। उसी ने चारों वेदों, पुराणों एवम् कुराण का भी कथन किया है।

रचे रैण दिवसं थपे सूर चंद्रं।।
ठटे दईव दानो रचे बीर बिंद्रं।।
करी लोह कलमं लिखयो लेख माथं।।
सभै जेर कीने बली काल हाथं।।25।।

शब्दार्थ : बीर बिंद्रं–बहुत वीर। जेर–अधीन।
भावार्थ : उस काल ने रात और दिन की सृजना की है। सूर्य और चांद की भी स्थापना की है, देवता और दैत्य भी पैदा किये हैं, वीर और महापंडित भी पैदा किये हैं। उसने भाग्य लिखने वाली लोह कलम से सब के मस्तष्किों पर लेख भी लिखे हैं। उस बलवान काल ने उन सब को अपने हाथों के अधीन किया

हुआ है।

कई मेट डारे उसारे बनाए।।
उपारे गड़े फेरि मेटे उपाए।।
क्रिआ काल जू की किनू न पछानी।।
घनयो पै बिहै है घनयो पै बिहानी।।26।।

शब्दार्थ : उपारे–उखाड़ दिये। गड़े–बनाये। बिहै है–प्रभावित होंगे।

भावार्थ : काल ने बहुतों का विनाश कर दिया और बहुतों को धराशायी करके फिर बना दिया। फिर उनका उच्छेदन किया, फिर गढ़न किया, मिटाया एवं पैदा किया। उस काल की क्रियाओं को कोई भी पहचान नहीं सका। अनेकों पर इसकी माया प्रभाव डालेगी और अनेकों पर अपना प्रभाव डाल चुकी है।

किते क्रिसन से कीट कोटै बनाए।।
किते राम से मेटि डारे उपाए।।
महांदीन केते प्रिथी मांझ हूए।।
समै आपनी आपनी अंति मूए।।27।।

शब्दार्थ : किते–कहीं। कीट–कीड़े, छोटा। महांदीन–मुहम्मद साहब।

भावार्थ : काल ने कहीं तो कृष्ण जैसे करोड़ों ही तुच्छ जीव पैदा किये हैं, कहीं श्री राम जी के समान उत्पन्न करके मिटा दिये हैं। इस धरती पर कितने ही मुहम्मद पैदा हुए परंतु अंत में सभी कालवश होकर मृत्यु को प्राप्त हुये।

जिते अउलीआ अंबीआ होइ बीते।।
तितयो काल जीता न ते काल जीते।।
जिते राम से क्रिसन हुइ बिसन आए।।

तितयो काल खापिओ न ते काल घाए।।28।।

शब्दार्थ : अउलीआ–धार्मिक आगू, साधू, सहायक, मित्र जिस पर प्रभु की कृपा हो। अंबीआ–पैगंबर। तितयो–उन सब को। खापिओ–मार दिया।

भावार्थ : संसार में जितने भी पीर पैगंबर हुये हैं उन सब पर काल ने विजय प्राप्त की है परंतु वे काल पर विजय न पा सके। जितने भी श्री राम जी, श्री कृष्ण जी और श्री विष्णू जी के अवतार हुये हैं, उन सबको काल ने मिटा दिया है परंतु वे काल का कुछ भी न बिगाड़ सके।

जिते इंद्र से चंद्र से होत आए।।
तितयो काल खापा न ते काल घाए।।
जिते अउलीआ अंबीआ गउस है हैं।।
सभै काल के अंत दाड़ा तलै हैं।।29।।

शब्दार्थ : गउस–संत, वीर, फरियाद सुनने वाले। दाड़ा तलै–चबाये जाने वाले।

भावार्थ : जितने भी इंद्र जैसे राजा, चंद्र जैसे सुंदर हुये हैं, उन सबका काल ने विनाश कर दिया है, परंतु वे काल को नहीं मार सके। और जितने भी वली, नबी और गउस पैदा होंगे, वे सारे अन्त में काल के दांतों तले चबाये जायेंगे।

जिते मानधातादि राजा सुहाए।।
सभै बांधिकै काल जेलै चलाए।।
जिनै नाम ताको उचारो उबारो।।
बिना साम ताकी लखे कोट मारे।।30।।

शब्दार्थ : मानधातादि–जितने मानधाता जैसे राजा सुशोभित हुए हैं। जेलै–जेल में। साम–शरण।

भावार्थ : जितने मानधाता जैसे शोभा वाले राजा हुए उन सब

को काल यमराज ने बांध कर काल कोठरी में डाल दिया। जिन्होंने प्रभु का स्मरण किया, प्रभु की शरण में गए वे सब जन्म मरण के जाल से बचे अर्थात जो भक्ति से विमुख रहे उनको मिटते हुए देखा।

।।रसावल छंद।।तु प्रसादि।।
चम्मकहि क्रिपाणं। अभूतं भयाणं।।
धुणं नेवराणं।। घुरं घुंध्रयाणं।।31।।

शब्दार्थ : चम्मकहि–चमचमाती हुई। अभूतं–अनोखा, भयानक। नेवराणं–नुपुर की ध्वनि। घुरं–घुंघरू।

भावार्थ : महाकाल (प्रभु) के हाथ में चमकती हुई तलवार है जो बहुत ही भयानक है। जब वे चलते हैं तो नुपुर (पायल) और घुंघरुओं की आवाज़ आती है।

चतुर बांह चारं।। निजूटं सुधारं।।
गदा पास सोहं।। जमं मान मोहं।।32।।

शब्दार्थ : चतुर–चार। चारं–सुंदर। निजूटं–बालों का जूड़ा। सुधारं–अच्छी तरह से। पास–फांसी। जमं–यमराज। मोहं–नाश करना।

भावार्थ : प्रभु की चार भुजाएं अति सुंदर हैं, सिर पर बालों का जूड़ा अति सुशोभित है। उनके पास गदा और फांसी है जिससे यमराज के अभिमान का नाश हो रहा है।

सुभं जीव जुआलं।। सु दाड़ा करालं।।
बजी बंब संखं।। उठे नाद बंखं।।33।।

शब्दार्थ : जीव जुआलं–अग्नि के समान जीभ। करालं–भयानक दांत, दाढ़ें। बजी बंब–गर्जना। बंखं–समुद्र।

भावार्थ : उस काल की जिह्वा अग्नि के समान लाल है। उनकी

दाढ़ें बहुत भयानक हैं। युद्ध भूमि में जाते समय ऐसे प्रतीत होती हैं जैसे समुद्र घोर गर्जन कर रहा हो।

सुभं रूप सिआमं।। महा सोभ धामं।।
छबे चारु चित्रं।। परेअं पवित्रं।।34।।

शब्दार्थ : सिआमं–सांवला। छबे–छवि। चारु–सुंदर। परेअं–पवित्र।
भावार्थ : भगवन् का श्याम रंग सुशोभित हो रहा है जो शोभा का धाम है। उन की सुंदर मूर्ति मनमोहक है जो बहुत सुंदर और पवित्र है।

।।भुजंग प्रयात छंद।।
सिरं सेत छत्रं सु सुभ्रं बिराजं।।
लखे छैल छाइआ करे तेज लाजं।।
बिसालाल नैनं महाराज सोहं।।
ढिगं अंसुमालं हसं कोट क्रोहं।।35।।

शब्दार्थ : सेत छत्र–सफेद रंग का छत्र। सुभ्रं–चमकदार। छैल–खूबसूरत। छाइआ–परछाई। बिसालाल नैनं–बड़ी बड़ी लाल आंखें। अंसुमालं–सूर्य।
भावार्थ : प्रभु के सिर पर सफेद छत्र शोभायमान है। उनकी सुंदर छवि को देखकर प्रकाश भी लज्जित हो रहा है। प्रभु जी के सुंदर और विशाल नेत्र मन को मोह रहे हैं अर्थात् बहुत सुंदर लग रहे हैं। उनके प्रकाश को देखकर करोड़ों सूर्य उसके समीप आकर क्रोधित हो हंस रहे हैं।

कहूं रूप धारे महाराज सोहं।।
कहूं देव कंनिआन के मान मोहं।।
कहूं बीर हैकै धरे बान पानं।।
कहूं भूप हैकै बजाए निसानं।।36।।

शब्दार्थ : कंनिआन–कन्या। बीर–योद्धा। पानं–हाथों में। भूप–राजा। निसानं–नगाड़े।
भावार्थ : प्रभु कहीं पर राजा महाराजाओं का रूप धारण कर सुशोभित हो रहे हैं तो कहीं देवताओं की कन्याओं के अभिमान को भंग कर रहे हैं। कहीं वीर योद्धा का रूप धारण कर हाथ मे तीर कमान पकड़ा हुआ है। कहीं राजाओं के वेश में नगाड़े बजवा रहे हैं।

।।रसावल छंद।।

धनुर बान धारे।। छके छैल भारे।।
लए खग्ग अैसे।। महांबीर जैसे।।37।।

शब्दार्थ : धनुर–धनुष। छके–फूले हुए। खग्ग–तलवार।
भावार्थ : कहीं कलि काल ने धनुष बाण धारण किया हुआ है। उन्होंने अपने हाथ में ऐसे तलवार पकड़ी हुई है जैसे बहुत बड़े शूरवीर हों।

जुरे जंग जोरं।। करे जुद्ध घोरं।।
क्रिपा निधि दिआलं।। सदायं क्रिपालं।।38।।

शब्दार्थ : जुरे–जुटे हुए। सदायं–हमेशा।
भावार्थ : प्रभु जी युद्ध क्षेत्र में बड़े ज़ोर शोर से जुटे हुए हैं। वे भयानक युद्ध कर रहे हैं। वे परम दयालु हैं, दीन बंधू हैं, सदैव ही कृपालु है।

सदा एक रूपं।। सभै लोक भूपं।।
अजेअं अजायं।। सरनियं सहायं।।39।।

शब्दार्थ : अजेअं–विजयी। अजायं–अजन्मा। सरनियं सहायं–सदा सहायता करने वाला।
भावार्थ : परमात्मा सब लोकों में एक रूप होकर विचर रहे हैं।

वह अजय हैं। जन्म मरण से रहित हैं तथा शरणागत की रक्षा करने वाले हैं।

तपै खग्ग पानं।। महां लोक दानं।।
भविखिअं भवेअं।। नमो निरजुरेअं।।40।।

शब्दार्थ : तपै–चमकना। खग्ग–तलवार। महां–बहुत बड़ा। भविखिअं–भविष्य में। भवेअं–वर्तमान समय। निरजुरेअं–ताप रहित।

भावार्थ : प्रभु जी के हाथ में चमकती हुई तलवार है। वह सब लोगों के लिये दयावान हैं। वह भविष्य और वर्तमान समय में कायम हैं। ऐसे तापरहित पारब्रह्म परमात्मा को मेरा नमस्कार है।

मधो मान मुंडं।। सुभं रुंड झुंडं।।
सिरं सेत छत्रं।। लसं हाथ अत्रं।।41।।

शब्दार्थ : मधो–दैत। रुंड–सिर से धड़ अलग होना। लसं–चमकना।

भावार्थ : मधु दानव और मुंड दैत्यों की, जो मानधारी थे उन राक्षसों के सिर धड़ से अलग हैं और उनके सिरों की माला जिनके (महाकाल) गले में शोभायमान है। उनके (महाकाल) सिर पर सफेद छत्र शोभित है और हाथ में शस्त्र चमक रहे हैं।

सुणे नाद भारी।। त्रसे छत्रधारी।।
दिसा बसत्र राजं।। सुणे दोख भाजं।।42।।

शब्दार्थ : नाद–आवाज़। त्रसे–डरे हुए। दिसा–दिशा।

भावार्थ : उस महाकाल का भयानक स्वर सुनाई दे रहा है जिसका स्वर सुनकर बड़े-बड़े छत्रधारी भी भय से कांप उठते हैं। उस महाकाल के शरीर पर दिशाओं के वस्त्र सुंदर लग रहे हैं और उसके नाम स्मरण मात्र से समस्त पाप, दुख नष्ट हो जाते हैं।

सुणे गद्द सद्दं।। अनंतं बिहद्दं।।
घटा जाणु सिआमं।। दुतं अभिरामं।।43।।

शब्दार्थ : सद्दं–आवाज़। दुतं–चेहरे की शोभा। अभिरामं–मनोहर शेभा।

भावार्थ : काल प्रभु की गदा की आवाज़ सुनाई दे रही है जो बेअंत तथा असीमित है। काली घटाओं में मुख-मण्डल पर प्रकाश बड़ा सुन्दर प्रतीत हो रहा है।

चतुर बाह चारं।। करीटं सुधारं।।
गदा संख चक्रं।। दिपै क्रूर बक्रं।।44।।

शब्दार्थ : करीटं–मुकुट। बक्रं–टेढ़ा।

भावार्थ : प्रभु की चार भुजाएं अति शोभित हैं। सिर पर मुकुट शोभायमान है। हाथ में गदा, चक्र, शंख चमक रहे हैं। जो बहुत भयानक लगते हैं और टेढ़े होने पर चमकते हैं।

।।नराज छंद।।

अनूप रूप राजिअं।। निहार काम लाजियं।।
अलोक लोक सोभिअं।। बिलोक लोक लोभिअं।।45।।

शब्दार्थ : अनूप–सुंदर। निहार–देखना। लोभियं–मोहित होना।

भावार्थ : महाकाल का बहुत सुंदर रूप सुशोभित हो रहा है। प्रभु के सुंदर रूप को देख कर कामदेव भी लज्जित हो रहे हैं। उनकी शोभा तीनों लोकों में अलौकिक है। उस अनुपम शोभा को देखकर लोग मोहित हो रहे हैं।

चमक्कि चंद्र सीसियं।। रहियो लजाइ ईसयं।।
सु सोभ नाग भूखणं।। अनेक दुसट दूखणं।।46।।

शब्दार्थ : चमक्कि–चमक। ईसयं–शिव। दुसट–पापी।

भावार्थ : प्रभु जी के शीश पर चंद्रमा प्रकाश कर रहा है जिसको

देखकर शिवजी भी लज्जित हो रहे हैं। उनके गले में सर्प रूपी गहने सुशोभित हैं। वे अनेक पापिओं का संहार करने वाले हैं।

क्रिपाण पाण धारियं।। करोर पाप टारियं।।
गदा ग्रिसट पाणियं।। कमाण बाण ताणियं।।47।।

शब्दार्थ : पाण–हाथ में। ग्रिसट–बहुत भारी।

भावार्थ : महाकाल ने हाथ में तलवार पकड़ी हुई है जो करोड़ों पापों का नाश करने वाली है। उनके हाथ में बहुत बड़ी गदा है और धनुष पर बाण चढ़ाकर तैयार खड़े हैं।

सबद संख बज्जियं।। घणंकि घुंमर गज्जियं।।
सरनि नाथ तोरीयं।। उबार लाज मोरीयं।।48।।

शब्दार्थ : घणंकि–बादलो की गर्जना।

भावार्थ : प्रभु के शंख से शब्द उभर रहा है। उनके घुंघरुओं की आवाज़ ऐसे आ रही है जैसे बादलों की घोर गर्जन हो। हे नाथ ! मैं तुम्हारी शरण में आया हूँ। मेरी लाज रखो।

अनेक रूप सोहीयं।। बिसेख देव मोहीयं।।
अदेव देव देवलं।। क्रिपा निधान केवलं।।49।।

शब्दार्थ : सोहीयं–शोभते हैं। देवलं–मन्दिर।

भावार्थ : प्रभु जी अनेक रूपों में शोभित हो रहे हैं। उनके सुंदर रूप को देखकर देवता भी मुग्ध हो जाते हैं। हे नाथ ! आप दैत्यों और देवताओं का मन्दिर हो। आप कृपा सागर हो। सब पर कृपा करने वाले हो।

सु आदि अंति एकयं।। धरे सरूप अनेकियं।।
क्रिपाण पाण राजई।। बिलोक पाप भाजई।।50।।

शब्दार्थ : पाण–हाथ में। बिलोक–देखकर। भाजई–भाग जाते हैं।

भावार्थ : महाकाल प्रभु आदि से लेकर अंत तक एक रूप वाले हैं। फिर उन्होंने अपनी शक्ति से अनेक रूप धारण किये हुए हैं। उनके हाथ में तलवार शोभायमान है जिसको देखकर अनेक पाप नष्ट हो जाते हैं।

अलंक्रितं सु देहयं।। तनो मनो कि मोहियं।।
कमाण बाण धारही।। अनेक सत्त्र टारही।।51।।

शब्दार्थ : अलंक्रितं–सजा हुआ।
भावार्थ : प्रभु जी का शरीर अनेक आभूषणों से सजा हुआ है। इनकी सुंदरता सब के तन मन को मोह लेती है। आपके हाथ में धनुष वाण है जो अनेक शत्रुओं का नाश करता है।

घमकि घुंघरं सुरं।। नवंन नाद नूपरं।।
प्रजुआल बिज्जुलं जुलं।। पवित्र परम निरमलं।।52।।

शब्दार्थ : घमकि–गुंजार। नाद–आवाज़। नूपरं–पायल। प्रजुआल–चमकना। जुलं–ज्वाला।
भावार्थ : प्रभु जी के पायल के बजने का स्वर सुनाई दे रहा है। उनके घुंघरुओं से निकली हुई ध्वनि नई तरह की है। उनमें बिजली और अग्नि जैसा प्रकाश प्रजवलित हो रहा है जो बहुत पवित्र तथा निर्मल है।

।।तोटक छंद।।तव् प्रसादि।।
नव नेवर नाद सुरं त्रिमलं।।
मुख बिज्जुल जुआल घणं प्रजलं।।
मदरा कर मत्त महा भभकं।।
बन मै मनो बाघ बचा बबकं।।53।।

शब्दार्थ : नव नेवर–नयी नवीन। घणं–बादल। प्रजलं–प्रजवलित। मदरा–शराब। बाघ बचा–शेर का बच्चा।

भावार्थ : उस महाकाल की पायल की झनकार से नये-नये स्वर निकल रहे हैं। उनका मुख ऐसे चमकता है जैसे बादलों में बिजली। उनकी चाल मदिरा में मस्त हुए हाथी के समान है। उनके स्वर में ऐसी गर्जना है जैसे जंगल में शेर का बच्चा गरज रहा हो।

भव भूत भविक्ख भवान भवं।।
कल कारण उबारण एक तुवं।।
सभ ठौड़ निरंतर नित्त नयं।।
म्रिद मंगल रूप तुयं सु भयं।।54।।

शब्दार्थ : भव–संसार। भवं–मौजूद है। उबारण–रक्षक। ठौड़–स्थान। म्रिद–कोमल। तुयं–तू ही।

भावार्थ : प्रभु तीनों कालों में विद्यमान है अर्थात भूतकाल में सृष्टि के रचयिता थे। वर्तमान में भी हैं और भविष्य में होंगे। सृष्टि का रचयिता और रक्षक एक अकाल पुरुष प्रभु ही है। वह सब स्थानों में एक रस है, नया नवीन है। वह मंगलकारी और कल्याणकारी है।

दिड़दाड़ कराल द्वै सेत उधं।।
जिह भाजत दुसट बिलोक जुधं।
मद मत्त क्रिपाण कराल धरं।।
जय सद्द सुरा सुरयं उचरं।।55।।

शब्दार्थ : दिड़दाड़–पका हुआ। सेत–सफेद। उधं–ऊँचा। मद –शराब। मत्त–मस्त। सुरा–देवता। सुरयं–दैत्य।

भावार्थ : उस महाकाल की सफेद और ऊँची दाड़ें हैं जिन्हें देखकर शत्रु युद्ध के मैदान से भाग जाते हैं। वे मदिरा में मस्त हैं, उन्होंने भयानक तलवार पकड़ी हुई है। ऐसे स्वरूप की देवता और राक्षस जय जयकार कर रहे हैं।

नव किंकण नेवर नाद हूअं।।
चल चाल सभाचल कंप भुअं।।
घण घुंघर घंटण धोर सुरं।।
चर चार चरा चरयं हुहरं।।56।।

शब्दार्थ : नव किंकण–घुंघरूओं वाली तड़ागी। सभाचल–पर्वत पहाड़। कंप–भूकंप। घण–बहुत सारा। चर चार–चल और अचल। हुहरं–घबराकर।

भावार्थ : महाकाल की तड़ागी में पड़े हुए घुंघरुओं के स्वर से धरती और पर्वत कांपने लग जाते हैं। ऐसे प्रतीत होता है जैसे भूकंप आ गया हो। घुंघरुओं की भयानक गर्जना को सुनकर चारों दिशाओं में जड़ चेतन हो जाते हैं।

चल चौदहूं चक्रन चक्र फिरं।।
बढवं घटवं हरीअं सुभरं।।
जग जीव जिते जलयं थलयं।।
अस को जु तवाइसुअं मलयं।।57।।

शब्दार्थ : चल–चलता फिरता। बढवं–बढ़ाने वाला। घटवं–घटाने वाला। सुभरं–भरने वाला। तवाइसुअं–आज्ञा को मानने वाला। मलयं–मानने से इन्कार करना।

भावार्थ : प्रभु की आज्ञा का चक्कर चौदह लोकों में चल रहा है। वह प्रभु बढ़े हुए को घटाने वाले और घटे हुओं को बढ़ाने वाले है, वह सब की खाली झोली भर देते हैं। इस जगत में जल-थल में रहने वाले जितने भी जीव हैं उनमें इतना साहस कहाँ जो उस प्रभु आज्ञा की अहेलना करे।

घट भादव मास की जाण सुभं।।
तन सावरे रावरेअं हुलसं।।
रद पंगत दामनीअं दमकं।।

घन घुंघर घंट सुरं घमकं।।58।।

शब्दार्थ : घट–घटा। मास–महीना। सावरे–सांवले। रावरेअं–आपके। हुलसं–आनंद दायक। रद पंगत–दांतों की पंक्ति। दामनीअं–बिजली।

भावार्थ : हे प्रभु ! जैसे भाद्रव मास की काली घटाएं बहुत सुहावनी लगती हैं उसी प्रकार आपका शरीर चमकता है। सांवले शरीर में दांतों की पंक्ति ऐसे चमकती है जैसे काली घटाओं में बिजली। घुघरुओं और घंटिओं का तीव्र स्वर ऐसे सुनाई देती है जैसे बादलों की गर्जन।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

घटा सावणं जाण सयामं सुहायं।।
मणी नील नगियं लखं सीस निआयं।।
महां सुंद्र सयामं महां अभिरामं।।
महां रूप रूपं महां काम कामं।।59।।

शब्दार्थ : नील–नीलम पत्थर। लखं–देखकर। निआयं–नीचा करते हुए। अभिरामं–मन को लुभाने वाला, सुंदर।

भावार्थ : हे प्रभु ! आपका सांवला शरीर सावन मास की काली घटाओं जैसा सुंदर है। जिसे देखकर नील मणियों वाले पर्वत भी अपना शीश झुका लेते हैं। आपका श्याम रंग बड़ा ही मनमोहक है। आप रूप के भी महारूप हो और काम के भी कामदेव हो।

फिरै चक्र चउदहूं पुरीयं मधिआणं।।
इसो कौन बीयं फिरै आइसाणं।।
कहो कुंट कौनै बिखै भाज बाचै।।
सभं सीस के संग स्री काल नाचै।।60।।

शब्दार्थ : मधिआणं–बीच मे। बीयं–दूसरा। कुंट–कोना।

भावार्थ : उस महाकाल का चक्र चौदह लोकों में चल रहा है। आप से अधिक शक्तिशाली ऐसा दूसरा कौन है जो आपकी आज्ञा न माने। कोई काल से बचकर कहाँ जाएगा अर्थात् काल (मृत्यु) सब के सिर पर मंडराता है।

करे कोट कोऊ धरे कोट ओटं।।
बचैगो न किउहू करै काल चोटं।।
लिखं जंत्र केते पड़ं मंत्र कोटं।।
बिना सरन ताकी नही और ओटं।।61।।

शब्दार्थ : कोट–करोड़। ओटं–आसरा। किउहू–किसी तरह भी। कोटं–किला।

भावार्थ : कोई कितने भी बड़े बड़े दुर्ग बना ले, करोड़ों साधन अपने बचाव के लिए बना ले फिर भी काल के चक्र से वह बच नहीं सकता। मौत से बचने के लिए चाहे जितने भी जंत्र लिख ले और कितने मंत्रों का जाप कर ले, प्रभु की शरण के बिना और कोई सहारा काम नहीं आता।

लिखं जंत्र थाके पड़ं मंत्र हारे।।
करे काल ते अंत लै कै बिचारे।।
कितिओ तंत्र साधै जु जनमं बिताइओ।।
भए फोकटं काज एकै न आइओ।।62।।

शब्दार्थ : बिचारे–दीन। कितिओ–कितनों ने। फोकटं–व्यर्थ।

भावार्थ : कितने ही जंत्र लिखने वाले जंत्र लिख-लिख कर हार गए। मंत्र पढ़ने वाले मंत्र पढ़-पढ़ कर थक गए। अंत में काल ने उन सब को दीन-हीन बना कर समाप्त कर दिया। कई तांत्रिकों ने तंत्र साध-साध कर सारा जीवन बिता दिया। परंतु ऐसे किए गए सारे कर्म व्यर्थ गए, कोई भी काम न आया।

किते नास मूंदै भए ब्रहमचारी।।
किते कंठ कंठी जटा सीस धारी।।
किते चीर कानं जुगीसं कहायं।।
सभे फोकटं धरम कामं न आयं।।63।।

शब्दार्थ : जटा–जटाएं। जुगीसं–योगीराज। फोकटं–व्यर्थ। कामं न आयं–किसी भी काम न आ सका।

भावार्थ : कई लोगों नें यौगिक क्रिया में नासिका बंद करके ब्रह्मचर्य धर्म का पालन किया। कई लोगों ने काठ की माला का जप किया। कई लोगों ने सिर पर जटाएं धारण कीं। कई लोग कान में कुंडल डाल कर योगी बने। परंतु यह सब कर्म व्यर्थ गए, कोई भी काम न आया।

मधुकीटभं राछसे से बलीअं।।
समे आपनी काल तेऊ दलीअं।।
भए सुंभ नैसुंभ स्रोणंत बीजं।।
तेऊ काल कीने पुरेजे पुरेजं।।64।।

शब्दार्थ : मधुकीटभं–राक्षसों का नाम। राछसे–राक्षसराज। बलीअं–शक्तिशाली वीर। पुरेजे पुरेजं–टुकड़े-टुकड़े।

भावार्थ : राक्षस राज मधु और कैटभ आदि जैसे शक्तिशाली दैत्यों का काल ने नाश कर दिया अर्थात् वे भी मृत्यु से बच नहीं सके। सुम्भ, निसुम्भ, श्रोणितबीज आदि सभी बड़े-बड़े राक्षसों के भी काल ने टुकड़े-टुकड़े कर दिए।

बली प्रिथीअं मानधाता महीपं।।
जिनै रथ्थ चक्रं कीए सात दीपं।।
भुजं भीम भरथं जगं जीत डंडयं।।
तिनै अंतके अंतकौ काल खंडयं।।65।।

शब्दार्थ : प्रिथिअं–राजा पृथु। चक्रं–पहिए। भुजं–भुजाएं।

डंडयं–दंढ देना।

भावार्थ : पृथु और मानधाता शक्तिशाली राजा हुए जिन्होंने रथ की पंक्ति-रेखा से सात द्वीप बनाए। भीम और भरत जैसे बड़े-बड़े योद्धाओं ने अपनी भुजाओं के बल से सारे विश्व को अपने अधीन कर लिया। ऐसे शूरवीर राजा भी काल से बंच नहीं सके।

जिनै दीप दीपं दुहाई फिराई।।
भुजादंड दै छोणि छत्रं छिनाई।।
करे जग्ग कोटं जसं अनेक लीते।।
वहै बीर बंके बली काल जीते।।66।।

शब्दार्थ : दुहाई–ढिंढोरा पीटना। छोणि–धरती। छिनाई–छीन लेना। बंके–सुंदर।

भावार्थ : जिन शूरवीरों ने अपनी शक्ति का ढिंढोरा सात द्वीपों में पिटवाया; अपनी शक्ति से सारे राजसिंहासन अपने अधीन कर लिए; जिन्होंने करोड़ों यज्ञ करके प्रसिद्धि प्राप्त की; ऐसे शूरवीर भी महाकाल से बच नहीं सके।

कई कोट लीने जिनै दुरग ढाहे।।
किते सूरबीरान के सैन गाहे।।
कई जंग कीने सु साके पवारे।।
वहै दीन देखे गिरे काल मारे।।67।।

शब्दार्थ : दुरग–किले। सूरबीरान–शूरवीर, शक्तिशाली। जंग–युद्ध। दीन–लाचार।

भावार्थ : कई शक्तिशाली योद्धाओं ने करोड़ों किले गिराकर अपने साम्राज्य में मिला लिये। कई शक्तिशाली योद्धाओं ने युद्ध जीतकर शत्रुओं की सेना का नाश कर दिया। परंतु ऐसे दिग्विजयी राजाओं को भी काल ने दीन हीन अथवा लाचार

बनाकर छोड़ दिया।

जिनै पातसाही करी कोट जुग्गियं।।
रसं आनरसं भली भांति भुगियं।।
वहै अंत को पाव नागे पधारे।।
गिरे दीन देखे हठी काल मारे।।68।।

शब्दार्थ : आनरसं–हर प्रकार के रस। भुगियं–भोगना।

भावार्थ : जिन सम्राटों ने करोड़ों युगों तक राज्य किया अतः भांति-भांति के रस का पान किया; अंत समय नंगे पांव इस दुनिया से कूच कर गए। वह हठी राजा काल के सामने झुकते हुए देखे गए।

जिनै खंडीअं दंड धारं अपारं।।
करे चंद्रमा सूर चेरे दुआरं।।
जिनै इंद्र से जीत कै छोड डारे।।
वहै दीन देखे गिरे काल मारे।।69।।

शब्दार्थ : दंड धारं–हुकूमत करने वाले। सूर–सूर्य।

भावार्थ : जिन्होंने अनेक हुकूमत करने वाले राजाओं का नाश कर दिया। सूर्य और चंद्रमा को अपना द्वारपाल (दास) बना लिया। जिसने इंद्र को जीतकर छोड़ दिया। वह काल के मारे हुए दीन दशा में देखे गए।

।।रसावल छंद।।

जिते राम हूए।। सभै अंति मूए।।
जिते किसन हैहै।। सभै अंत जैहै।।70।।

शब्दार्थ : मूए–मर गए।

भावार्थ : जितने ही रामचंद्र जी के अवतार हुए वह सब के सब काल को प्राप्त हो गए। जितने भी कृष्ण जी के अवतार हुए वह

सब भी अपने शरीर को त्याग कर काल की लपेट में आ गए।

जिते देव होसी।। सभै अंत जासी।।
जिते बोध ह्वैहै।। सभै अंति छैहै।।71।।

शब्दार्थ : देव–देवता। बोध–ज्ञानी। छैहे–नष्ट हो गए।

भावार्थ : भविष्य में जितने भी देवी देवता होंगे सबको काल अपने वश में कर लेगा। जितने भी विद्वान ज्ञानी पुरूष हुए सब के सब समाप्त हो गए।

जिते देवरायं।। सभै अंत जायं।।
जिते दईत एसं।। तितियो काल लेसं।।72।।

शब्दार्थ : देवरायं–इंद्र। दईत–दैत्य। एसं–राजा। तितियो–उतने ही (सारे के सारे)।

भावार्थ : जितने भी इंद्र देवता होंगे वे सब अंत को प्राप्त होंगे। जितने भी दैत्यों के राजा होंगे, वे सब भी अंत में काल को प्राप्त होंगे।

नरसिंघा अवतारं।। वहे काल मारं।।
बडो डंडधारी।। हणिओ काल भारी।।73।।

शब्दार्थ : डंडधारी–शस्त्रधारी। हणिओ–मारे।

भावार्थ : जिस काल ने नरसिंह के अवतार को भी नहीं छोड़ा, उसने दूसरों को दण्ड देने वाले शक्तिशाली लोगों का भी नाश कर दिया।

दिजं बावनेयं।। हणियो काल तेयं।।
महां मच्छ मुंडं।। फधिओ काल झुंडं।।74।।

शब्दार्थ : दिजं–ब्राह्मण। बावनेयं–बावन अवतार। मच्छ–मत्सय (विष्णु का मत्सय अवतार)। फधिओ–फंस गए।

भावार्थ : बावन अवतारी जो महा पण्डित थे उनको भी काल ने अपना ग्रास बना लिया अर्थात मृत्यु को प्राप्त हो गए। मत्सय अवतार (विष्णु का मच्छ अवतार) जो बड़े सिर वाला था काल के जाल में फंस ही गया।

जिते होइ बीते।। तिते काल जीते।।
जिते सरन जैहै।। तितिओ राख लैहै।।75।।

शब्दार्थ : जिते–जितने। तिते–उतने।
भावार्थ : जितने भी बड़े बड़े अवतारी तथा अनेक बड़े राजा हुये है उन सबको को काल ने जीत लिया। जो भी उस सर्वशक्तिमान प्रभु की शरण में गए वे सब मोक्ष को प्राप्त हो गए अर्थात जन्म-मरण के जाल से छूट गए।

।।भुजंग प्रयात छंद।।
बिना सरन ताकी न अउरै उपायं।।
कहा देव दईतं कहा रंक रायं।।
कहा पातिसाहं कहा उमरायं।।
बिना सरन ताकी न कोटै उपायं।।76।।

शब्दार्थ : दईतं–दैत्य। रंक–ग़रीब। रायं–राजा।
भावार्थ : उस प्रभु की शरण में जाने के अतिरिक्त बचने का कोई उपाय नहीं। चाहे वो देवता हो या दैत्य, चाहे कोई राजा है या रंक, चाहे कोई पातशाह है या उमराव, वे सब अपने बचने के करोड़ों उपाय क्यों न कर लें, प्रभु की शरण के अतिरिक्त उनके बचाव का कोई और साधन नहीं।

जिते जीव जंतं सु दुनीअं उपायं।।
सभै अंति कालं बली काल घायं।।
बिना सरन ताकी नही और ओटं।।

लिखे जंत्र केते पड़े मंत्र कोटं।।77।।

शब्दार्थ : दुनीअं–दुनिया में। अंति कालं–अंत समय। बली काल–बलशाली। घायं–मार दिये।

भावार्थ : इस संसार में जितने भी जीव-जंतु हुए उन सब को काल (मृत्यु) ने समाप्त कर दिया। उस प्रभु के बिना कोई और सहारा नहीं, चाहे जितने भी जंत्र लिख लो और करोड़ों ही मंत्रों का जाप कर लो।

।।नराज छंद।।

जितेकि राज रंकयं।। हने सु काल बंकयं।।
जितेक लोकपालयं।। निदान काल दालयं।।78।।

शब्दार्थ : जितेकि–जितने भी। बंकयं–सुंदर। निदान–अंत समय। दालयं–मार दिया।

भावार्थ : जितने भी राजा या रंक हुए उन सबको सुंदर काल ने मार दिया। जितने भी प्रजापालक राजा हुए वे सब मृत्यु की चक्की में पिस कर रह गए।

क्रिपाण पाण जे जपै।। अनंत थाट ते थपै।।
जितेक काल धिआइ है।। जगत्ति जीत जाइ है।।79।।

शब्दार्थ : क्रिपाण–तलवार। पाण–हाथ। जितेक–जितने भी।

भावार्थ : अपने हाथ में तलवार धारण करने वाले लोग जो प्रभु का जाप करते हैं और उनकी पूजा करते हैं अथवा अपने बचाव के उपाय कर लेते हैं अर्थात जो प्रभु का स्मरण करता है वह सारे संसार को जीत लेता है।

बचित्र चार चित्रयं।। परमयं पवित्रयं।।
अलोक रूप राजियं।। सुणे सु पाप भाजियं।।80।।

शब्दार्थ : बचित्र–अनोखा। परमयं–बहुत अधिक। अलोक–जिसके

जैसा और कोई न हो।

भावार्थ : उस प्रभु का सुंदर विचित्र रूप बहुत ही पवित्र है। उनका रूप अलौकिक है। उनका नाम सुनते ही सभी पाप नष्ट हो जाते हैं।

बिसाल लाल लोचनं।। बिअंत पाप मोचनं।।
चमक चंद्र चारयं।। अघी अनेक तारयं।।81।।

शब्दार्थ : लोचनं–नेत्र। चारयं–सुन्दर। अघी–पापी।

भावार्थ : उस प्रभु के नेत्र विशाल और लाल हैं। वे अनगिनत पापों का नाश करने वाले हैं। उनकी सुंदरता चंद्रमा से भी अधिक सुंदर है। वह अनेक पापिओं का उद्धार कर देते हैं।

।।रसावल छंद।।

जिते लोक पालं।। तिते जेर कालं।।
जिते सूर चंद्रं।। कहा इंद्र बिंद्रं।।82।।

शब्दार्थ : जेर–अधीन। बिंद्रं–तुच्छ।

भावार्थ : जितने भी लोगों का पालन करने वाले बड़े-बड़े राजा हुए वे सब काल के अधीन हैं। सूर्य, चंद्रमा, इंद्र आदि सब के सब काल के अधीन हैं।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

फिरै चौदहूं लोकयं काल चक्रं।।
सभै नाथ नाथे भ्रमं भउह बक्रं।।
कहा राम क्रिसनं कहा चंद सूरं।।
सभै हाथ बाधे खरे काल हजूरं।।83।।

शब्दार्थ : नाथ–मालिक। बक्रं–टेढ़ा। क्रिसनं–कृष्ण भगवान।

भावार्थ : उस महाकाल प्रभु का चक्र चौदह लोकों में घूम रहा है। उसमें विचर रहे सभी प्राणी चाहे वह बड़े-बड़े ऋषि मुनि

क्यों न हों वे काल की टेढ़ी भौहों से बच नही सकते। क्या श्री राम जी और कृष्ण जी, क्या सूरजं तथा चंद्रमा, सब काल के सामने हाथ जोड़ कर जी हजूरी कर रहे हैं। अर्थात काल किसी को भी नहीं छोड़ता चाहे वह बड़ा अथवा छोटा हो।

।।सवैया।।

काल ही पाइ भयो भगवान सु जागत या जग जाकी कला है।।
काल ही पाइ भयो ब्रहमा सिव काल ही पाइ भयो जुगीआ है।।
काल ही पाइ सुरा सुर गंध्रब' जच्छ भुजंग दिसा बिदिसा है।।
और सकाल सभै बसि काल के एक ही काल अकाल सदा है।।84।।

शब्दार्थ : भगवान–विष्णू। कला–शक्ति। जुगीआ–योगी। सुरा सुर–देवता तथा दैत्य। भुजंग–सांप। दिसा बिदिसा–चारों दिशाएं। सकाल–काल के वश में। अकाल–प्रभु।

भावार्थ : श्री विष्णू भगवान जिनकी शक्ति सारे संसार में विद्यमान हैं काल की कृपा से उनको भगवान की पदवी प्राप्त हुई। काल की कृपा से ब्रह्मा जी, शिवजी और योगी हुए। काल के बनाए हुए देवता, राक्षस, गन्धर्व, सांप और चारों दिशाएं बनी। इस संसार के जितने भी जीव-जंतु हुए सब काल की ही कृपा है बस एक अकाल पुरुष प्रभु ही काल से रहित है।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

नमो देव देवं नमो खड़गधारं।।
सदा एक रूपं सदा निरबिकारं।।
नमो राजसं सातकं तामसेअं।।
नमो निरबिकारं नमो निरजुरेअं।।85।।

शब्दार्थ : राजसं–रजो गुण। सातकं–सतो गुण, निरजुरेअं–रोग रहित। तामसेअं–तमो गुण।

भावार्थ: हे देवताओं के देवता ! खड़गधारी प्रभु ! आपको मेरा

नमस्कार है। आप सदा एक स्वरूप हो, विकार रहित हो। रजो गुण, सतो गुण तथा तमो गुण वाले परमात्मा को मेरा नमस्कार है। आप निर्विकार और रोगों से रहित हो। ऐसे अकाल पुरुष के चरणों में मेरा नमस्कार है।

।।रसावल छंद।।

नमो बाण पाणं।। नमो निरभयाणं।।
नमो देव देवं।। भवाणं भवेअं।।86।।

शब्दार्थ : निरभयाणं–निडर। भवाणं–जो है।

भावार्थ : धनुरधारी भगवान, जो निडर हैं उनको मेरा बारंबार नमस्कार है। देवताओं के देवता को मेरा नमस्कार है। वह प्रभु ! सर्वव्यापक है और वह तीनो कालों में विद्यमान है।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

नमो खग्ग खंडं क्रिपाणं कटारं।।
सदा एक रूपं सदा निर बिकारं।।
नमो बाण पाणं नमो दंड धारियं।।
जिनै चौदहूं लोक जोतं बिथारियं।।87।।

शब्दार्थ : क्रिपाणं–तलवार। धारियं–धारण किया हुआ।

भावार्थ : उस तलवार, खंडा, कृपाण और कटार धारण करने वाले प्रभु को मेरा नमस्कार है। वह एक रूप और विकार रहित है। हाथ में तीर कमान पकड़ने वाले को मेरा नमस्कार है। उस महांकाल प्रभु की ज्योति चौदह लोकों में प्रज्वलित हो रही है।

नमसकारयं मोर तीरं तुफंगं।।
नमो खग्ग अदग्गं अभेअं अभंगं।।
गदायं ग्रिसटं नमो सैहथीअं।।
जिनै तुल्लीयं बीर बीयो न बीअं।।88।।

शब्दार्थ : मोर–मेरी। तुफंगं–बन्दूक। अदग्गं–दाग रहित। गदायं–गदा। ग्रिसटं–भारी। सैहथीअं–बरछी। तुल्लीयं–बराबर। न बीअं–दूसरा और नहीं।

भावार्थ : काल रूपी तीर और बंदूक को मेरा नमस्कार है। चमकती हुई तलवार को मेरा नमस्कार है। काल रूपी गदा और बरछी को मेरा प्रणाम है। उस महांकाल जैसा न कोई शूरवीर हुआ है और न ही कोई होगा।

।।रसावल छद।।

नमो चक्र पाणं।। अभूतं भयाणं।।
नमो उग्र दाड़ं।। महां ग्रिसट गाड़ं।।89।।

शब्दार्थ : अभूतं–आश्चर्य। उग्र दाड़ं–तेज दाड़े। गाड़ं–मजबूत।

भावार्थ : चक्रधारी महाकाल को मेरा नमस्कार है। भयानक रूप वाले को मेरा प्रणाम है। तेज, भारी और मजबूत दाड़ो वाले को मेरा नमस्कार है।

नमो तीर तोपं।। जिनै सत्र घोपं।।
नमो धोप पट्टं।। जिनै दुसट दट्टं।।90।।

शब्दार्थ : पट्टं–सीधी तलवार। दुसट–पापी।

भावार्थ : तीर और तोप धारण करने वाले को मेरा नमस्कार है। जिसने तीर और तोपों से दुश्मनों का नाश कर दिया। मेरा नमस्कार है उस सीधी और पतली तलवार को जिसने दुश्मनों को धमकाया।

जिते ससत्र नामं।। नमसकार तामं।।
जिते असत्र भैयं।। नमसकार तेयं।।91।।

शब्दार्थ : तामं–सबको। भैयं–हुए हैं।

भावार्थ : जितने भी परिचित शस्त्र है, उन सब को मेरा

नमस्कार है। जितने भी अस्त्र हुये है, उन सब को मेरा नमस्कार है।

।।सवैया।।

मेर करो त्रिण ते मुहि जाहि गरीबनिवाज न दूसर तोसो।।
भूल छिमो हमरी प्रभ आपन भूलनहार कहूं कोऊ मोसो।।
सेव करी तुमरी तिन के सभही ग्रिह देखीअत द्रब भरोसो।।
या कल मै सभ काल क्रिपान के भारी भुजान को भारी भरोसो।।92।।

शब्दार्थ : मेर–सुमेर पर्वत। त्रिण–तिनका। जाहि–मेरे समान। छिमो–क्षमा। आपन–स्वयं। द्रब–दौलत। भरोसो–भरा हुआ। या कल–इस कलयुग में।

भावार्थ : (श्री गुरु गोबिंद सिंह जी प्रार्थना करते हैं) हे प्रभु ! मेरे जैसे तुच्छ जीव को जो एक तिनके के समान है, सुमेर पर्वत जैसा बड़ा बनाने की कृपा करो, हे प्रभु ! आप जैसा ग़रीब नवाज कोई और नही। हे प्रभु ! मैं सदैव भूल करने वाला हूँ, आप क्षमाशील हो। मेरी सभी भूलों को क्षमा कर दो। जिन्होंने तुम्हारी भक्ति की, तुम्हारा सहारा लिया वे दौलत से भरे हुए देखे गये। इस कलियुग में मुझे तलवारधारी प्रभु का ही सहारा है।

सुंभ निसुंभ से कोट निसाचर जाहि छिनेक बिखै हन डारे।।
धूमरलोचन चंड अउ मुंड से माहख से पल बीच निवारे।।
चामर से रणचिच्छुर से रकतिच्छण से झट दै झझकारे।।
ऐसो सु साहिबु पाइ कहा परवाह रही इह दास तिहारे।।93।।

शब्दार्थ : सुंभ निसुंभ–राक्षसों के नाम। निसाचर–राक्षस। निवारे–दूर किये। रणचिच्छुर–एक आँख वाले। रकतिच्छण–लाल आँख वाला राक्षस।

भावार्थ : जिस प्रभु ने सुम्भ-निसुम्भ जैसे करोड़ों राक्षस एक ही क्षण में नाश कर दिये, धूमरलोचन, चंड-मुण्ड तथा महिषासुर जैसे राक्षसों का एक पल में विनाश कर दिया, चामर, चिच्छर

और रक्तिच्छन आदि दैत्यों को एक पल में मार गिराया, ऐसे ऊँचे साहिब (परमात्मा) को पाकर इस दास को किसी और की परवाह नहीं।

मुंडहु से मधुकीटभ से मुर से अघ से जिनि कोटि दले है।।
ओट करी कबहूं न जिनै रण चोट परी पग द्वै न टले है।।
सिंध बिखै जे न बूडै निसाचर पावक बाण बहे न जले है।।
ते अस तोर बिलोक अलोक सु लाज को छाडिकै भाजि चले है।।94।।

शब्दार्थ : पग–पैर। सिंध–समुद्र। बूडै–डूब गए। पावक बाण–अग्निवाण। अस–तलवार। तोर–तेरी। बिलोक–देखना। अलोक–अलौकिक।

भावार्थ : महाकाल प्रभु नें मुंड, मघु, कीटभ, मुर और अघासुर जैसे राक्षसों को मार दिया जिन शूरवीरों नें युद्ध में बचने का सहारा नहीं लिया। जो युद्ध के मैदान में शत्रु के सामने दो पग भी पीछे नही हटे, जो दैत्य समुद्र में नहीं डूबे और जिन पर अग्नि बाण का कोई प्रभाव नही पड़ा वे आपकी अलौकिक तलवार को देखकर लज्जित होकर भाग गए।

रावण से महरावण से घटकानहु से पल बीच पछारे।।
बारदनाद अकंपन से जग जंग जुरे जिन सिउ जम हारे।।
कुंभ अकुंभ से जीत सभे जग सातहूं सिंध हथिआर पखारे।।
जे जे हुते अकटे बिकटे सु कटे करि काल क्रिपान के मारे।।95।।

शब्दार्थ : घटकानहु–कुम्भकरण। बारदनाद–मेघनाद। कुंभ अकुंभ –कुंभकरण के बेटे। अकटे–जिसे काटा न जा सके।

भावार्थ : उस महाकाल प्रभु जी ने रावण, महारावण कुंभकरण जैसे शक्तिशाली योद्धाओं को एक पल में नष्ट कर दिया। मेघनाद और अकंपन जैसे शूरवीर जिनके साथ युद्ध करके यमराज भी हार गया। कुम्भ तथा अकुम्भ जैसे बहादुर जिन्होंने

सारे विश्व को जीतकर अपने शस्त्र सात समुद्रों में धोए ऐसे अनेक शूरवीर जो किसी से भी परास्त नहीं हुए ऐसे शूरवीर केवल महाकाल प्रभु की तलवार से ही मारे गए।

जो कहूं काल ते भाज के बाचीअत तो किह कुंट कहो भजि जईयै।।
आगे हूं काल धरे अस गाजत छाजत है जिह्ह ते नसि अईयै।।
ऐसो न कै गयो कोई सु दाव रे जाहि उपाव सो घाव बचईअै।।
जाते न छूटीअै मूड़ कहूं हसि ताकी न किउ सरणागति जईयै।।96।।

शब्दार्थ : अस–तलवार। छाजत–सुंदर लगता हैं। सरणागति–शरण में आए हुए।

भावार्थ : जो मृत्यु से बचना चाहे वह किस दिशा में जाकर छिप सकता है। चाहे जिस ओर भी वह अपनी रक्षा हेतु हाथ में तलवार लेकर गर्जता हुआ चले वह मृत्यु से बचकर कहाँ भाग सकता है। इस संसार मे ऐसा कोई भी बुद्धिमान पैदा नहीं हुआ जो काल से बचने का उपाय बता सके। अरे मूर्ख ! जिस काल से बचने का कोई भी रास्ता नहीं उस की शरण में क्यों न अपने आप को अर्पित कर दो !

क्रिसन अउ बिसन जपे तुहि कोटिक राम रहीम भली बिधि धिआयो।।
ब्रहम जपिओ अरु संभ थपिओ तिह ते तुहिको किनहूं न बचायो।।
कोट करी तपसा दिन कोटिक काहू न कौडी को काम कढायो।।
काम का मंत्र कसीरे के काम न काल को घाउ किनहूं न बचायो।।97।।

शब्दार्थ : रहीम–दयावान। कोट–करोड़। कसीरे–बहुत सस्ते।

भावार्थ : हे मनुष्य ! तूने श्री कृष्ण जी, श्री विष्णु जी, राम रहीम आदि करोड़ो देवी देवताओं के नाम का जाप किया। ब्रह्मा, शिव की अर्चना की परंतु किसी ने भी तुम्हारी काल से रक्षा नहीं की। तुमने कितनी ही तपस्या की, करोड़ों चालीसे रखे, करोड़ों दिनों तक तपस्या की पर वह सब निशफल रहे अत कौड़ी के

काम न आये क्योंकि काल की मार से तुझे कोई नहीं बचा सका।

काहे को कूर करे तपसा इन की कोऊ कौडी के काम न अैहै।।
तोहि बचाइ सकै कहु कैसे कै आपन घाव बचाइ न अैहै।।
कोप कराल को पावक कुंड मै आप टंगिओ तिम तोहि टंगै है।।
चेत रे चेत अजो जीअ मै जड़ काल क्रिपा बिनु काम न अैहै।।98।।

शब्दार्थ : कूर–मिथ्या। कैसे कै–किस तरह। कराल–भयानक। पावक कुंड–अग्नी कुंड। जड़–मूर्ख।

भावार्थ : अरे मनुष्य ! फिर तुम मिथ्या देवी देवताओ की पूजा क्यों करता है ? ये सब तो तेरे कुछ भी काम नही आ सकते। वह अपनी रक्षा स्वयं नही कर सकते वो तुम्हारी रक्षा कैसे करेंगे ? काल के भयानक अग्निकुंड में जो स्वयं टंगा हुआ है तुझे भी उसी आग मे झुलसा देगा। हे मूर्ख ! तुम उस काल प्रभु का ध्यान क्यों नहीं करता जिसकी कृपा के बिना तेरा कोई और सहारा नहीं।

ताहि पछानत है न महा पसु जाको प्रतापु तिहूं पुर माही।।
पूजत है परमेसर कै जिहकै परसै परलोक पराही।।
पा पकरो परमारथ कै जिह पा पन ते अति पाप लजाई।।
पाइ परो परमेसर के जड़ पाहन मै परमेसर नाही।।99।।

शब्दार्थ : महा–बहुत अधिक। प्रतापु–महानता। तिहूं–तीन। परसै–छूने से। परमारथ–गति, मुक्ति।

भावार्थ : हे महामूर्ख मानव ! तुम उस महाकाल प्रभु की शरण मे क्यों नहीं जाते जिनका प्रताप तीनो लोकों मे फैला हुआ है। तू उन पत्थरों की मूर्ति की पूजा करता है जिनको छूने मात्र से ही तुम परलोक से दूर हो जाते हो। तुम दूसरों की भलाई के लिए ऐसे पाप करते हो जिनको देखकर पाप भी लज्जित हो जाते हैं। तुम अकाल पुरुष परमात्मा की शरण में जाओ। इन

पत्थर की मूर्तियों से प्रभु की प्राप्ति नहीं होगी।

मोन भजे नही मान तजे नही भेख सजे नही मूंड मुडाए।।
कंठ न कंठी कठोर धरै नही सीस जटान के जूटु सुहाए।।
साचु कहौ सुनि लै चिति दै बिनु दीन दिआल की साम सिधाए।।
प्रीत करे प्रभु पायत है किरपाल न भीजत लांड कटाए।।100।।

शब्दार्थ : मोन–चुप। कठोर–सख्त। साम–शरण।

भावार्थ : मौन धारण करके सम्मान छोड़ने से, वेश धारण करके अर्थात जोगिए वस्त्र पहनकर, सिर और मुंह (मूंछ) मुंडवाकर (कटवा कर) प्रभु की प्राप्ति नहीं होती। गले में काठ की माला पहन कर सिर पर जटाएं रखकर या जूँड़ा बना कर प्रभु जी नहीं मिलते। गुरु जी कहते हैं कि तू मन लगाकर मेरे वचनों को सुन, दीनदयाल प्रभु की शरण के बिना कोई और कर्मकाण्ड सफल नहीं हो सकता। प्रभु से प्रीत लगाने से ही प्रभु को पाया जा सकता है सुन्नत अर्थात कर्मकाण्ड के पाखण्ड से प्रभु प्रसंन नहीं होते।

कागद दीप सभै करि कै अरु सात समुंद्रन की मसु कैहो।।
काट बनासपती सगरी लिखबे हूके लेखन काज बनै हो।।
सारसुती बकता करि कै जुगि कोटि गनेसि कै हाथ लिखै हो।।
काल क्रिपान बिना बिनती न तऊ तुमको प्रभ नैक रिझै हो।।101।।

शब्दार्थ : मसु–स्याही। बनासपती–जंगल। सगरी–सब। सारसुती–विद्या की देवी सरस्वती। बकता–उच्चारण करने वाली जीभ। जुगि कोटि–करोड़ों युग। नैक–रति भर भी।

भावार्थ : यदि मैं सारे विश्व के द्वीपों की भूमि का कागज़ बना लूं तथा सातों समुद्र के पानी की स्याही बना लूं, सभी वनों को काटकर कलमें बना लूं, करोड़ों युगों तक गणेश जी के हाथ से आपकी महिमा का वर्णन लिखवा लूं तब भी मैं उस परमपिता

के गुणों का वर्णन नहीं कर सकता उनको प्रसंन नहीं कर सकता। अर्थात प्रभु की महिमा असीम है।

इति श्री बचित्र नाटक ग्रंथे स्त्री काल जी की उसतति
प्रिथम धिआइ संपूरन सुभ मसत।।1।।अफजू।।

शव्दार्थ : इति–अब। स्त्री–सुंदर बचित्र नाटक की। उसतति–श्री काल भगवान की स्तुति। संपूरन सुभ मसत–पूरा हो गया जो अति उत्तम है। अफजू–प्रसंग जारी है।
भावार्थ : यहीं पर सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ के सर्ब काल जी की उसतति का प्रथम अध्याय समाप्त हुआ, शुभ है।

2 वंश वर्णन

इस अध्याय में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अकाल पुरुष दीनदयाल की महिमा का गुणगान करते हुए सृष्टि की रचना, वेदी तथा सोढी वंश की उत्पत्ति पर प्रकाश डाला है। सब से पहले शेख सांई श्री विष्णु भगवान हुए। उनकी शैय्या शेषनाग की थी। शेख सांई जी ने अपने एक कान से मल निकाली जिससे मधु और कैटभ नाम के दो राक्षस उत्पन्न हुए। दूसरे कान की मल से सृष्टि की उत्पत्ति हुई। दक्ष प्रजापति की दस हज़ार लड़कियां हुई। उन लड़कियों का विवाह राजाओं तथा ऋषियों के साथ हुआ। उनमे दिती, अदिती, बिकाला तथा कदरु का विवाह कश्यप ऋषि के साथ हुआ। जिनसे देवता, दैत्य, सांप तथा गरुड़ आदि उत्पन्न हुए। अदिती ने सूरज नाम के बेटे को जन्म दिया जिससे सूर्यवंश की उत्पत्ति हुई। सूर्यवंश में रघु राजा हुए। रघु राजा से अज और फिर दशरथ नाम के राजा हुए। राजा दशरथ की तीन रानियां और चार बेटे थे। श्री रामचंद्र जी, भरत, शत्रुघन, और लक्ष्मण। श्री रामचंद्र जी के दो बेटे थे, लव और कुश। लव ने लाहौर और कुश ने कसूर शहर को बसाया। उनकी कई पीढ़ियां बीतने के बाद लव के स्थान पर काल राए तथा कुश की गद्दी पर काल केतू राजा हुए। उन दोनों का आपस में बहुत दिनों तक युद्ध हुआ। अंत में कालराय की जीत हुई। उसने कालकेतु को पंजाब से निकाल दिया। वह सनौढ चला गया और वहाँ के राजा की लड़की से विवाह कर लिया। उनका एक बेटा हुआ जिसका नाम सोढीराय रखा और सोढी वंश का आरंभ हुआ। इस अध्याय में 32 चौपाइयां

और 4 दोहे कुल मिलाकर 36 छंद हैं।

।।चौपई।।

तुमरी महिमा अपर अपारा।।
जाका लहिओ न किनहू पारा।।
देव देव राजन के राजा।।
दीन दिआल गरीब निवाजा।।1।।

शब्दार्थ : तुमरी–तुम्हारी। अपर अपारा–अपरम्पार।

भावार्थ : हे मेरे स्वामी ! गरीब नवाज ! आपकी महिमा अपरंपार है। आपकी महिमा का कोई भी पारावार नहीं। आप देवताओं के देवता और राजाओं के राजा हैं, आप दीनदयाल पतितपावन हैं।

।।दोहिरा।।

मूक ऊचरै सासत्र खटि पिंग गिरन चड़ि जाइ।।
अंध लखै बधरो सुनै जौ काल क्रिपा कराइ।।2।।

शब्दार्थ : मूक–गूंगा। पिंग–लंगड़ा। गिरन–पहाड़। बधरों–बहरा। लखै–देख सकना।

भावार्थ : हे नाथ ! तुम्हारी कृपा से गूंगा छः शास्त्रों का उच्चारण कर सकता है, लंगड़ा पहाड़ों पर चढ़ने की हिम्मत कर सकता है। नेत्रहीन देख सकता है और बहरा सुन सकता है अर्थातः अकाल पुरुष भगवान् सब विपत्तियों को दूर करने वाले हैं।

।।चौपई।।

कहा बुद्ध प्रभ तुच्छ हमारी।।
बरनि सकै महिमा जु तिहारी।।
हम न सकत करि सिफत तुमारी।।
आप लेहु तुम कथा सुधारी।।3।।

शब्दार्थ : बरनि–वर्णन। सिफत–महिमा।

भावार्थ : हे मेरे प्रभु ! मैं तुच्छ बुद्धि वाला जीव आपकी महिमा का गुणगान नहीं कर सकता। मैं आपके गुणों की प्रशंसा करने में असमर्थ हूँ इसलिए हे स्वामी ! आप स्वयं ही अपनी कथा को सुधारने की कृपा करो।

कहा लगै इहु कीट बखानै।।
महिमा तोरि तुही प्रभ जानै।।
पिता जनम जिम पूत न पावै।।
कहा तवन का भेद बतावै।।4।।

शब्दार्थ : कीट–कीड़ा, तुच्छ जीव।

भावार्थ : हे प्रभु ! मैं आपका दास, एक तुच्छ जीव आपकी महिमा का गुणगान कहाँ तक करूं ? आप अपनी महिमा को आप ही जानते हो। जैसे पिता के जन्म के बारे में बेटा कुछ नहीं बता सकता। उसका भेद वह क्या बता सकता है ?

तुमरी प्रभा तुमै बनि आई।।
अउरन ते नही जात बताई।।
तुमरी क्रिआ तुमही प्रभ जानो।।
ऊच नीच कस सकत बखानो।।5।।

शब्दार्थ : क्रिआ–कौतुक। कस–कैसे।

भवार्थ : आप ही अपनी महिमा को जानते हो, कोई दूसरा आपकी महिमा का वर्णन नहीं कर सकता। हे नाथ ! आप तो अपने कौतुक के बारे में जानते हैं परंतु किसी और में इतनी शक्ति कहाँ जो आपकी उपमा का वर्णन भी कर सके। ऊंचे की महिमा का वर्णन नीच कैसे कर सकता है।

सेसनाग सिर सहस बनाई।।
द्वै सहंस रसनाह सुहाई।।

रटत अब लगे नाम अपारा।।
तुमरो तऊ न पावत पारा।।6।।

शब्दार्थ : सहस–हज़ार। द्वै–दो। रसनाह–जीह्वा।

भावार्थ : हे प्रभु ! आपने शेषनाग के एक हज़ार सिर बनाए हैं जिसमें दो हज़ार जिह्वा शोभायमान हैं। वह आज तक आपके अनेक नामों का स्मरण करता है। परंतु आपकी महिमा का वह फिर भी भेद नही पा सका।

तुमरी क्रिआ कहा कोऊ कहै।।
समझत बात उरझ मति रहै।।
सूछम रूप न बरना जाई।।
बिरध सरूपहि कहो बनाई।।7।।

शब्दार्थ : उरझ–उलझना। सूछम–सूक्ष्म, छोटे से छोटा। बिरध–बड़े से बड़ा।

भावार्थ : हे भगवान ! आपके करिश्मे का कोई भी वर्णन नहीं कर सकता। आपकी गति को समझने के लिए बुद्धि उलझकर रह जाती है। आपके छोटे रूप (सूक्ष्म रूप) का वर्णन तो नहीं किया जा सकता पर विराट रूप का वर्णन तो कर सकता हूँ।

तुमरी प्रेम भगति जब गहिहौ।।
छोर कथा सभ ही तब कहिहौ।
अब मै कहो सु अपनी कथा।।
सोढी बंस उपजिया जथा।।8।।

शब्दार्थ : गहिहौ–प्राप्त करना। छोर–विस्तार सहित। जथा–जैसे, जिस प्रकार।

भावार्थ : हे मेरे अकाल पुरुष परमात्मा ! आपकी प्रेमा भक्ति को ग्रहण करूंगा तब ही मैं सारा वृतान्त विस्तार से कह सकने की क्षमता रखूंगा। अब मैं अपनी कथा सुनाता हूँ जिस प्रकार सोढी

वंश की उत्पत्ति हुई।

।।दोहरा।।

प्रिथम कथा संछेपते कहो सु हित चितु लाइ।।
बहुरि बडो बिसथार कै कहिहौ सभो सुनाइ।।9।।

शब्दार्थ : प्रिथम–पहले। बहुरि–बाद में। बिसथार–विस्तार।

भावार्थ : पहले मन मे उस प्रभु के लिये प्रेम की भावना जाग्रित करके संक्षिप्त रूप मे कथा कहता हूँ। फिर विस्तारपूर्वक इस कथा का सबके लिये वर्णन करूंगा।

।।चौपई।।

प्रिथम काल जब करा पसारा।।
ओअंकार ते स्रिसटि उपारा।।
कालसैण प्रथमै भइओ भूपा।।
अधिक अतुल बलि रूप अनूपा।।10।।

शब्दार्थ : स्रिसटि–संसार। उपारा–रचना। भूपा–राजा।

भावार्थ : सबसे पहले प्रभु ने जब इस सृष्टि की सृजना की तब इसकी रचना ओंकार शब्द से ही की। सब से पहले कालसेन नामक राजा हुआ जो बड़ा बलवान और सुंदर था।

कालकेत दूसर भूअ भइओ।।
क्रूर बरस तीसर जग ठयो।।
कालधुज चतुरथ त्रिप सोहै।।
जिहते भयो जगत सभ कोहै।।11।।

शब्दार्थ : भूअ–राजा। भयो–हुआ।

भावार्थ : दूसरा राजा कालकेत हुआ। तीसरा क्रूर बरस नामक राजा हुआ। चौथा राजा कालध्वज रूप में प्रकट हुआ उससे सारी सृष्टि की रचना हुई।

सहसराछ जाको सुभ सोहै।।
सहस पाद जाके तन मोहै।।
सेखनाग पर सोइबो करै।।
जग तिह सेखसाइ उचरै।।12।।

शब्दार्थ : सहसराछ–हज़ार आंखें। पाद–पैर। सेखनाग–हज़ार मुंह वाला एक सांप।

भावार्थ : जिस प्रभु के शरीर पर हज़ारों नेत्र शोभित हैं; जिसके हज़ार पैर है; जिनकी शैया शेषनाग है; उसको सारा संसार सेखसाई कहकर पुकारता है।

एक स्रवण ते मैल निकारा।
ताते मधुकीटभ तन धारा।।
दुतीअ कान ते मैलु निकारी।।
ताते भई स्रिसटि इह सारी।।13।।

शब्दार्थ : स्रवण–कान। दुतीअ–दूसरा।

भावार्थ : उस शेखसाई प्रभु जी ने अपने एक कान से मल निकाली, उससे मधु और कैटभ दो राक्षसों का जन्म हुआ। दूसरे कान से मल निकाली तो उससे सारी सृष्टि की रचना हुई।

तिन को काल बहुर बध करा।
तिन को मेध समुंद मो परा।।
चिकन तास जल पर तिर रही।।
मेधा नाम तबहि ते कही।।14।।

शब्दार्थ : बध–मार दिया। चिकन तास–चिकनाहट। मेधा–धरती।

भावार्थ : मधु और कैटभ राक्षस का महाकाल प्रभु जी ने वध कर दिया। उनके शवों को समुद्र में फैंक दिया। शव समुद्र पर तैरते रहे और चिकनाई इकटठी होती रही। वह चिकनाहट

पानी में एक जगह टिक गई और उसने धीरे-धीरे धरती का रूप धारण कर लिया। इस कारण धरती को 'मेधा' या 'मेदनी' कहा जाता है।

साध करम जे पुरख कमावै।।
नाम देवता जगत कहावै।।
कुक्रित करम जे जग मै करही।।
नाम असुर तिन को सभ धरही।।15।।

शब्दार्थ : साध–श्रेष्ठ। कुक्रित–बुरे।

भावार्थ : जो मनुष्य अच्छे कार्य करता है वह संसार में देवता पदवी पर आसीन होता है, जो मनुष्य बुरे कर्म करता है वह राक्षस कहलाता है।

बहु बिथार कह लगै बखानीअत।।
ग्रंथ बढन ते अति डरु मानीअत।।
तिन ते होत बहुत न्रिप आए।।
दच्छ प्रजापति जिन उपजाए।।16।।

शब्दार्थ : प्रजापति–राजा।

भावार्थ : गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि इन कथाओं का बड़ा विस्तार है। यदि मैं इन कथाओं का वर्णन करने का प्रयत्न करूं तो ग्रंथ के बहुत बड़ा हो जाने का भय है। उन राजाओं से बहुत राजा हुए जिनसे दक्ष प्रजापति की उत्पति हुई।

दस सहंस्र तिहि ग्रिह भई कंनिआ।।
जिह समान कह लगै न अंनिआ।।
काल क्रिआ ऐसी तह भई।।
ते सभ बिआह नरेसन दई।।17।।

शब्दार्थ : सहंस्र–हज़ार। कंनिआ–लड़कियां। अंनिआ–दूसरे।

नरेसन–राजाओं को।

भावार्थ : दक्ष प्रजापति के घर दस हज़ार लड़कियों ने जन्म लिया जो बहुत सुंदर थीं। उस समय भगवान की ऐसी कृपा हुई कि उन सबका विवाह राजाओं के साथ हुआ।

।।दोहरा।।

बनता कद्रू दिति अदिति ऐ रिख बरी बनाइ।।
नाग नागरिप देव सभ दईत लए उपजाइ।।18।।

शब्दार्थ : नाग–सांप। नागरिप–दुश्मन। दईत–दैत्य।

भावार्थ : बनता, कदरू, दिति तथा अदिति चारों का विवाह कश्यप ऋषि के साथ हो गया। कदरू से सांप, बनता से गरुड़, आदिति से सारे देवता और दिति से सारे राक्षसों ने जन्म लिया।

।।चौपई।।

ता ते सूरज रूप को धरा।।
जाते बंस प्रचुर रवि करा।।
जो तिन के कहि नाम सुनाऊं।।
कथा बढन ते अधिक डराऊं।।19।।

शब्दार्थ : बंस–वंश। रवि–सूर्य।

भावार्थ : अदिति ने सूर्य को जन्म दिया जिससे सूर्य वंश का विस्तार हुआ। यदि मैं उन सभी सूर्यवंशी राजाओं के बारे में वर्णन करूं तो ग्रंथ के विस्तृत होने का भय है।

तिन के बंस बिखै रघु भयो।।
रघबंसहि जिह जगहि चलयो।।
ताते पुत्र होत भयो अज बर।।
महारथी अरु महा धनुरधर।।20।।

शब्दार्थ : रघुबंसहि–भगवान राम के वंशज। बर–श्रेष्ठ। महारथी–

ताकतवर। धनुरधर–धनुष बाण धारण करने वाले।
भावार्थ : सूरज वंश में एक रघु नाम का राजा हुआ जिससे रघुवंश राज्य का विस्तार हुआ। रघुवंश का बेटा राजा अज के नाम से प्रसिद्ध हुआ जो बहुत श्रेष्ठ योद्धा तथा धनुरधारी था।

जब तिन भेस जोग को लयो।।
राजपाट दसरथ को दयो।।
होत भयो वहि महा धनुरधर।।
तीन त्रिआन बरा जिह रुचि कर।।21।।

शब्दार्थ : जोग–योगी। धनुरधर–धनुष बाण धारण करने वाला। त्रिआन–तीन।
भावार्थ : राजा अज ने योगी का रूप धारण कर लिया। उन्होंने अपना राजपाट अपने बेटे दशरथ को सौंप दिया। दशरथ बड़ा शूरवीर और धनुरधारी था। उन्होंने अपनी इच्छा के अनुसार तीन रानियों के साथ प्रसंनता पूर्वक विवाह किया।

प्रिथम जयो तिह रामकुमारा।।
भरथ लच्छमन सत्र बिदारा।।
बहुत काल तिन राज कमायो।।
काल पाइ सुरपुरहि सिधायो।।22।।

शब्दार्थ : जयो–जन्में। सत्र बिदारा–शत्रुघन। लच्छमन–लक्ष्मण। बहुत काल–बहुत समय।
भावार्थ : राजा दशरथ की बड़ी रानी माता कौशल्या के गर्भ से राम जी का जन्म हुआ। दूसरी रानी कैकेयी ने भरत को तथा तीसरी रानी माता सुमित्रा ने लक्ष्मण तथा शत्रुघन को जन्म दिया। उन्होंने बहुत समय तक राज्य किया और समय पा कर स्वर्ग लोक चले गए।

सीअ सुत बहुरि भए दुइ राजा।।
राज पाट उनही कउ छाजा।।
मद्र देस एसूरज बरी जब।।
भांति भांति के जग्ग कीए तब।।23।।

शब्दार्थ : सीअ सुत–सीताजी के बेटे, लव कुश। पाट–राज सिंहासन। छाजा–सुंदर। मद्र–पंजाब। एसूरज–राजकुमारियां।
भावार्थ : सीता जी के दो बेटे लव तथा कुश हुए। उन्होंने बड़े अच्छे ढंग से अपना राज्य प्रशासन चलाया। उन्होंने पंजाब की राजकुमारियों से विवाह किया। उन्होंने अपने समय में अनेक प्रकार के यज्ञ किए।

तही तिनै बांधे दुई पुरवा।।
एक कसूर दुतीय लहुरवा।।
अधक पुरी ते दोऊ बिराजी।।
निरख लंक अमरावति लाजी।।24।।

शब्दार्थ : पुरवा–शहर। अमरावति–इंद्रपुरी। लाजी–लज्जाना।
भावार्थ : पंजाब में दोनों भाईयों ने दो शहर बसाये। लव ने लाहौर और कुश ने कसूर नामक शहर का निर्माण किया। वह दोनों ही शहर बड़े सुंदर और सुशोभित थे। उनकी सुंदरता के सामने लंका और इंद्रपुरी भी लज्जित थी।

बहुत काल तिन राज कमायो।।
जाल काल ते अंत फसायो।।
तिन ते पुत्र पौत्र जे वए।।
राज करत इह जग को भए।।25।।

शब्दार्थ : जाल काल–मृत्यु के जाल में फंसना। वए–हुए।
भावार्थ : लव कुश ने बहुत समय तक राज्य किया। अंत में मृत्यु के जाल में फंस गये। उनके पश्चात् उनके बेटे और पौत्रों ने

बहुत समय तक इस संसार मे राज्य किया।

कहां लगे ते बरन सुनाऊं।।
तिन के नाम न संखिआ पाऊं।।
होत चहूं जुग मै जे आए।।
तिनके नाम न जात गनाए।।26।।

शब्दार्थ : संखिआ–गिनती। गनाए–गिणती नहीं कर सकना।
भावार्थ : उनके इतिहास का वर्णन मैं कहाँ तक करूं। उनके नामों की गिनती मैं कहाँ तक करूं। चारों युगों में जितने भी राजा हुए, उनके नाम अगणित हैं और उनका वर्णन नहीं किया जा सकता।

जो अब तौ किरपा बल पाऊं।।
नाम जथा मत भाख सुनाऊं।।
कालकेत अरु कालराइ भन।।
जिन ते भए पुत्र घर अनगन।।27।।

शब्दार्थ : तौ–तुम्हारी। मत–बुद्धि। अनगन–अगणित।
भावार्थ : हे मेरे प्रभु ! यदि आप मुझ पर कृपा करो तो मैं अपनी बुद्धि बल से राजाओं के नामों के बारे में कुछ लिख सकूं। कुश की गद्दी पर कालकेतु और लव के सिंहासन पर कालराय राजा आसीन हुए। उन्होंने अनेक बेटों को जन्म दिया।

कालकेत भयो बली अपारा।।
कालराइ जिनि नगर निकारा।।
भाज सनौढ देस ते गए।।
तही भूप जा बिआहत भए।।28।।

शब्दार्थ : सनौढ–मथुरा भरतपुर से लेकर अमरकोट तक। भूप जा–राजकुमारी।
भावार्थ : कालकेतु बहुत वीर था। उसने कालराय को लाहौर से

निकाल दिया। कालराय भागकर सनौढ चला गया। वहाँ राजकुमारी से उसका विवाह हो गया।

तिहते पुत्र भयो जो धामा।।
सोढीराइ धरा तिहि नामा।।
बंस सनौढ त दिन ते थीआ।।
परम पवित्र पुरख जू कीआ।।29।।

शब्दार्थ : धामा–घर में। सनौढ–सोढ़ी वंश। थीआ–हुआ।

भावार्थ : उस राजकुमारी ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम सोढी राय रखा गया। उसके नाम से सोढी वंश की स्थापना हुई, जिसको परम पवित्र अकाल पुरुष परमात्मा ने स्वयं ही सजाया था।

ताते पुत्र पौत्र हुइ आए।।
ते सोढी सभ जगत कहाए।।
जग मै अधिक सु भए प्रसिद्धा।।
दिन दिन तिन के धन की ब्रिद्धा।।30।।

शब्दार्थ : प्रसिद्धा–मशहूर। ब्रिद्धा–वृद्धि।

भावार्थ : उस सोढी राय के जितने भी बेटे हुए वे सब सोढी कहलाए। वे संसार में बड़े प्रसिद्ध हुए और उनके धन-धान्य दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करने लगे।

राज करत भए बिबिध प्रकारा।।
देस देस के जीत त्रिपारा।।
जहां तहां तिह धरम चलायो।।
अत्र पत्र कह सीस ढुरायो।।31।।

शब्दार्थ : बिबिध–भांति-भांति। त्रिपारा–राजा। अत्र पत्र–छत्र।

भावार्थ : अनेक युक्तियों से उन्होंने कई देशों के राजाओं को

अपने अधीन कर लिया। उन्होंने हर जगह अपने घर्म का प्रचार और प्रसार किया। अपनी प्रसिद्धि का ताज पहना।

राजसूअ बहु बारन कीए।।
जीत जीत देसेसुर लीए।।
बाजमेध बहु बारन करे।।
सकल कलूख निजु कुल के हरे।।32।।

शब्दार्थ : राजसूअ–दिग्विजय करके महाराजधिराज की उपाधि के उपलक्ष में यज्ञ करना। देसेसुर–अन्य देशो के राजा। बाजमेध–अश्वमेध यज्ञ। कलूख–पाप। बारन–बहुत बार।
भावार्थ : देश देशांतर के राजाओं को जीतकर उन्होंने राजसूया यज्ञ किए। अनेक अश्वमेध यज्ञ किये। इस प्रकार अनेक यज्ञ करके उन्होंने अपने कुल के सभी पापों का नाश किया।

बहुर बंस मै बढो बिखाधा।।
मेट न सका कोऊ तिह्ह साधा।।
बिचरे बीर बनैतु अखंडल।।
गहि गहि चले भिरन रन मंडल।।33।।

शब्दार्थ : बिखाधा–झगड़ा। साधा–श्रेष्ठ। बनैतु–धनुष बाण वाले सैनिक। अखंडल–इंद्र अमर राजा। मंडल–मैदान।
भावार्थ : सोढी वंश के राजाओं मे लड़ाईयां बढ़ गईं। सोढी वंश को कोई भी मिटा न सका। जो सम्राट अपने आप को वीर समझते थे वे शस्त्र लेकर युद्ध क्षेत्र में कूद पड़े।

धन अरु भूम पुरातन बैरा।।
जिनका मूआ करति जग घेरा।।
मोह बाद अहंकार पसारा।।
काम क्रोध जीता जग सारा।।34।।

शब्दार्थ : धन–दौलत। बाद–झगड़ा।
भावार्थ : इस संसार मे धन और धरती लड़ाई की जड़ है। इस को प्राप्त करने के लिए मनुष्य मर मिटता है। मनुष्य मोह और अहंकार के मद में चूर है। काम, क्रोध, लोभ और मोह ने इस सारे संसार को जीत लिया है।

।।दोहरा।।

धंनि धंनि धन को भाखीऐ जाका जगतु गुलामु।।
सभ निरखत याको फिरै सभ चल करत सलाम।।35।।

शब्दार्थ : धन–दौलत। भाखीऐ–देख कर। गुलामु–दास।
भावार्थ : धन को धन्य-धन्य कह कर पुकारना चाहिए। जिस धन का सारा संसार ही दास है। इस धन को सभी ढूँढ़ते फिरते हैं और सभी इस को नमस्कार करते हैं।

।।चौपई।।

काल न कोऊ करन सुमारा।।
बैर बाद अहंकार पसारा।।
लोभ मूल इह जग को हूआ।।
जासो चाहत सभै को मूआ।।36।।

शब्दार्थ : काल–मृत्यु। सुमारा–गणना। लोभ–लालच।
भावार्थ : उस काल की कोई गिनती नहीं कर सकता। उस विरोध का मूल कारण लोभ और अहंकार है, जिस कारण सभी व्यक्ति आपस में द्वेष करके मरते हैं।

।। इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे सुभि बंस बरननं दुतीआ धिआइ।।2।। अफजू।।137।।

श्री बचित्र नाटक ग्रंथ का शुभ 'सोढी वंश' कहने वाला प्रसिद्ध दूसरा अध्याय समाप्त हुआ है। ठीक है।

3 लव-कुश युद्ध

इस अध्याय का आरम्भ युद्ध से होता है। यह युद्ध सोढीराय के बेटों और कालराय के बेटों के बीच में हुआ। सोढीराय के वंशजों ने कालराय के वंश को हरा दिया और पंजाब पर अधिकार कर लिया। लव के (कालराय) वंशज भागकर काशी चले गए और विद्याध्यापन के कार्य में जुट गए। वेदों का ज्ञान प्राप्त करके वे वेदी बन गए। कुश की संतान पंजाब में राज्य करते हुए अपना समय व्यतीत करने लगी। इस अध्याय में 1 चौपाई, 1 छपा, 9 नराज, 1 भुजंग, 13 भुजंग प्रयात, 27 रसावल छंद मिलाकर कुल 52 छंद है।

।। भुजंग प्रयात छंद।।

रचा बैर बादं बिधाते अपारं।।
जिसै साधि साकिओ न कोऊ सुधारं।।
बली कामरायं महा लोभ मोहं।।
गयो कउन बीरं सु याते अलोहं।।1।।

शब्दार्थ : बिधाते–ईश्वर। सुधारं–सुधारना। बली–शूरवीर। अलोहं–हथियारों से रक्षा करना।

भावार्थ : प्रभु जी ने अनेक प्रकार के वैर-विरोध और झगड़ों को आरम्भ कर दिया। जिन्हें कोई भी सुधारक सुधार नही सका। काम, लोभ और मोह अति बलिशाली राजे है। इनकी मार से कोई भी शूरवीर बच नहीं सकता।

तहा बीर बंके बकै आप मद्धं।।
उठै ससत्र लै लै मचा जुद्ध सुद्धं।।
कहूं खप्परी खोल खंडे अपारं।।
मचै बीर बैताल डउरू डकारं।।2।।

शब्दार्थ : बकै–ललकारना। ससत्र–शस्त्र। खप्परी–ढ़ाल। खोल–सिर पर पहनने वाले टोप। मचै–खुश हुए। डकारं–डुग डुगी बजाना।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में बांके सुंदर योद्धे एक दूसरे को युद्ध के लिए ललकारने लगे। युद्ध के लिए वीर हाथों में हथियार लेकर तैयार हो गये और घोर युद्ध होने लगा। कहीं अनगिनत ढालें, सिरों पर पहनने वाले टोप व खंडे टूटे पड़े है। वीर वेताल और भूत नाच रहे हैं। डमरू बजा-बजा कर भयानक आवाज़ें कर रहे हैं।

कहूं ईस सीसं पुऔ रुंड मालं।।
कहूं डाक डउरू कहूं कं बितालं।।
चवी चावडीअं किलंकार कंकं।।
गुथी लुत्थ जुत्थं बहे बीर बंकं।।3।।

शब्दार्थ : ईस–शिव जी। पुऔ–पिरोना। रुंड मालं–सिरों की माला। डाक–चुड़ैल। कहूं कं–बोलना। चवी–बोली। चावडीअं–चील। कंकं–गिद्ध, मांसाहारी पक्षी। लुत्थ जुत्थं–झुँड, गुत्थम-गुथा। बीर बंकं–सुंदर शूरवीर।

भावार्थ : कहीं शिव भोले जी युद्ध में कटे हुए सिरों की माला पिरो रहे हैं, कहीं चुड़ैले डमरू बजा रहीं है, कहीं से भूत और प्रेतों की आवाज़ें सुनाई दे रही हैं। कहीं पर चील बोल रही है और कहीं गिद्धें किलकारीयां मार रहीं हैं। कहीं पर योद्धाओं के शव परस्पर गुत्थम-गुत्था होकर पड़े हुये हैं।

परी कुट्ट कुट्टं रुले तच्छ मुच्छं।।
रहे हाथ डारे उभै उरध मुच्छं।।
कहूं खोपरी खोल खिंगं खतंगं।।
कहूं खत्रीअं खग्ग खेतं निखंगं।।4।।

शब्दार्थ : कुट्ट कुट्टं–मार काट। उभै–दोनो हाथ। उरध मुच्छं–ऊंची मूंछे। खोल–टोप। खतंगं–तीर। खत्रीअं–क्षत्रिय। खेतं–युद्ध क्षेत्र। निखंगं–तलवार।

भावार्थ : दोनों ओर के योद्धाओं में बड़ी मार काट हुई। कटे हुये शव इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। कई शूरवीर मृतकों के हाथ मूंछों को ऊँचा करते हुये वहीं धरे रह गये। खोपरियां, टोप, धनुष, वाण, तलवारें और भाले पड़े हैं।

चवी चांवडी डाकनी डाक मारै।।
कहूं भैरवी भूत भैरों बकारै।।
कहूं बीर बैताल बंके बिहारं।।
कहूं भूत प्रेतं हसै मास हारं।।5।।

शब्दार्थ : डाकनी–चुडैल। भैरों–रुद्र का सेवक। बकारै–बोलन। बिहारं–घूम रहे थे। मास हारं–मास खाना।

भावार्थ : युद्ध के मैदान मे कहीं चीलें बोल रही हैं, कहीं चुड़ैलें मास खा-खा कर डकार मार रहीं हैं, कहीं भैरवी, भूत और भैरों बोल रहे हैं, कहीं वीर और बेताल घूम रहे हैं, कहीं भूत प्रेत मास खा कर खुश हो रहे हैं।

।।रसावल छंद।।

महाबीर गज्जे।। सुणै मेघ लज्जे।।
झंडा गड्ड गाढे।। मंडे रोस बाढे।।6।।

शब्दार्थ : गाढे–गाड़ना। रोस–क्रोध।

भावार्थ : रणभूमि में बहादुर शूरवीर गरज रहे हैं। उनकी

भयानक गर्जना सुनकर बादल भी लज्जित हो रहे हैं। उन्होंने युद्ध क्षेत्र में मजबूत झण्डे गाढ़े हुए हैं। वे बड़े क्रोधित होकर आपस में लड़ रहे हैं।

क्रिपाणं कटारं।। भिरे रोस धारं।।
महांबीर बंकं।। भिरे भूम हंकं।।7।।

शब्दार्थ : भिरे–भिड़ना। भिरे–भिड़ना।

भावार्थ : अपने हाथ मे तलवार और कटार लेकर बड़े क्रोध मे एक दूसरे के साथ लड़ रहे हैं। बहादुर योद्धाओं की लड़ाई से धरती भी काँप उठी।

मचे सूर ससत्रं।। उठी झार असत्रं।।
क्रिपाणं कटारं।। परी लोह मारं।।8।।

शब्दार्थ : मचे–जुट जाना। झार–आग की लपटे। मारं–शस्त्रों की मार।

भावार्थ : बहादुर शूरवीर शस्त्रों के साथ जुटे हुए हैं। हथियारों के चलने से चिंगारियां निकल रही हैं। तलवारें और कटारें चल रही हैं। लोहे से लोहा टकराने से बहुत भयानक युंद्ध हो रहा है।

।।भुजंग प्रयात छंद।।
हलब्बी जुनब्बी सरोही दुधारी।।
बही कोप काती क्रिपाणं कटारी।।
कहूं सैहथीअं कहूं सुद्ध सेलं।।
कहूं सेल सांगं भई रेल पेलं।।9।।

शब्दार्थ : हलब्बी–हलब शहर की बनी हुई तलवार। जुनब्बी–जुनब शहर की बनी हुई तलवार। सरोही–सरोही नगर की बनी हुई तलवार। रेल पेलं–धक्का-मुक्का।

भावार्थ : हलब्ब और जनब्ब शहरों की बनी हुई तलवारें, सरोही नगर की बनी हुई तलवारें, कृपाण, कटार और दुधारी तलवारों से भयानक युद्ध हो रहा है। कहीं सैहथियों और सेलियों से वीर योद्धा युद्ध कर रहे है। कही सेले और बरछियों से युद्ध हो रहा है।

।।नराज छंद।।

सरोख सूर साजिअं।। बिसारि संक बाजिअं।।
निसंक ससत्र मारहीं।। उतार अंग डारहीं।।10।।

शब्दार्थ : सरोख–बरछिआं। बाजिअं–बजना। निसंक–बेधड़क।

भावार्थ : युद्ध में शूरवीर क्रोध से भरे हुए हैं। वो बेधड़क होकर लड़ रहे हैं। वह किसी की परवाह न करते हुये शस्त्रों से शत्रुओं का विनाश कर रहे हैं। उनके शरीर के अंगो को काट-काट कर फेंक रहे हैं।

कछू न कान राखहीं।। सु मारि मारि भाखहीं।।
सु हांक हाठ रेलियं।। अनंत ससत्र झेलियं।।11।।

शब्दार्थ : रेलियं–धकेलना।

भावार्थ : वे शूरवीर निष्ठुरता से मारो-मारो कहकर क्रोध से एक दूसरे को धकेल रहे हैं। अतः अगणित शस्त्रों के वार सह रहे हैं।

हज़ार हूर अंबरं।। बिरुद्धकै सु अंबरं।।
करूर भांत डोलही।। सु मार मार बोलही।।12।।

शब्दार्थ : हूर–अप्सरा। अंबरं–आकाश में।

भावार्थ : हजारों अप्सराएं आकाश में विचर रही हैं। जिस भी योद्धा को बहादुरी से मरते हुए देखतीं तो उसको आगे होकर वर लेतीं। शूरवीर भयानक रूप धर घूम रहे हैं और मारो-मारो का स्वर निकाल रहे हैं।

कहूं कि अंगि कटीअं।। कहूं सरोह पट्टीअं।।
कहूं सु मास मच्छीअं।। गिरे सु तच्छ मुच्छीअं।।13।।

शब्दार्थ : कहूं कि–किसी की। सरोह–बाल।

भावार्थ : रणभूमि में किसी योद्धा के अंग कट गए हैं, किसी के बाल जड़ से उखड़े पड़े हैं। किसी का शरीर हथियारों से छलनी हो गया हैं तथा किसी का शरीर कटा हुआ पड़ा था।

ढमक्क ढोल ढालयं।। हरोल हाल चालयं।।
झटाक झट्ट बाहीअं।। सु बीर सेन गाहीअं।।14।।

शब्दार्थ : ढमक्क–ढम-ढम का स्वर। हरोल–सेना में सब से आगे वाली टुकड़ी। गाहीअं–लताड़ना।

भावार्थ : युद्ध में ढ़ोल और ढ़ालों का ढम-ढम का स्वर हो रहा है। सेना की सब से आगे वाली टुकड़ी आगे बढ़ने के लिए चल पड़ी। शूरवीर बड़ी वीरता से हथियार चलाते और सेना को लताड़ते हैं।

नवं निसाण बाजिअं।। सु बीर धीर गाजिअं।।
क्रिपाण बाण बाहही।। अजात अंग लाहही।।15।।

शब्दार्थ : नवं–नये। निसाण–नगाड़े। अजात–अचानक।

भावार्थ : युद्ध में नगाड़े बज रहे हैं। बड़े धैर्यशील शूरवीर भी गरज रहे हैं। वे तलवार और तीर चला रहे हैं और अचानक एक दूसरे का अंग काटकर फेंक देते थे।

बिरुद्ध क्रुद्ध राजियं।। न चार पैर भाजियं।।
संभार ससत्र गाजही।। सु नाद मेध लाजही।।16।।

शब्दार्थ : बिरुद्ध–शत्रुता। लाजही–शर्मिन्दा होना।

भावार्थ : बड़े क्रोध से वीर आगे बढ़ रहे हैं। चार पैर भी पीछे नही होते। वे अपने शस्त्र पकड़कर ललकार रहे हैं। उनकी

आवाज के आगे बादलों की गर्जना भी लज्जित हो जाती है।

हलंक हांक मारही।। सरक्क ससत्र झारही।।
भिरे बिसारि सोकियं।। सिधारि देवलोकियं।।17।।

शब्दार्थ : हलंक–दिल हिला देने वाली हुंकार। सरक्क–झट।
भावार्थ : युद्ध में शूरवीर दिल हिला देने वाली हुंकार करते हैं। बड़ी स्फूर्ति से एक दूसरे पर हथियार चला रहे हैं। मृत्यु का भय भुला कर लड़ते हुये वीरगति को प्राप्त कर रहे हैं।

रिसे बिरुद्ध बीरियं।। सुमारि झारि तीरियं।।
सबद संख बज्जियं।। सु बीर धीर सज्जियं।।18।।

शब्दार्थ : बीरियं–भाई। झारि–चलाए।
भावार्थ : भाई ही क्रोधित हो कर एक दूसरे के विरुद्ध तीरों की बौछार कर रहे हैं। वह शंख बजा रहे हैं और धैर्यवान योद्धे शोभित हो रहे हैं।

।।रसावल छंद।।

तुरी संख बाजे।। महांबीर साजे।।
नचे तुंद ताजी।। मचे सूर गाजी।।19।।

शब्दार्थ : तुंद–तेज। गाजी–बहादुर।
भावार्थ : युद्ध के मैदान में नरसिंघे और शंख बज रहे हैं। महान योद्धे सुशोभित हो रहे हैं। तेज घोड़े उछल रहे हैं। शूरवीर योद्धे लड़ रहे हैं।

झिमी तेज तेगं।। मनो बिज्ज बेगं।।
उठै नद्द नादं।। धुनं त्रिबिखादं।।20।।

शब्दार्थ : झिमी–चमकती हुई तेग। बिज्ज–बिजली। बेगं–तेज। नद्द–धौंसे। नादं–स्वर। त्रिबिखादं–एक रस।

भावार्थ : चमकती हुई तेज तलवारें ऐसे प्रतीत हो रही हैं मानो बादलों में तेजी से चमकती हुई बिजली। बड़े-बड़े योद्धाओं की आवाज़ें एक ही रस में आ रही हैं।

तुटै खग्ग खोलं।। मुखं मार बोलं।।
धका धीक धक्कं।। गिरे हक्क बक्कं।।21।।

शब्दार्थ : खग्ग–तलवार। बक्कं–हक्का बक्का (हैरान होना)।
भावार्थ : शूरवीरों की तलवारें और टोप टूट गए हैं। वह अपने मुख से मारो, मारो का स्वर निकालते हैं। युद्ध क्षेत्र में हर तरफ से धक्कम-धक्का हो रहा है। शूरवीर हैरान होकर एक दूसरे पर गिर रहे हैं।

दलं दीह गाहं।। अधो अंग लाहं।।
प्रयोघं प्रहारं।। बकै मार मारं।।22।।

शब्दार्थ : दीह–बहुत बड़ा। अधो–बीच में। प्रयोघं–बहुत तीर चलाता हैं।
भावार्थ : शूरवीर बड़े-बड़े दलों को रौंद रहे हैं। वे शत्रुओं के शरीरों को आधा-आधा काट कर फेंक रहे हैं। वे अत्याधिक शस्त्र और तीर चला रहे हैं और मारो-मारो की आवाज़ आ रही हैं।

नदी रकत पूरं।। फिरी गैणि हूरं।।
गजे गैण काली।। हसी खप्पराली।।23।।

शब्दार्थ : रकत–खून। गैणि–आकाश। हूरं–अप्सरा। काली–देवी। खप्पराली–खप्परवाली।
भावार्थ : युद्ध क्षेत्र में वीरों का रक्त नदी की भांति बह रहा है। आकाश में अपसराएं इधर-उधर घूम रही हैं। आकाश में कालका देवी गरज उठीं और योद्धाओं के खून खप्पर भर कर पीने लगीं तथा जोर-जोर से हंसने लगी।

महांसूर सोहं।। मंडे लोह क्रोहं।।
महां गरब गज्जियं।। धुणं मेघ लज्जियं।।24।।

शब्दार्थ : महांसूर–बड़े-बड़े योद्धा। मंडे–करते। लोह–युद्ध।
भावार्थ : युद्ध भूमि में बड़े-बड़े योद्धा सुशोभित हो रहे हैं। वे क्रोधित होकर बड़े-बड़े हथियारों से युद्ध करते हैं। वे बड़े अहंकार से गर्जते और उनकी आवाज़ के समक्ष बादल भी लज्जित हो जाते।

छके लोह छक्कं।। मुखं मार बक्कं।।
मुखं मुच्छ बंकं।। भिरे छाड संकं।।25।।

शब्दार्थ : लोह–शस्त्र। छक्कं–सजावट। बक्कं–बोलना। बंकं–टेढ़ा।
भावार्थ : शूरवीर लोहे के शस्त्रों से सजे हुए हैं और मारो मारो कह कर चिल्ला रहे हैं। उनकी मूंछें सुंदर और टेढ़ी हैं। वे निर्भय हो कर लड़ रहे हैं।

हकं हाक बाजी।। घिरी सैण साजी।
चिरे चार बूके।। मुखं मार कूके।।26।।

शब्दार्थ : हकं हाक–ललकारना। चिरे–क्रोध भरे।
भावार्थ : युद्ध भूमि में वीर अपने विरोधी दल को ललकार रहे हैं। सजी हुई सेना युद्ध भूमि में आ गई। शूरवीर क्रोधित होकर पास-पास आ रहे हैं और मारो-मारो कह कर चिल्ला रहे हैं।

रुके सूर सांगं।। मनो सिंध गंगं।।
ढहे ढाल ढक्कं।। क्रिपाणं कड़क्कं।।27।।

शब्दार्थ : सांगं–बरछिआं। ढक्कं–देना। कड़क्कं–टूटना।
भावार्थ : युद्ध में शूरवीर बरछिओं के साथ ऐसे मिले हुए हैं जेसे समुद्र में गंगा। वे अपनी रक्षा ढ़ालों से करते और तलवारें टूट

जाती हैं।

हकं हाक बाजी।। नचे तुंद ताजी।।
रसे रुद्र पागे।। भिरे रोस जागे।।28।।

शब्दार्थ : हकं हाक–ललकारना। बाजी–प्रकट होना। पागे–रंग में रंगे हुए।

भावार्थ : युद्ध में एक दूसरे को ललकारने की आवाज़ें आ रही हैं। योद्धा रौद्र रस में रंगे हुए हैं और क्रोधित होकर एक दूसरे से भिड़ जाते हैं।

गिरे सुद्ध सेलं।। भई रेल पेलं।।
पलं हार नच्चे।। रणं बीर मच्चे।।29।।

शब्दार्थ : पलं हार–मासांहारी प्राणी। मच्चे–जुट गये।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में शूरवीर बरछे चलाकर एक दूसरे से भिड़ गए। मासांहारी जीव प्रसंन होकर नाच रहे हैं क्योंकि उन्हें मांस (युद्धभूमि में पड़े हुये शवों का भोजन) पर्याप्त मात्रा में मिल रहा हैं। युद्ध में वीर बड़े रोष और जोश के साथ लड़े।

हसे मास हारी।। नचे भूत भारी।।
महां ढीठ ढूके।। मुखं मार कूके।।30।।

शब्दार्थ : ढीठ–निडर। ढूके–पास आना।

भावार्थ : मासांहारी प्राणी खुश होकर हंस रहे हैं। भूतों-प्रेतों की टोलियां नाच रही हैं। निडर योद्धा एक दूसरे के निकट आ रहे हैं और मारो-मारो कहकर चिल्ला रहे हैं।

गजै गैण देवी।। महांअंस भेवी।।
भले भूत नाचं।। रसं रुद्र राचं।।31।।

शब्दार्थ : देवी–कालका चंडी देवी। भेवी–महाकाल का अंश।

भावार्थ : आकाश में चंडी देवी गरज रही है जो महाकाल के

अंश से उत्पन्न हुई है। भूत-प्रेत बड़े जोश से युद्ध का दृश्य देख कर नाच रहे हैं, वे भी रौद्र रस में रंगे हुए हैं।

भिरै बैर रुज्झै।। महां जोध जुज्झै।।
झंडा गड्ड गाढे।। बजे बैर बाढे।।32।।

शब्दार्थ : भिरै–भिड़ जाना। जुज्झै–मर गए। गाढे–मजबूत। बाढे–बढ़ जाना।

भावार्थ : शूरवीर वैर-विरोध की भावना लिए हुये एक दूसरे से लड़ रहे थे। बड़े-बड़े महान योद्धा लड़ाई में वीरगति को प्राप्त हो गए। उन्होंने अपने मजबूत झण्ड़े गाड़ दिये। उनमें आपस में वैर-विरोध की भावना बहुत बढ़ गई।

गजं गाह बाधे।। धनुरबान साधे।।
बहे आप मद्धं।। गिरे अद्धं अद्धं।।33।।

शब्दार्थ : गजं गाह–सिर पर गजगाह (कलगी)। धनुरबान–धनुषबाण।

भावार्थ : शूरवीरों ने अपने सिर पर कलगियां बांधी हुई हैं। उन्होंने हाथों में तीर कमान पकड़े हुए हैं। आमने-सामने खड़े होकर तीर चला रहे हैं। लड़ते-लड़ते उनके शरीर टुकड़े-टुकड़े होकर गिर रहे हैं।

गजं बाज जुज्झै।। बली बैर रुज्झै।।
त्रिभै ससत्र बाहै।। उभै जीत चाहै।।34।।

शब्दार्थ : गजं–हाथी। बाज–घोड़े। जुज्झै–भिड़ गए। त्रिभै–निडर। उभै–दोनों ओर।

भावार्थ : हाथी और घोड़ों पर सवार वीर आपस में लड़ रहे हैं। योद्धा निडर होकर शस्त्र चला रहे हैं। दोनों ओर के वीर सैनिक अपनी जीत की आकांक्षा कर रहे हैं।

गजे आन गाजी।। नचे तुंद ताजी।।
हकं हाक बज्जी।। फिरे सैन भज्जी।।35।।

शब्दार्थ : गाजी–वीर। तुंद–तेज।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में सूरमे गरज रहे हैं। घोड़े बड़े तेज दौड़ रहे हैं। भयंकर शोर मचा हुआ हैं। सेना भाग दौड़ कर हाहाकार कर रही हैं।

मदं मत्त माते।। रसं रुद्र राते।।
गजं जूह साजे।। भिरे रोस बाजे।।36।।

शब्दार्थ : मंद–शराब। माते–नशे में। रुद्र–रोश।

भावार्थ : योद्धा मदिरा के नशे में मानो मस्त होकर घूम रहे हैं। वे क्रोध से लाल हैं। हाथियों के झुण्ड सजे हुए हैं। सैनिक क्रोध में आकर एक दूसरे से भिड़ रहे हैं।

झमी तेज तेगं।। घणं बिज बेगं।।
बहे बार बैरी।। जलं जिउ गंगैरी।।37।।

शब्दार्थ : झमी–चमकी। घणं–बिजली का वेग। गंगैरी–पानी पर चलने वाला प्राणी।

भावार्थ : रणभूमि में तलवारें ऐसे चमक रही हैं जैसे बादलों में बिजली बड़ी तेजी से चमकती है। शत्रुओं के शस्त्र ऐसे स्फूर्ति से चल रहे हैं जैसे गंगेरी पानी पर दौड़ती है।

अपो आप बाहं।। उभै जीत चाहं।।
रसं रुद्र राते।। महां मत्त माते।।38।।

शब्दार्थ : बाहं–शस्त्र। उभै–दोनों ओर। माते–नशे में।

भावार्थ : युद्ध भूमि में वीर योद्धा एक दूसरे पर शस्त्र चला रहे हैं। अपनी जीत की उमंग में एक दूसरे पर वार कर रहे हैं। वे रौद्र रस में रंगे हुए हैं और युद्ध के नशे में चूर हैं।

।।भुजंग छंद।।

मचे बीर बीरं अभूतं भयाणं।।
बजी भेर भुंकार धुक्के निसाणं।।
नवं नद्द नीसाण गज्जे गहीरं।।
फिरै रुंड मुंडं तनं तच्छ तीरं।।39।।

शब्दार्थ : मचे–लड़ते हुए। अभूतं–आश्चर्य। बजी–बजना। भुंकार–शब्द। गहीरं–नये स्वर। रुंड मुंडं–सिर और धड़ अलग-अलग होना।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में शूरवीरों के साथ वीर योद्धा लड़ते हुए भयानक लग रहे हैं। भेरियों की हुंकार हो रही है और नये-नये नगाड़ों का गम्भीर स्वर सुनाई दे रहा है। कहीं शूरवीरों के सिर, कहीं धड़ और कहीं तीरों से बिधे हुए शरीर पड़े हैं।

बहे खग्ग खेतं खिआलं खतंगं।।
रुले तच्छ मुच्छं महा जोध जंगं।।
बंधै बीर बाना बडे अैंठिवारे।।
घुमै लोह घुट्टं मनो मत्तवारे।।40।।

शब्दार्थ : खग्ग–पक्षी। खेतं–युद्ध के मैदान में। खतंगं–तीर। अैंठिवारे–अभिमानी। मत्तवारे–मतवाले।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में तीर ऐसे चल रहे थे जैसे पक्षी उड़ रहे हों। वीर योद्धा युद्ध में कटे-पिटे हुए बिखरे पड़े हैं। बड़े अभिमानी योद्धा तीरों का गठर बांध कर युद्ध करने के लिए तैयार हो कर घूम रहे हैं। वे लोहे के शस्त्रों को अपने शरीर पर सुसज्जित कर मस्ती में घूम रहे हैं।

उठी कूह जूहं समर सार बज्जियं।।
किधो अंत के काल को मेघ गज्जियं।।
भई तीर भीरं कमाणं कड़क्कियं।।

बजे लोह क्रोहं महां जंगि मच्चियं।।41।।

शब्दार्थ : कूह–कूकना। जूहं–लडते हैं। सार–लोहा। लोह–शस्त्र।

भावार्थ : युद्ध में लोहे से लोहा टकराने से भयानक स्वर पैदा हो रहे हैं। ऐसे प्रतीत होता है जैसे प्रलय के बादल गरज रहे हों। तीरों की बौछार हो रही है। कमानें कड़क रही हैं। बड़े क्रोध से शस्त्र चल रहे हैं। भयानक लड़ाई हो रही हैं।

बिरच्चे महां जंग जोधा जुआणं।।
खुले खग्ग खत्री अभूतं भयाणं।।
बली जुज्झ रुज्झै रसं रुद्र रत्ते।।
मिले हत्थ बक्खं महा तेल तत्ते।।42।।

शब्दार्थ : खग्ग–खड़ग। बक्खं–कमर। अभूतं–पीछे न हटे।

भावार्थ : महायुद्ध में बहादुर वीर घूम रहे हैं। उन्होंने हाथों में नंगी तलवारें पकड़ी हुई हैं। उनका यह आश्चर्य चकित करने वाला एवं भयानक रूप पहले कभी नही बना। बहादुर योद्धा रोद्र रस में रंगे हुए हैं। एक दूसरे की कमर में हाथ डाल कर मल्ल युद्ध कर रहे हैं। वे क्रोध से लाल हो रहे हैं।

झमी तेज तेगं सु रोसं प्रहारं।।
रुले रुंड मुंडं उठी ससत्र झारं।।
बबक्कंत बीरं भभक्कंत घायं।।
मनो जुद्ध इंद्रं जुटिओ ब्रितरायं।।43।।

शब्दार्थ : झमी–चमकी। घायं–घायल, जख्मी। ब्रितरायं–वृतासुर राक्षस।

भावार्थ : वीरों के हाथों में तेज तलवारें चमक रही हैं, वे बड़े क्रोध से तलवारें चला रहे हैं। कहीं धड़ और कहीं सिर बिखरे पड़े थे, कहीं शस्त्रों के टकराने से आग निकल रही हैं और कहीं योद्धा गरज रहे हैं। कहीं योद्धाओं के घायल हुए शरीरों

से रक्त नदी की तरह निकल रहा है। ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे इंद्र और वृतासुर राक्षस के बीच युद्ध हो रहा हो।

महां जुद्ध मच्चियं महां सूर गाजे।।
अपो आप मैं ससत्र सों ससत्र बाजे।।
उठे झार सांगं मचे लोह क्रोहं।।
मनो खेल बासंत माहंत सोहं।।44।।

शब्दार्थ : क्रोहं–क्रोध। बासंत–बसंत। माहंत–महीना।

भावार्थ : बड़ा भयानक युद्ध हो रहा है जिसमें बड़े-बड़े वीर गरज रहे हैं। आमने-सामने होकर शूरवीरों के शस्त्रों से शस्त्र टकरा रहे हैं। बरछियों से चिंगारियां निकल रही हैं और वीर सेनिक क्रोध से भरे शस्त्रों से लड़ते हुए रक्त से लथ-पथ ऐसे प्रतीत हो रहे हैं जैसे बसंत के मास में होली खेलते हुए शोभित हो रहे हों।

।।रसावल छंद।।

जिते बैर रुज्झं।। तिते अंत जुज्झं।।
जिते खेत भाजे।। तिते अंति लाजे।।45।।

शब्दार्थ : रुज्झं–जुट जाना। जुज्झं–मारे गए। खेत–युद्ध का मैदान।

भावार्थ : जितने वीर सैनिक युद्ध में जुटे हुए हैं वे अंत में लड़ते-लड़ते शहीद हो गए और जो युद्ध के मैदान से डर कर भाग खड़े हुए वे अंत में लज्जित हुए।

तुटे देह बरमं।। छुटी हाथ चरमं।।
कहूं खेत खोलं।। गिरे सूर टोलं।।46।।

शब्दार्थ : बरमं–संजोए। चरमं–ढाल। खोलं–टोप। टोलं–समूह।

भावार्थ : योद्धाओं के शरीरों पर संजोए टूटी पड़ी हैं। उनके

हाथों से ढालें भी छूट गई हैं। युद्ध के मैदान में कहीं शूरवीरों के टोप और कहीं उनके शरीर के टुकड़े बिखरे पड़े हैं।

कहूं मुछ मुक्खं।। कहूं ससत्र सक्खं।।
कहूं खोल खग्गं।। कहूं परम पग्गं।।47।।

शब्दार्थ : सक्खं–खाली। खोल–म्यान (तलवार की)। पग्गं–पगड़ियाँ।

भावार्थ : रणक्षेत्र में कहीं मूंछों वाले योद्धे गिरे पड़े हैं, कहीं खाली शस्त्र पड़े हैं और कहीं तलवारें गिरी पड़ीं हैं। कहीं सुंदर पगड़ियां बिखरी पड़ीं हैं।

गहे मुच्छ बंकी।। मंडे आन हंकी।।
ढका ढुक्क ढालं।। उठे हाल चालं।।48।।

शब्दार्थ : बंकी–टेढ़ी मूंछें।

भावार्थ : रणभूमि में वीर अपनी टेढ़ी मूंछों पर हाथ फेर कर बड़े अभिमान से शत्रुओं को ललकारते हैं। ढालों का सहारा ले कर वीर शीघ्र ही उठ खड़े होते हैं।

।।भुजंग छंद।।

खुले खग्ग खूनी महांबीर खेतं।।
नचे बीर बैतालयं भूत प्रेतं।।
बजे डंक डउरू उठे नाद संखं।।
मनो मल्ल जुट्टे महां हत्थ बक्खं।।49।।

शब्दार्थ : खुले खग्ग–नंगी तलवारें। डउरू–डमरू।

भावार्थ : नंगी तलवारें हाथ में लेकर वीर घूम रहे हैं। रणभूमि में वीर, बेताल, भूत-प्रेत खुशी से नाच रहे हैं। शंख बज रहे हैं। डमरू और डुगडुगी की आवाज़ें आ रही हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे पहलवान एक दूसरे की कमर में हाथ डाल कर मल्ल

युद्ध में एक-दूसरे को गिराने की कोशिश कर रहे हों।

।।छपै छंद।।

जिनि सूरन संग्राम सबल सामुहि है मंडिओ।।
तिन सुभटन ते एक काल कोऊ जिअत न छड्डिओ।।
सभ खत्री खग्ग खंड खेत ते भू मंडप अहुट्टे।।
सार धार धर धूम मुकत बंधन ते छुट्टे।।
है टूक टूक जुज्झे सभै पाव न पाछै डारीयं।।
जैकार अपार सुधार हूअं बासव लोक सिधारीयं।।50।।

शब्दार्थ : सबल–बलशाली। सामुहि–सामने। सुभटन–सूरमा, वीर। भू मंडप–नीचे, ज़मीन पर। आहुट्टे–इकठ्ठे हुए। धूम मुकत–धुएं के बिना। टूक–टुकड़े। जुज्झे–लड़ मरे। सुधार–अच्छी तरह। बासव लोक–इंद्र लोक, स्वर्ग। सिधारीयं–स्वर्ग सिधारना।

भावार्थ : जिन योद्धाओं ने आमने-सामने होकर बड़ी बहादुरी से युद्ध किया, काल ने उनमें से किसी को भी जीवित नहीं छोड़ा। सभी क्षत्रीय, योद्धा तीर तलवारों के साथ रण रूपी मंडप में इकठ्ठे हो गए। वे शस्त्रों की धार से निकली धुंए रहित आग को सहते हुए बंधनों से छूट कर मुक्त हो गए। सभी योद्धा टुकड़े-टुकड़े होकर शहीद हो गए। उनमें से किसी ने भी एक पग पीछे हटने की कोशिश नहीं की। उन शहीदों की जय जयकार हुई और वे स्वर्गलोक चले गए।

।।चउपई।।

इह बिध मचा घोर संग्रामा।।
सिधए सूरि सूरि के धामा।।
कहा लगै वह कथो लराई।।
आपन प्रभा न बरनी जाई।।51।।

शब्दार्थ : सिधए—मर गए। कहा लगै—कहां तक। प्रभा—बड़प्पन, प्रशंसा।

भावार्थ : इस प्रकार भयानक युद्ध हुआ। शूरवीर शहीद होते चले गए। इस युद्ध का वर्णन मैं कहाँ तक करूं, क्योंकि अपने वंश की प्रशंसा अपने आप नहीं की जा सकती।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

लवी सरब जीते कुसी सरब हारे।।
बचे जे बली प्रान लै कै सिधारे।।
चतुर बेद पठियं कीयो कासि बासं।।
घनै बरख कीने तहां ही निवासं।।52।।

शब्दार्थ : लवी—लव के वंशज। कुसी—कुश के वंशज। सिधारे—भाग गए। पठियं—पढ़ना। कासि—काशी (बनारस)। घनै बरख—बहुत साल तक।

भावार्थ : लव के वंशज पुत्र-पौत्र सभी युद्ध में विजयी हुए तथा कुश के वंशज सभी हार गए। कुश के वंश में जो योद्धा बच गए वे अपनी जान बचाकर भाग खड़े हुए और काशी में जा बसे। वहाँ जाकर उन्होंने चारों वेदों का अध्ययन किया। बहुत समय तक काशी में रहे।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे लवी कुसी जुद्ध बरननं नामु त्रितीआ धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।3।। अफजू।।189।।

शब्दार्थ : त्रितीआ—तीसरा। मसत—जो सबसे उत्तम है। सुभ—सम्पूर्ण हो गया।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने इस तीसरे अध्याय में लव-कुश वंश के भयानक युद्ध का वर्णन किया है। यह अध्याय यही समाप्त होता है तथा पढ़ने योग्य है। शुभ है। इसमें कुल 189 छंदों का वर्णन है।

4 बेद पाठ भेंट राज

कुश के वंशज कालकेतु की संतान वेदों का अध्ययन करके इतने विद्वान हो गए कि वेद वक्ता होने के कारण उनका नाम वेदी हो गया। उधर लव के वंशज सोढी को जब मालूम हुआ कि उनके भाई वेदों का ज्ञान प्राप्त करके विद्वान हो गए हैं उन्होंने पुरानी शत्रुता को भुलाकर अपने भाईयों को लाहौर में निमन्त्रित किया। उन्होंने सोढियों का निमंत्रण स्वीकार कर लिया। वे लाहौर उनको मिलने के लिए आ गए। सोढियों ने अपने वेदी भाईयों से वेदों का पाठ सुना। उन्होंने सामवेद, ऋगवेद, यर्जुवेद, आदि का पाठ सुना तथा उनसे वेदों की व्याख्या भी सुनी। अथर्ववेद का पाठ सुना तब उनके सारे पाप नष्ट हो गए। वे अत्यंत प्रसंन हुए। उन्होंने अपना सारा राजपाट वेदियों को सौंप दिया और भजन करने के लिए वन में चले गए। वेदी राजपाट पाकर अत्यंत प्रसंन हुए। उन्होंने प्रसंन होकर सोढियों को वरदान दिया कि जब भी श्री गुरु नानक देव जी उनके वंश में अवतार लेंगे तो चौथा गुरु सोढी वंश में अवतार लेगा। इस अध्याय में १ अड़िल, २ चौपाईयाँ, ३ भुजंग प्रयात, ४ रसावल छंद, कुल मिलाकर १० छंद हैं।

।। भुजंग प्रयात 'छंद ।।

जिनै बेद पट्ठिओ सु बेदी कहाए।।
तिनै धरम के करम नीके चलाए।।
पठे कागदं मद्र राजा सुधारं।।
अपो आपमो बैर भावं बिसारं।।1।।

शब्दार्थ : पट्ठिओ–पढ़ना। नीके–अच्छी तरह। पठे–भेजे। कागदं–पत्र। मद्र राजा–मद्र देश के सोढी राजा। सुधारं–अच्छी तरह।

भावार्थ : काशी जाकर जिन्होंने वेदों का अध्ययन किया वे वेदी (बेदी) कहलाए। उन्होंने शुभ धर्म-कर्म करना आरम्भ कर दिया। इधर पंजाब के सोढी वंशज राजा ने उनको पत्र लिखा कि हमारा वंश एक ही है इसलिए हमें आपसी वैर विरोध को भूल जाना चाहिए।

व्रिपं मुकलियं दूत सो कासि आयं।।
सभै बेदियं भेद भाखे सुनायं।।
सभै बेद पाठी चले मद्र देसं।।
प्रनामं कीयो आनकै कै नरेसं।।2।।

शब्दार्थ : व्रिपं–सोढी राजा। मुकलियं–भेजा हुआ। कासि–काशी। बेदियं–कहकर। सुनायं–सुनाया। नरेसं–राजा।

भावार्थ : सोढी राजा द्वारा भेजा हुआ दूत काशी आया। उसने सोढी राजा का संदेश वेदियों को पढ़कर सुनाया। इस निमंत्रण के मिलने से सभी वेदी पंजाब के लिए रवाना हो गए। सब ने वहाँ पहुँच कर राजा को प्रणाम किया।

धुनं बेद की भूप ताते कराई।।
सभै पास बैठे सभा बीच भाई।।
पड़े सामबेदं जुजरबेद कत्थं।।

रिंगबेद पठियं करे भाव हत्थं।।3।।

शब्दार्थ : धुनं–सुर मर्यादानुसार।

भावार्थ : सोढी राजा ने उन से वेदों का पाठ सुर में सुना। सब भाई मिलकर सभा में बैठ गए। पहले वेदियों ने सामवेद का उच्चारण अर्थ सहित किया। फिर यजुर्वेद का पाठ किया। ऋगवेद का पठन किया और अर्थ समझाया। हाथों के संकेत तथा मुद्राओं से उनका भाव समझाया।

।।रसावल छंद।।

अथरबेद पढ़्ठियं।। सुणे पाप नठ्ठियं।।
रहा रीझ राजा।। दीआ सरब साजा।।4।।

शब्दार्थ : सरब–सारा। साजा–राजपाट की सामग्री।

भावार्थ : अथर्ववेद का पाठ सुनकर राजा के सारे पाप नष्ट हो गए। राजा उन वेद पाठियों से अत्यंत प्रसंन हुआ। उसने अपना सारा राजपाट वेदियों को सौंप दिया।

लयो बन्नबासं।। महां पाप नासं।।
रिखं भेस कीयं। तिसै राज दीयं।।5।।

शब्दार्थ : रिखं–ऋषि। तिसै–उन वेद पाठियों को।

भावार्थ : सोढी राजा ने बनवास ले लिया। उसके सभी पाप नष्ट हो गए। राजा ने स्वयं ऋषियों का वेश धारण किया और राजपाट वेदी भाइयों को सौंप दिया।

रहे होर लोगं।। तजे सरब सोगं।।
धनं धाम तिआगे।। प्रभं प्रेम पागे।।6।।

शब्दार्थ : होर–रोकना। पागे–रंग गए।

भावार्थ : वन जाते समय लोगों ने राजा से बहुत आग्रह किया और विचलित करने की चेष्टा की परंतु उसने सारी चिंताएँ

छोड़कर धन और धाम, त्याग दिया और अपने आप को उस परमपिता परमात्मा की भक्ति के रंग मे रंग लिया।

।।अड़िल।।

बेदी भयो प्रसंन राज कह पाइकै।।
देत भयो बरदान हीअै हुलसाइकै।।
जब नानक कल मै हम आन कहाइहै।।
हो जगत पूज करि तोहि परमपद पाइ है।।7।।

शब्दार्थ : हुलसाइकै–प्रसंन होकर। कल मै–कलियुग में। परमपद–ऊँचा दर्जा।

भावार्थ : वेदी सारा राज प्राप्त करके अति प्रसंन हुए, उन्होंने सोढी राजा को प्रसंनचित होकर यह वरदान दिया कि हे राजन ! जब मैं कलियुग में अवतार लेकर गुरु नानक नाम कहलाऊगां तब तुम्हें इस जगत में पूजने योग्य बनाकर स्वयं उत्तम पदवी प्राप्त करुँगा।

।।दोहरा।।

लवी राज दे बन गए बेदीअन कीनो राज।।
भांति भांति तनि भोगीयं भूअ का सकल समाज।।8।।

शब्दार्थ : लवी–लव के वंशज। भूअ–संसार।

भावार्थ : लव वंश के सोढी राजा वेदियों को राजपाट देकर स्वयं भक्ति करने वन को चले गए तथा वेदियों ने पीछे बड़ी कुशलता से राज पाट संभाला। उन्होंने इस पृथ्वी पर हर प्रकार के सुख भोगे।

।।चउपई।।

त्रितिय बेद सुनबे तुम कीआ।।
चतुर बेद सुनि भूअ को दीआ।।

तीन जनम हमहूं जब धरि है।।
चौथे जनम गुरू तुहि करि है।।9।।

शब्दार्थ : त्रितिय–तीन। भूअ–ज़मीन।

भावार्थ : सोढी राजा से वन जाते समय वेदियों ने कहा,"हे राजन ! आपने तीन वेदों को बिना कुछ दिये सुने चौथा वेद सुनकर हमें राज पाट दे दिया। इसी प्रकार हम भी इस पृथ्वी पर जब तीन जन्म लेंगे, चौथे जन्म में तुम्हें गुरु बनाएँगे।

उत राजा काननहि सिधायो।।
इत इन राज करत सुख पायो।।
कहा लगे करि कथा सुनाऊ।।
ग्रंथ बढन ते अधिक डराऊ।।10।।

शब्दार्थ : उत–उधर। काननहि–जंगल। इत–इधर। इन–वेदी।

भावार्थ : सोढी राजा जंगल में चले गए। इधर वेदियों ने राज करते हुए अनेक सुख प्राप्त किए। गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं इस कथा ग्रंथ को मैं इसे कितना विस्तार के साथ वर्णन करूँ क्योंकि ग्रंथ के विस्तृत होने की शंका है।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे बेद पाठ भेट राज चतुरथ धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।4।। अफजू।।199।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ का वेद पाठ की भेंटा राज्य (वेदियों को मिल जाने का प्रसंग) का चौथा अध्याय संपूर्ण हुआ। शुभ है। और 199 छंद पूरे हुए।

5 पातशाही वर्णन

वेदियों का आपसी खानदानी झगड़ा बढ़ गया। वे आपस में ही लड़ने लगे। उनके आपसी झगड़ों के कारण उनके पास जो था सब छिन गया। वेदी कुल में श्री गुरु नानक देव जी ने अवतार धारण किया और भूली भटकी जनता को धर्म का मार्ग दिखाया तथा पाखण्ड, भ्रम और संदेह को दूर किया। श्री गुरु नानक देव जी ने गुरुगद्दी गुरू अंगद देव जी को सौंप दी और देहधारी गुरू की परंपरा चल पड़ी। जब वरदान का समय आया तो चौथे गुरू राम दास जी सोढी वंश के गुरू बने। इस प्रकार सोढी वंश गुरुओं की गद्दी का आरंभ हुआ। यह सभी गुरु एक ही जोत स्वरुप हैं। जिन्होंने इनको एक जोत स्वरुप माना उनको सब कुछ मिल गया। जिन्होंने पृथक माना उनके हाथ कुछ नही लगा। इसी गुरुगद्दी पर सुशोभित नौवें पातशाह गुरु तेग बहादुर जी ने तिलक और जंजू की रक्षा के लिए अपने शरीर का बलिदान दे कर हिंदु धर्म की रक्षा की। उनके बलिदान से सारे संसार में हाहाकार मच गया। परंतु स्वर्गलोक उनके स्वागत में जय जयकार के शब्द से गूँज उठा। इस अध्याय में ११ चौपाइयाँ, ४ दोहे, १ नराज छंद मिलाकर कुछ १६ छंद है।

।।नराज छंद।।

बहुरि बिखाध बाधियं।। किनी न ताहि साधियं।।
करंम काल यौ भई।। सु भूम बंस ते गई।।1।।

शब्दार्थ : बहुरि–फिर। बिखाध–झगड़ा। करंम–काल (समय का चक्र)।

भावार्थ : वेदियों के आपसी झगड़े बढ़ गए। उन झगड़ों का निपटारा कोई नहीं कर सका, फिर समय ने ऐसा चक्र चलाया कि उनसे सारी धरती का राज पाट छिन गया।

।।दोहरा।।

बिप्र करत भए सूद्र ब्रिति छत्री बैसन करम।।
बैस करत भए छत्रि ब्रिति सूद्र सु दिज को धरम।।2।।

शब्दार्थ : बिप्र–ब्राह्मण। सूद्र–नीची जाति। दिज–ब्राह्मण।

भावार्थ : इस विपत्ति के आने से ब्राह्मणों ने शूद्र का कर्म करना आरंभ कर दिया। क्षत्रियों ने वैष्यों के कर्म का पालन किया। शुद्र जाति ने ब्राह्मणों के कर्म करने आरंभ कर दिये।

।।चौपई।।

बीस गाव तिन के रहि गए।।
जिन मो करत क्रिसानी भए।।
बहुत काल इह भांति बितायो।।
जनम समै नानक को आयो।।3।।

शब्दार्थ : क्रिसानी–खेती बाड़ी।

भावार्थ : समय के उलट फेर के साथ उन वेदियों के पास केवल 20 गांव ही रह गए। जिसमें वे खेती बाड़ी का काम करते थे। इसी तरह बहुत समय बिताया। फिर श्री गुरु नानक देव जी के अवतार धारण करने का समय आ गया।

।।दोहरा।।

तिन बेदीयन के कुल बिखे प्रगटे नानक राइ।।
सभ सिख्खन को सुख दए जह्‌ह तह्‌ह भए सहाइ।।4।।

शब्दार्थ : प्रगटे–अवतार लिया। सहाइ–सहायक।

भावार्थ : उन वेदियों के कुल में श्री गुरु नानक देव जी अवतरित हुए। उन्होंने सभी सिक्खों को अपार सुख दिया और हर विपत्ति में उनकी सहायता की।

।।चौपई।।

तिन इह कल मो धरमु चलायो।।
सभ साधन को राहु बतायो।।
जे ताके मारगि महि आए।।
ते कबहूं नही पाप संताए।।5।।

शब्दार्थ : साधन–यत्न। राहु–रास्ता।

भावार्थ : श्री गुरु नानक देव जी ने कलियुग में सत्य धर्म को चलाया। सब को सच्चे मार्ग पर चलने का उपदेश दिया। जो मनुष्य गुरु जी के बताए मार्ग पर चले उनको पापों ने कभी नहीं सताया अर्थात् पाप भी उनसे दूर भाग गए।

जे जे पंथ तवन के परे।।
पाप ताप तिन के प्रभ हरे।।
दूख भूख कबहूं न संताए।।
जाल काल के बीच न आए।।6।।

शब्दार्थ : तवन–उनके, गुरु नानक देव जी के। जाल–चक्र।

भावार्थ : जो मनुष्य श्री गुरु नानक देव जी के बताये हुए मार्ग पर चले प्रभु ने उनके पाप और दुख दूर कर दिए। उनको दुख तथा भूख ने कभी नही सताया। वे काल के जाल में नही फंसें।

नानक अंगद को बपु धरा।।
धरम प्रचुरि इह जग को करा।।
अमरदास पुनि नामु कहायो।।
जन दीपक ते दीप जगायो।।7।।

शब्दार्थ : बपु–शरीर। प्रचुरि–प्रचार। जन–मानो।

भावार्थ : श्री गुरु नानक देव जी ने अपना दूसरा रूप अंगद धारण किया तथा सिक्ख धर्म का प्रचार सारे संसार में किया। फिर गुरु नानक देव जी ने तीसरे गुरु अमर दास का रूप धारण किया जैसे एक दीप से दूसरा दीप प्रज्वलित हो उठा हो।

जब बर दानि समै वहु आवा।।
रामदास तब गुरू कहावा।।
तिह बरदानि पुरातनि दीआ।।
अमरदासि सुरपुरि मगु लीआ।।8।।

शब्दार्थ : पुरातनि–पुराना। सुरपुरि–स्वर्गलोक। मगु–रास्ता।

भावार्थ : जब वरदान का समय आया तो सोढी वंश के गुरु रामदास जी कहलाये। श्री गुरु अमरदास जी ने श्री गुरु रामदास जी को पूर्व वरदान का फल दिया और स्वयं **बैकुंठधाम** को चले गए।

स्री नानक अंगदि करि माना।।
अमरदास अंगद पहिचाना।।
अमरदास रामदास कहायो।।
साधनि लखा मूड़ नहि पायो।।9।।

शब्दार्थ : साधनि–साधू, संत। लखा–माना।

भावार्थ : सिक्खों ने श्री गुरु अंगद देव जी को श्री गुरु नानक देव जी का ही रूप माना। श्री गुरु अमरदास जी को गुरु अंगद देव जी का स्वरूप माना। श्री गुरु अमरदास जी से श्री गुरु

रामदास जी के रूप में प्रकट हुए। इस भेद को गुरसिक्खों ने जान लिया पर मूर्ख लोग इस भेद को न जान पाए।

भिंन भिंन सभहू करि जाना।।
एक रूप किनहूं पहिचाना।।
जिन जाना तिनही सिध पाई।।
बिन समझे सिध हाथ न आई।।10।।

शब्दार्थ : भिंन–अलग। किनहूं–कोई विरला।

भावार्थ : सब ने इन चारों गुरुओं को पृथक ही समझा। जिस विरले गुरमुख ने उनको एक जानकर एक ही स्वरूप में देखा उसे ही सिद्धि (मुक्ति) प्राप्त होती।

रामदास हरि सो मिल गए।।
गुरता देत अरजनहि भए।।
जब अरजन प्रभलोक सिधाए।।
हरिगोबिंद तिह ठां ठहराए।।11।।

शब्दार्थ : हरि–प्रभु। गुरता–गुरुगद्दी। प्रभलोक–ब्रह्मलीन। ठां–गुरुगद्दी।

भावार्थ : अपनी आयु पूरी करके गुरु राम दास जी ने गुरुगद्दी गुरु अर्जनदेव जी को सौंप दी। जब श्री गुरु अर्जनदेव जी प्रभुलोक में समा गए तब उनके स्थान पर श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी ने गुरुगद्दी संभाल ली।

हरिगोबिंद प्रभ लोक सिधारे।।
हरीराइ तिह ठां बैठारे।।
हरीक्रिसन तिनके सुत वए।।
तिन ते तेग बहादर भए।।12।।

शब्दार्थ : सुत–बेटा। तिन ते–उनके बाद।

भावार्थ : जब श्री गुरु हरगोबिंद साहिब जी परलोक सिधार गए तब उनके स्थान पर श्री गुरु हरिराय जी गुरुगद्दी पर शोभायमान हुए। उनके उपरांत उनके पुत्र श्री गुरु हरिकृष्ण साहिब गद्दी पर विराजे। फिर उनके बाद श्री गुरु तेग बहादुर जी गुरु बने।

तिलक जंञू राखा प्रभ ताका।।
कीनो बडो कलू महि साका।।
साधनि हेति इती जिनि करी।।
सीसु दीआ परु सी न उचरी।।13।।

शब्दार्थ : जंञु–जनेउ। साका–धर्म के लिए बलिदान। इती–इतनी बड़ी।

भावार्थ : अपना बलिदान देकर श्री गुरु तेग बहादुर जी ने हिंदु समाज के तिलक और जनेउ की रक्षा की। उन्होंने कलियुग में बड़े शांतमयी ढ़ंग से धर्मयुद्ध किया। उन्होंने देश की जनता की ख़ातिर अपना शीश अर्पण कर दिया पर मुख से एक़ बार भी 'उफ' तक नहीं निकली।

धरम हेत साका जिनि कीआ।।
सीसु दीआ पर सिररु न दीआ।।
नाटक चेटक कीए कुकाजा।।
प्रभ लोगन कह आवत लाजा।।14।।

शब्दार्थ : सिररु–धर्महठ। नाटक–तमाशा। चेटक–जादू। कुकाजा –बुरे कार्य।

भावार्थ : सदगुरु जी ने अपने धर्म की रक्षा के लिए अपना शीश अर्पण कर दिया परंतु अपने धर्म का त्याग नहीं किया। प्रभु के भक्तों को नाटक चेटक आदि बुरे काम करने में लज्जा आती है।

।।दोहरा।।

ठीकरि फोरि दिलीसि सिरि प्रभ पुर कीया पयान।।
तेगबहादर सी क्रिआ करी न किनहूं आन।।15।।

शब्दार्थ : ठीकरि–घड़ा। दिलीसि–दिल्ली का बादशाह औरंगज़ेब। पयान–सुर पुर चले जाना। क्रिआ–करनी।

भावार्थ : श्री गुरु तेग बहादुर जी ने दिल्ली के बादशाह औरंगज़ेब के सिर पर अपनी देह रुपी ठीकरा तोड़ कर बैकुण्ठ सिधार गए। श्री गुरु तेग बहादुर जैसी कठिन कुर्बानी आज तक किसी ने नहीं दी।

तेगबहादर के चलत भयो जगत को सोक।।
है है है सभ जग भयो जै जै जै सुरलोक।।16।।

शब्दार्थ : चलत–शहीद होना। है है है–महान दुख।

भावार्थ : श्री गुरु तेग बहादुर के शहीद होते ही सारे संसार में हाहाकार मच गया। देवलोक (स्वर्ग) में उनके आगमन से जय जयकार हो गई।

।। इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे पातसाही बरननं नाम पंचमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।5।।
अफजू।।215।।

सुंदर बचित्र नाटक का पांचवा अध्याय समाप्त हुआ जो अति शुभ है। छंद 215 समाप्त हुए।

6 संसार मे प्रवेश करना

इस अध्याय मे श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अपने पूर्व जन्म का वर्णन किया है। वे बताते हैं कि उनका इस संसार में आने का क्या लक्ष्य है। वे प्रभु भक्ति द्वारा अपने परमपिता परमात्मा के साथ अभेद थे। प्रभु जी ने उनको बुलाकर इस मृत्युलोक में अवतार धारण करने की आज्ञा दी। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने आज्ञा का पालन करते हुए इस संसार के भूले भटके जीवों का उधार करने के लिए, धर्म का प्रचार करने के लिए तथा भूली भटकी मानवता को सीधे रास्ते पर लाने के लिए अवतार धारण किया। जो महापुरुष गुरु गोबिंद सिंह से पहले इस संसार में अवतरित हुए उन्होंने अपने अपने नाम जपवाये, अकाल पुरुष प्रभु के नाम का स्मरण नहीं करवाया। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने अपने आप को अकाल पुरुष का दास माना तथा संसारी जीवों को प्रभु का नाम स्मरण करवाया और उचित रास्ते पर लाए। इस में ४६ चौपाइयाँ, ६ दोहे, ७ नराज तथा २ रसावल छंद है। कुल मिलाकर ६४ छंद हैं।

चौपई।।

अब मै अपनी कथा बखानो।।
तप साधत जिह बिधि मुहि आनो।।
हेमकुंट परबत है जहां।।
सपत स्रिंग सोभित है तहां।।1।।

शब्दार्थ : हेमकुंट–बर्फ का पहाड़ (हिमालय)। सपत–सात। स्रिंग–चोटियाँ।

भावार्थ : (गुरु गोबिंद सिंह जी अब अपनी कथा का वर्णन करते हैं) अब मैं अपनी जन्म कथा का वर्णन करता हूँ कि किस प्रकार तप करते करते इस मृत्युलोक में मुझे लाया गया। जहाँ हेमकुण्ट नाम का पर्वत है, वहाँ सात ऊँची-ऊँची चोटियाँ शोभायमान हैं।

सपत स्रिंग तिह नामु कहावा।।
पंडराज जह जोगु कमावा।।
तह हम अधिक तपस्सिआ साधी।।
महांकाल कालका अराधी।।2।।

शब्दार्थ : तपस्सिआ–तपस्या की। अराधी–अराधना की।

भावार्थ : उस पर्वत का नाम सप्तस्रिंग है। यहाँ राजा पाण्डू ने योग की साधना की थी। उस स्थान पर बैठकर बहुत तपस्या की तथा बहुत समय तक महाकाल, कालिका की अराधना की।

इह बिधि करत तपस्सिआ भयो।।
द्वै ते एक रूप है गयो।।
तात मात मुर अलख अराधा।।
बहु बिधि जोग साधना साधा।।3।।

शब्दार्थ : अलख–प्रभु। जोग–योग।

भावार्थ : मैंने उस स्थान पर आसन लगाकर घोर तपस्या की।

मैं प्रभु के चरणों में ऐसे लीन हो गया कि हम दोनों (प्रभु और मुझमें) में कोई भेद न रहा अर्थात् दो से एक रूप हो गए। उधर मेरे माता-पिता भी उस अलख प्रभु की प्रार्थना में लीन रहते थे तथा उन्होंने भी कई प्रकार की योग साधना की।

तिन जो करी अलख की सेवा।।
ताते भए प्रसंनि गुरदेवा।।
तिन प्रभ जब आइस मुहि दीया।।
तब हम जनम कलू महि लीया।।4।।

शब्दार्थ : आइस–आज्ञा। कलू–कलियुग।

भावार्थ : मेरे माता-पिता ने प्रभु की इतनी सेवा और अराधना की कि प्रभु प्रसंन हो गए। उस पारब्रह्म ने मुझे आज्ञा दी तथा उनकी आज्ञानुसार मैने इस कलियुग में जन्म लिया।

चित न भयो हमरो आवन कह।।
चुभी रही स्रुत प्रभु चरनन महि।।
जिउ तिउ प्रभ हमको समझायो।।
इम कहि कै इह लोक पठायो।।5।।

शब्दार्थ : चित–दल। स्रुत–सुरती (ध्यान)।

भावार्थ : मेरा मन इस मृत्युलोक में आने का नहीं था क्योंकि मेरा मन उस पारब्रह्म के चरणों में लीन था। उस प्रभु ने मुझे बहुत समझाया और यह वचन दे कर इस मृत्युलोक में भेजा।

।।अकालपुरख बाच इस कीट प्रति।।

शब्दार्थ : बाच–वचन। कीट–कीड़े।

भावार्थ : मुझ कीट तुल्य दास को अकाल पुरुष ने ऐसे वचन कहे।

।।चौपई।।

जब पहिले हम स्रिसटि बनाई।।
दईत रचे दुसट दुखदाई।।
ते भुज बल बवरे ह्वै गए।।
पूजत परम पुरख रहि गए।।6।।

शब्दार्थ : बल–शक्ति। बवरे–पागल। पूजत–पूजना।

भावार्थ : प्रभु ने मुझे बताया कि जब मैंने सृष्टि की रचना की तब सबसे पहले दैत्य बनाए। वे अत्यंत दुष्ट और दुखदायी थे। वे दुष्ट अपने बाहुबल में इतने मस्त हो गए कि उन्होंने प्रभु भक्ति से अपना ध्यान हटा लिया।

ते हम तमकि तनक मो खापे।।
तिन की ठउर देवता थापे।।
ते भी बल पूजा उरझाए।।
आपन ही परमेसर कहाए।।7।।

शब्दार्थ : तमकि–क्रोध। तनक–कम समय। खापे–खत्म कर देना। बल–भेट। पूजा–प्रभुता।

भावार्थ : उन दैत्यों को प्रभु ने अपने क्रोध से एक क्षण में नष्ट कर दिया। उनके स्थान पर देवताओं को बनाया। वे भी अपनी पूजा करवाने में उलझ कर रह गए। अपने आपको परमेश्वर कहलाने लगे। किसी भी देवता ने उस परमपिता परमेश्वर को प्रभु करके न जाना।

महांदेव अचुत कहवायो।।
बिसन आप ही को ठहरायो।।
ब्रहमा आप पारब्रहम बखाना।।
प्रभ को प्रभू न किनहूं जाना।।8।।

शब्दार्थ : महांदेव–शिवजी। अचुत–अडिग, अमर।

भावार्थ : शिवजी ने अपने आप को अमर कहलवाया, विष्णु जी ने अपने आपको पारब्रह्म माना। ब्रह्मा जी ने अपने आपको पारब्रह्म परमेश्वर कहलवाया। किसी भी देवता ने अकाल पुरुष प्रभु को प्रभु करके नहीं माना।

तब साखी प्रभ असट बनाए।।
साख नमित देबे ठहराए।।
ते कहै करो हमारी पूजा।।
हम बिन अवरु न ठाकुरु दूजा।।9।।

शब्दार्थ : साखी–गवाह। असट–आठ। देबे–देने के लिए। ठाकुरु –स्वामी।

भावार्थ : इसके उपरांत प्रभु जी ने पृथ्वी, सूर्य चंद्रमा, पवन, अग्नि, ध्रुव, प्रत्यूश तथा प्रभाव आदि को कर्मों की साक्षी देने के लए आठ गवाह (साक्षी) तैयार किए। वे भी प्रभु को भूलकर कहने लगे–हमारी पूजा करो, हमारे बिना कोई भी इस सृष्टि का स्वामी नहीं।

परम तत्त को जिनि न पछाना।।
तिन करि ईसर तिन कहु माना।।
केते सूर चंद कहु मानै।।
अगनहोत्रा कई पवन प्रामनै।।10।।

शब्दार्थ : तत्त–निरंकार। ईसर–ईश्वर। सूर–सूरज। अगनहोत्रा–अग्नि की शक्ति को।

भावार्थ : जिन लोगों ने परमेश्वर को नहीं पहचाना, उन्होंने आठ गवाहों (साखियों) को ही परमेश्वर कर के मान लिया। कुछ लोग सूर्य तो कुछ लोगों ने चंद्रमा की पूजा करनी आरंभ कर दी। कोई अग्नि को तो कोई पवन की पूजा करने लगा।

किनहूं प्रभु पाहन पहिचाना।।
नाति किते जल करत बिधाना।।
केतक करम करत डरपाना।।
धरमराज को धरम पछाना।।11।।

शब्दार्थ : पाहन–पत्थर। बिधाना–नियमानुसार सनान करना। डरपाना–डर जाना। धरम–परमात्मा।

भावार्थ : किसी ने पत्थर की मूर्ति बनाकर उनको परमपिता परमेश्वर माना। कई लोग तीर्थो पर स्नान करके अपने आप को महान समझने लगे। कुछ लोग कर्मकाण्ड करके मन ही मन संतुष्ट होने लगे। कई लोगों ने धर्मराज को ही प्रभु स्वीकार कर लिया।

जे प्रभ साख नमित ठहराए।।
ते हिआं आइ प्रभू कहवाए।।
ताकी बात बिसर जाती भी।।
अपनी अपनी परत सोभ भी।।12।।

शब्दार्थ : हिआं–इस दुनियां में। ताकी–उस प्रभु की। जाती–भूल जाना।

भावार्थ : जिन आठ गवाहों को जीव के कर्मों की साक्षी देने के लिए भेजा वे इस संसार में आकर अपने आप को परमेश्वर कहलवाने लगे। वे अकाल पुरुष प्रभु की सारी बातें भूला बैठे और अपनी-अपनी प्रशंसा करवाने लग गए।

जब प्रभ को न तिनै पहिचाना।।
तब हरि इन मनुछन ठहराना।।
ते भी बसि ममता हुइ गए।।
परमेसर पाहन ठहरए।।13।।

शब्दार्थ : मनुछन–मनुष्य। ममता–मोह। पाहन–पत्थर की मूर्ति।

भावार्थ : जब इन सब ने अंतर्यामी प्रभु को नहीं पहचाना तब उस सर्वव्यापी प्रभु ने मनुष्यों की रचना की, वे मनुष्य भी मोह के वश में हो गए और पत्थरों में भगवान को ढूंढ़ने लगे।

तब हरि सिद्ध साध ठहिराए।।
तिनभी परम पुरख नही पाए।।
जे कोई होत भयो जगि सिआना।।
तिन तिन अपनो पंथु चलाना।।14।।

शब्दार्थ : पंथु–राह, मज़हब।
भावार्थ : इसके पश्चात् प्रभु ने बड़ी-बड़ी सिद्धियाँ करने वाले सिद्ध महापुरुषों को भेजा। उन्होंने भी प्रभु को प्राप्त नहीं किया। इस संसार में जिन महापुरुषों ने अपने आपको सिद्ध माना, उन्होंने अपना-अपना मत चला लिया।

परम पुरख किनहूं नह पायो।।
बैर बाद हंकार बढायो।।
पेड पात आपन ते जलै।।
प्रभ कै पंथ न कोऊ चलै।।15।।

शब्दार्थ : हंकार–घमंड। पेड–पेड़।
भावार्थ : उस परमपिता परमात्मा को कोई भी पुरुष पा नहीं सका बल्कि वैर विरोध ही बढ़ाया। सभी अपने अपने अहंकार में डूब गये। जिस प्रकार पेड़ अपनी पत्तियों के साथ सड़ जाता है उसी प्रकार वे सब वैर विरोध में सड़ मरे। प्रभु के मार्ग पर कोई न चला।

जिनि जिनि तनकि सिद्ध को पायो।।
तिन तिन अपना राहु चलायो।।
परमेसर न किनहूं पहिचाना।।

मम उचारते भयो दिवाना।।16।।

शब्दार्थ : तनकि–थोड़ी सी। मम–मैं ही हूँ। दिवाना–पागल।

भावार्थ : जिस-जिस ने थोड़ी सी सिद्धि (शक्ति) प्राप्त कर ली उन्होंने अपना अलग से मत चला लिया। पारब्रह्म परमेश्वर को किसी ने नहीं पहचाना। मैं ही हूँ करते हुए सब मतवाले हो गए।

परमतत किनहूं न पछाना।।
आप आप भीतरि उरझाना।।
तब जे जे रिखराज बनाए।।
तिन आपन पुनि सिंम्रिति चलाए।।17।।

शब्दार्थ : परमतत–पारब्रह्म, परमेश्वर। रिखराज–ऋषिमुनि।

भावार्थ : किसी ने भी पारब्रह्म परमेश्वर को नहीं पहचाना। सब अपने में उलझ कर रह गए। प्रभु ने जो ऋषि मुनि बनाए उन्होंने अपने-अपने धर्म नियम और शास्त्रों तथा स्मृतियों की रचना कर ली।

जे सिंम्रितन के भए अनुरागी।।
तिन तिन क्रिआ ब्रहम की तिआगी।।
जिन मनु हरि चरनन ठहरायो।।
सो सिंम्रितन के राह न आयो।।18।।

शब्दार्थ : अनुरागी–प्रेमी (श्रद्धालु)। क्रिआ–करने वाले। मनु–मन।

भावार्थ : जो मनुष्य स्मृतियों के प्रेमी बन गए उन सब ने पारब्रह्म परमेश्वर की भक्ति करनी छोड़ दी। जिन्होंने अपना मन उस परमपिता परमात्मा के चरणों मे लगाया वे स्मृतियों के बताए मार्ग पर नहीं चले।

ब्रहमा चार ही बेद बनाए।।

सरब लोक तिह करम चलाए।।
जिनकी लिव हरि चरनन लागी।।
ते बेदन ते भए तिआगी।।19।।

शब्दार्थ : करम–कर्मकाण्ड। लिव–ध्यान।

भावार्थ : ब्रह्मा ने चार वेदों की रचना की तथा सबको अपने वेदों में बताए हुए मार्ग पर चलाया। जिन पुरुषों ने अपना ध्यान उस परमपिता परमात्मा के चरणों में लगा लिया उन्होंने वेदों के मार्ग को त्याग दिया।

जिन मत बेद कतेबन तिआगी।।
पारब्रहम के भए अनुरागी।।
तिन के गूढ़ मत्त जे चलही।।
भांति अनेक दुखन सो दलही।।20।।

शब्दार्थ : मत–मार्ग।

भावार्थ : जिन मनुष्यों ने वेद कतेब के मत को त्याग दिया उन्होंने अपना ध्यान प्रभु के चरणों में लगा लिया। जो पारब्रह्म परमेश्वर के बताए हुए मार्ग पर चलते हैं उनके अनेक प्रकार के संकट दूर हो जाते हैं।

जे जे सहित जातन संदेह।।
प्रभ को संगि न छोडत नेह।।
तेते परमपुरी कह जाही।।
तिन हरि सिउ अंतरु कछु नाही।।21।।

शब्दार्थ : जातन–संकट। परमपुरी–प्रभुलोक।

भावार्थ : जो मनुष्य प्रभु के प्रेम को नहीं छोड़ते और हर प्रकार के संकटों का सामना करने के लिए तैयार रहते हैं वे सब बैकुण्ठ में निवास करते हैं अर्थात् पारब्रह्म और उनमें कोई भिन्नता नहीं रह जाती तथा मोक्ष को प्राप्त करते हैं।

जे जे जीय जातन ते डरे।।
परम पुरख तजि तिन मग परे।।
ते ते नरक कुंड मो परही।।
बार बार जग मो बपु धरही।।22।।

भावार्थ : जीय–जीव। जातन–संकट। मग–रास्ता। बपु–शरीर।

भावार्थ : जो पुरुष प्रभु भक्ति के मार्ग में आने वाली कठिनाईयों से डर जाते हैं वे सत्य मार्ग को त्याग कर वेद शास्त्र के रास्ते पर चलते हैं वे नरक के अधिकारी हैं। इस संसार के जन्म-मरण के चक्कर में फंसे रहते हैं अर्थात् उनको कभी मुक्ति प्राप्त नहीं हो सकती।

तब हरि बहुरि दत्त उपजाइओ।।
तिन भी अपना पंथु चलाइओ।।
कर मो नख सिर जटा सवारी।।
प्रभ की क्रिआ कछू न बिचारी।।23।।

शब्दार्थ : दत्त–योगी, जटाधारी। कर–हाथ। नख–नाखून। क्रिआ–करनी।

भावार्थ : फिर उस पारब्रह्म परमेश्वर ने दत्तात्रय को उत्पन्न किया। उसने भी अपना पंथ चलाया, उसने अपने हाथों के नाखून बढ़ा लिए और सिर पर जटाएँ धारण कर ली। प्रभु की गति के बारे मे कुछ विचार नही किया।

पुनि हरि गोरख कौ उपराजा।।
सिख्ख करे तिनहूं बडराजा।।
स्रवन फारि मुद्रा दुअै डारी।।
हरिकी प्रीति रीति न बिचारी।।24।।

शब्दार्थ : उपराजा–पैदा किया। रीति–ढंग, तरीका।

भावार्थ : फिर सर्वशक्तिमान प्रभु ने गोरखनाथ को पैदा किया

उसने भी अपना अलग से पंथ चलाया और बड़े-बड़े राजाओं को अपना शिष्य बना लिया। उसने अपने शिष्यों के कान छिदवा कर उनमें कुण्ड़ल पहना दिया। उस अकाल पुरुष के प्रेम की रीति को न पहचाना।

पुनि हरि रामानंद को करा।।
भेस बैरागी को जिन धरा।।
कंठी कंठि काठ की डारी।।
प्रभ की क्रिआ न कछू बिचारी।।25।।

शब्दार्थ : कंठी–माला। काठ–लकड़ी।

भावार्थ : फिर प्रभु जी ने रामानंद को उत्पन्न किया, उसने वैरागियों का वेश धारण कर लिया और गले में लकड़ी की माला डाल ली तथा उसने भी सर्वशक्तिमान प्रभु की भक्ति पर विचार नहीं किया।

जे प्रभ परम पुरख उपजाए।।
तिन तिन अपने राह चलाए।।
महादीन तबि प्रभ उपराजा।।
अरब देस को कीनो राजा।।26।।

शब्दार्थ : परम पुरख–महापुरुष। महादीन–हजरत मुहम्मद। उपराजा–पैदा किया।

भावार्थ : प्रभु ने जितने भी बड़े-बड़े महापुरुषों को पैदा किया उन सब ने अपने-अपने मत चला लिये। फिर प्रभु ने हजरत मुहम्मद साहिब को पैदा किया और उसको अरब देश का राजा बना दिया।

तिन भी एकु पंथु उपराजा।।
लिंग बिना कीने सभ राजा।।
सभ ते अपना नामु जपायो।।

सतिनामु काहू न द्रिड़ायो।।27।।

शब्दार्थ : लिंग–सुन्नत करना।

भावार्थ : हजरत मुहम्मद साहिब ने भी अपना एक मत चलाया जो इस्लाम धर्म के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसने अपने सभी शिष्यों की सुन्नत करवा दी तथा सबसे अपना नाम जपवाया। इस प्रकार सर्वशक्तिमान प्रभु का किसी ने भी स्मरण नहीं किया।

सभ अपनी अपनी उरझाना।।
पारब्रहम काहू न पछाना।।
तप साधत हरि मोहि बुलायो।।
इम कहिकै इह लोक पठायो।।28।।

शब्दार्थ : उरझाना–उलझकर रह जाना। हरि–अकाल पुरुष। इम–इस तरह।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि सभी अपनी अपनी प्रभुता में उलझ कर रह गए, किसी ने भी उस सर्वशक्तिमान प्रभु को नहीं पहचाना, उस समय प्रभु ने मुझे बुलाया और यह कह कर इस मृत्युलोक में भेजा।

।।अकाल पुरख बाच।।चौपई।।
मै अपना सुत तोहि निवाजा।।
पंथु प्रचुर करबे कहु साजा।।
जाहि तहां तै धरमु चलाइ।।
कुबुधि करन ते लोक हटाइ।।29।।

शब्दार्थ : सुत–बेटा। तै–मृत्युलोक। कुबुधि–बुरी मत।

भावार्थ : प्रभु ने मुझे कहा कि मैंने तुझे अपना सुपुत्र माना है। मैंने तुझे सच्चे मार्ग पर चलने के लिए बनाया है। तुम मृत्युलोक में जाकर सच्चे धर्म की स्थापना करो। लोगों को बुरे काम करने से बचाओ।

।।कबिबाच।।दोहरा।।

ठाढ भयो मै जोरि करि बचन कहा सिर नयाइ।।
पंथ चलै तब जगत मै जब तुम करहु सहाइ।।30।।

शब्दार्थ : ठाढ–खड़ा हो गया। सिर नयाइ–सिर झुकाकर।

भावार्थ : मैं उस अकाल पुरुष प्रमात्मा की आज्ञा के उत्तर में हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया। नतमस्तक होकर विनती की कि संसार में तभी सच्चा पंथ चल सकेगा यदि आप मेरी सहायता करोगे।

।।चौपई।।

इह कारनि प्रभ मोहि पठायो।।
तब मै जगत जनमु धरि आयो।।
जिम तिन कही इनै तिम कहिहौ।।
अउर किसू ते बैर न गहिहौ।।31।।

शब्दार्थ : पठायो–भेजा। तिन–प्रभु। इनै–इस संसार के लोगों ने।

भावार्थ : उस सर्वशक्तिमान प्रभु ने मुझे सच्चा पंथ चलाने के लिए इस संसार मे भेजा है। मैंने उनकी आज्ञा का पालन कर इस संसार में जन्म लिया। प्रभु मुझे जैसी आज्ञा देंगे वैसे ही मैं इस संसार में करूँगा। मैं किसी के साथ वैर विरोध की भावना नहीं रखूँगा।

जे हम को परमेसर उचरि है।।
ते सभ नरकि कुंड महि परि है।।
मोको दासु तवन का जानो।।
या मै भेदु न रंच पछानो।।32।।

शब्दार्थ : तवन–प्रभु। भेदु–अन्तर। रंच–रतिभर।

भावार्थ : गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं जो लोग मुझे परमेश्वर कहेंगे वे नरक के अधिकारी होंगे। मुझे उस प्रभु का दास

मानो। इस बात में तनिक भी अंतर नहीं जानना चाहिए।

मै हो परम पुरख को दासा।।
देखनि आयो जगत तमासा।।
जो प्रभ जगति कहा सो कहि हौ।।
म्रित लोग ते मोनि न रहि हौ।।33।।

शब्दार्थ : दासा–सेवक। मोनि–चुप।

भावार्थ : मैं उस परमपिता परमात्मा का सेवक हूँ तथा इस संसार का तमाशा देखने के लिये आया हूँ। इस सृष्टि के मालिक ने इस जगत के लोगों के लिए जो संदेश दिया मैं वह संदेश सब को बताऊँगा। मैं इस मृत्युलोक में किसी से डर कर चुप नहीं रहूँगा।

।।नराज छंद।।

कहियो प्रभू सु भाखि हौ।। किसू न कान राखि हौ।।
किसू न भेख भीज हौ।। अलेख बीज बीज हौ।।34।।

शब्दार्थ : किसू–किसी का। कान–परवाह।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं मुझे प्रभु जी ने जो आज्ञा दी है मैं उस आज्ञा का पालन करूँगा। मुझे किसी की भी कोई परवाह नहीं, मैं किसी भी वेश में नहीं फसूँगा। मैं उस स्वामी के नाम का बीज रोपूँगा।

पखाण पूजहौ नही।। न भेख भीजहौ कही।।
अनंत नामु गाइहौ।। परम्म पुरख पाइहै।।35।।

शब्दार्थ : पखाण–पत्थर। कही–किसी। अनंत–बेअंत।

भावार्थ : मैं पत्थरों की पूजा नहीं करूँगा, ना ही किसी भेष में रह कर प्रसंन रह सकता हूँ। मैं उस सर्वशक्तिमान प्रभु की ही पूजा करूँगा और उस प्रभु को ही प्राप्त करूँगा।

जटा न सीस धारिहो।। न मुंद्रका सु धारिहो।।
न कान काहू की धरो।। कहियो प्रभू सु मै करो।।36।।

शब्दार्थ : कान–परवाह।

भावार्थ : मैं अपने सिर पर जटाएँ धारण नहीं करूँगा। ना ही कान छिदवा कर कुण्डल पहनूँगा। मैं किसी की परवाह नहीं करूँगा। मुझे जो कुछ करने की प्रभु ने आज्ञा दी है मैं वही कर्म करूँगा।

भजो सु एकु नामयं।। जु काम सरब ठामयं।।
न जाप आन को जपो।। न अउर थापना थपो।।37।।

शब्दार्थ : आन–और किसी का। थापना–सहायता।

भावार्थ : मैं उस सर्वशक्तिमान प्रभु के नाम की पूजा करूँगा जो प्रत्येक स्थान पर काम आता है तथा सहायता करता है। मैं किसी और नाम की पूजा नहीं करूँगा तथा ना ही किसी और की सहायता लूँगा।

बिअंति नामु धिआइहो।। परम जोति पाइहो।।
न धिआन आन को धरो।। न नाम आन उचरौ।।38।।

शब्दार्थ : बिअंति–अकाल पुरख।

भावार्थ : मैं उस परमपिता परमात्मा के नाम का ही स्मरण करूँगा तथा इस तरह प्रभु को प्राप्त करूँगा। मैं प्रभु के ध्यान के बिना किसी और का ध्यान नहीं करूँगा तथा किसी दूसरे के नाम का उच्चारण नहीं करूँगा।

तवक्क नाम रत्तियं।। न आन मान मत्तियं।।
परम्म धिआन धारीयं।। अनंत पाप टारीयं।।39।।

शब्दार्थ : तवक्क–केवल तुम्हारा ही नाम। मत्तियं–मस्त। मान –अभिमान।

भावार्थ : हे मेरे प्रभु ! मैं तुम्हारे नाम के रंग में रंगा रहूँगा। मैं किसी अभिमान में मस्त नहीं रहूँगा। मैं आपके ही रूप का ध्यान करूँगा। आप का नाम बेअंत पापों को दूर करने वाला है।

तुमेव रूप राचियं।। न आन दान माचियं।।
तवक्क नामु उचारीयं।। अनंत दूख टारीयं।।40।।

शब्दार्थ : तुमेव–आपका। न–नही। माचियं–प्रसंन।

भावार्थ : हे मेरे प्रभु ! मैं आपके ही रूप में रचा रहुँगा। और किसी का ध्यान नहीं करूँगा, मैं आपके नाम का स्मरण करूँगा जो अनेक पापों को दूर करने वाला है।

।।चौपई।।

जिन जिन नामु तिहारो धिआइया।।
दूख पाप तिन निकटि न आइआ।।
जे जे अउर धिआन को धरही।।
बहिस बहिस बादन ते मरही।।41।।

शब्दार्थ : बहिस–बहस। बादन–झगड़े।

भावार्थ : हे प्रभु ! जिस जिस ने आपके नाम की पूजा की है दुख तथा पाप उसके निकट नहीं आते। जो आपको छोड़कर किसी और का ध्यान करते हैं खंडन-मंडन करते हुए झगड़-झगड़ कर मर जाते हैं।

हम इह काज जगत मो आए।।
धरम हेत गुरदेव पठाए।।
जहां तहां धरम बिथारो।।
दुसट दोखीयनि पकरि पछारो।।42।।

शब्दार्थ : पठाए–भेजा। दुसट–पापी लोग।

भावार्थ : मैं प्रभु के कार्य को करने के लिए इस संसार में आया

हूँ। उस प्रभु ने मुझे-धर्म कर्म करने के लिए भेजा है। सब जगह धर्म का प्रचार करो तथा दुष्टों और पापियों का नाश करो।

याही काज धरा हम जनमं।।
समझ लेहु साधू सभ मनमं।।
धरम चलावन संत उबारन।।
दुसट सभन को मूल उपारनि।।43।।

शब्दार्थ : उबारन–उद्धार करना। मूल उपारनि–जड़ से नष्ट कर देना।

भावार्थ : गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं–इसी कार्य को पूरा करने के लिये हमने इस संसार में जन्म लिया है। साधूजन इस बात को अच्छी तरह अपने मन में धारण कर लें। धर्म चलाने हेतु और संतों की रक्षा करने के लिये और दुष्टों को जड़ से उखाड़ने के लिये ही मैं इस संसार में आया हूँ।

जे जे भए पहिल अवतारा।।
आपु आपु तिन जापु उचारा।।
प्रभ दोखी कोई न बिदारा।।
धरम करन को राहु न डारा।।44।।

शब्दार्थ : डारा–डाला, चलाया।

शब्दार्थ : जो भी अवतार पहले आ चुके हैं, उन सब ने अपने-अपने नाम का ही जाप करवाया है। उन में से किसी ने भी अकाल पुरुष प्रभु के दोषियों को नहीं मारा। उन सब ने लोगों को धर्म की राह पर भी नहीं चलाया।

जे जे गउस अंबीआ भए।।
मै मै करत जगत ते गए।।
महापुरख काहू न पछाना।।

करम धरम को कछू न जाना।।45।।

शब्दार्थ : गउस अंबीआ—पीर पैगम्बर। महापुरख—सर्वशक्तिमान प्रभु।

भावार्थ : जितने भी पीर पैगम्बर हुए वे सारे मैं-मैं करते हुए संसार से चले गए। उस परमपिता परमात्मा को किसी ने भी नहीं पहचाना। उन्होंने धर्म कर्म को कुछ नहीं माना।

अवरन की आसा किछु नाही।।
एकै आस धरो मन माही।।
आन आस उपजत किछु नाही।।
वा की आस धरो मन माही।।46।।

शब्दार्थ : अवरन—और किसी। एकै—प्रभु।

भावार्थ : उस परमपिता परमात्मा को छोड़कर और किसी देवी देवता की आशा करने (पूजा करने) में कुछ नहीं रखा। इस कारण मैं अपने मन में उस अकाल पुरुष की आशा ही रखता हूँ। और किसी की पूजा अर्चना से कुछ नहीं प्राप्त होता। उस प्रभु का ध्यान ही अपने मन में रखो।

।।दोहरा।।

कोई पड़ति कुरान को कोई पड़त पुरान।।
काल न सकत बचाइकै फोकट धरम निदान।।47।।

शब्दार्थ : काल—मृत्यु। फोकट—व्यर्थ।

भावार्थ : कोई कुरान का पाठ करता है तो कोई पुराण पढ़ता है। इन सब के पाठ मनुष्य को काल से नहीं बचा सकते। अतः अंत में यह सारे धर्म-कर्म व्यर्थ सिद्ध होते हैं।

।।चौपई।।

कई कोटि मिलि पड़त कुराना।।

बाचत किते पुरान अजाना।।
अंतिकाल कोई काम न आवा।।
दाव काल काहू न बचावा।।48।।

शब्दार्थ : कोटि–करोड़। मिलि–इकट्ठा होना। बाचत–पढ़ना।
भावार्थ : कई करोड़ लोग इकट्ठे होकर कुरान का पाठ करते हैं तो कई अनजान लोग पुरान पढ़ते हैं। अंत सम्म्य इन में से किसी ने काम नहीं आना। काल के ग्रास से कोई भी नहीं बच सकता।

किउ न जपो ताक तुम भाई।।
अंतिकाल जो होइ सहाई।।
फोकट धरम लखो कर भरमा।।
इन ते सरत न कोई करमा।।49।।

शब्दार्थ : फोकट–व्यर्थ। करमा–काम।
भावार्थ : हे भाई ! तुम उस प्रभु की पूजा क्यों नहीं करते ? जो अन्त समय में सबकी सहायता करता है उस परमपिता परमात्मा के बिना और सभी धर्मों को भ्रम में डालने वालों को व्यर्थ समझो। इन सब धर्मों से कोई भी काम पूरा नहीं हो सकता।

इह कारनि प्रभ हमै बनायो।।
भेदु भाखि इह लोक पठायो।।
जो तिन कहा सु सभन उचरौ।।
डिंभ विंभ कछु नैक न करौ।।50।।

शब्दार्थ : भेदु भाखि–भेद बताना। डिंभ–धोखा। विंभ–फरेब।
भावार्थ : इस कार्य को पूरा करने का काम मुझे सौंपा है तथा सभी भेद बताकर इस पृथ्वी पर मुझे जो संदेश इस संसार के लिए दिया है मैं उस संदेश को सब लोगों को सुनाऊँगा। मैं कोई छल, कपट या पाखण्ड नहीं करूँगा।

।।रसावल छंद।।

न जटा मूंड धारौ।। न मुंद्रका सवारौ।।
जपो तास नामं।। सरै सरब कामं।।51।।

शब्दार्थ : मूंड–सिर। मुंद्रका–मुंदरा।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं–मैं सिर पर जटा नहीं रखूँगा। कानों में कुण्डल नहीं पहनूँगा। मैं प्रभु का नाम जपूँगा जिसका जाप करने से सब काम सिद्ध हो जाते हैं।

न नैनं मिचाऊ।। न डिंभं दिखाऊ।।
न कुकरमं कमाऊ।। न भेखी कहाऊ।।52।।

शब्दार्थ : नैनं–आँखे। डिंभं–पाखण्ड। कुकरमं–बुरा काम।

भावार्थ : न ही मैं आँखें बंद करके समाधी लगाऊँगा, न ही किसी प्रकार का पाखण्ड करूँगा, न ही कोई बुरा काम करूँगा तथा न ही भेखी कहलाऊँगा।

।।चौपई।।

जे जे भेख सु तन मै धारै।।
ते प्रभ जन कछुकै न बिचारै।।
समझ लेहु सभ जन मन माही।।
डिंभन मै परमेसुर नाही।।53।।

शब्दार्थ : सु तन–अपने शरीर पर। डिंभन–पाखण्ड।

भावार्थ : जो पुरुष अपने शरीर पर भेख बनाते हैं वे सर्वशक्तिमान प्रभु के बारे में कुछ नहीं समझते। हे संतजनो ! तुम यह बात अपने मन में भली प्रकार से समझ लो कि पाखण्ड करने से प्रभु की प्राप्ति नहीं हो सकती।

जे जे करम करि डिंभ दिखाई।।
तिन परलोगन मो गति नाही।।

जीवत चलत जगत के काजा।।
सवांग देखि करि पूजत राजा।।54।।

शब्दार्थ : परलोगन–परलोक। सवांग–वेश, पाखण्ड।
भावार्थ : जो कर्मकाण्ड और पाखण्ड करके लोगों को दिखाते हैं उन पुरुषों को परलोक में मुक्ति नहीं मिलती। इस जीवित जगत में पाखण्डियों के काम पूर्ण होते रहते हैं उनके पाखण्ड को देखकर दुनियावी लोग उनकी पूजा करते हैं।

सुआंगन मै परमेसुर नाही।।
खोजि फिरै सभ ही को काही।।
अपनो मनु कर मो जिह आना।।
पारब्रहम को तिनी पछाना।।55।।

शब्दार्थ : सुआंगन–पाखण्ड करना, भेष धारण करना। काही–कहीं भी। कर–हाथ।
भावार्थ : स्वांग रचने वाले को परमेश्वर की प्राप्ति नहीं होती। चाहे सब लोग उसे कहीं भी ढूंढते फिरें। जिन्होंने अपने मन को अपने वश में कर लिया उन्होंने ही परमेश्वर को प्राप्त कर लिया।

।।दोहरा।।

भेख दिखाए जगत को लोगन को बसि कीन।।
अंतकालि काती कटयो बासु नरक मो लीन।।56।।

शब्दार्थ : काती–तलवार।
भावार्थ : जिन्होंने भेष बनाकर संसार को दिखाया तथा लोगों को अपने बस में कर लिया वे अंत में तलवार से काटे जाएँगे तथा उनका नरक में वास होगा।

।।चौपई।।

जे जे जग को डिंभ दिखावै।।

लोगन मूंडि अधिक सुखु पावै।।
नासा मूंद करै परणामं।।
फोकट धरम न कउडी कामं।।57।।

शब्दार्थ : डिंभ–पाखण्ड। लोगन–लोग। नासा मूंद–प्राणायाम। फोकट–व्यर्थ।

भावार्थ : जो पुरुष लोगों को पाखण्ड कर के दिखाते हैं लोगों को ठग कर सुख प्राप्त करते हैं, अपनी नासिका को बंद करके प्राणायाम करते हैं उनके धर्म कर्म व्यर्थ हैं तथा कौड़ी के काम के भी नहीं।

फोकट धरम जिते जग करही।।
नरकि कुंड भीतर ते परही।।
हाथि हलाए सुरग न जाहू।।
जो मनु जीत सका नही काहू।।58।।

शब्दार्थ : सुरग–स्वर्ग। जाहू–जाना। काहू–किसी का।

भावार्थ : जो लोग संसार में व्यर्थ के काम करते हैं वे सब नरक के अधिकारी होंगे, कोई हाथ हिलाकर स्वर्ग को नहीं जा सकता। जो अपने मन को नहीं जीत सका, व्यर्थ की बातें करके स्वर्ग का अधिकारी नहीं बन सकता।

।।कबि बाच।।दोहरा।।

जो निज प्रभ मो सो कहा सो कहिहौ जग माहि।।
जो तिह प्रभ कौ धिआइ है अंत सुरग को जाहि।।59।।

शब्दार्थ : निज–अपने। सुरग–स्वर्ग।

भावार्थ : गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं मेरे परमेश्वर ने जो मुझे संदेश दिया है वह संदेश मैं इस धरती के लोगों को दूँगा। जो लोग उस परमपिता परमात्मा का स्मरण करते हैं वे अंत में स्वर्ग को जाते हैं।

।।दोहरा।।

हरि हरि जन दुई एक है बिब बिचार कछु नाहि।।
जल ते उपज तरंग जिउ जल ही बिखै समाहि।।60।।

शब्दार्थ : दुई–दोनो। बिब–भेद। तरंग–लहर।

भावार्थ : प्रभु और प्रभु भक्त दोनों एक रूप हैं, उनका आपस में कोई भेद भाव नहीं। जैसे समुद्र की लहरें जल में उठती हैं और फिर उसी जल में ही समा जाती हैं उसी प्रकार प्रभु के सेवक प्रभु से उत्पन्न होकर प्रभु में समा जाते हैं।

।।चौपई।।

जे जे बादि करत हंकारा।।
तिन ते भिंन रहत करतारा।।
बेद कतेब बिखै हरि नाही।।
जानि लेहु हरिजन मन माही।।61।।

शब्दार्थ : बादि–वाद-विवाद। भिंन–अलग।

भावार्थ : जो मनुष्य वाद-विवाद में फंसे रहते हैं भगवान उनसे दूर रहते हैं। वेद, कतेब जैसे धर्म शास्त्रों में प्रभु नहीं मिलते। हे प्रभु के सच्चे भक्तो ! तुम यह बात अच्छी तरह समझ लो।

आंख मूंदि कोऊ डिंभ दिखावै।।
आंधर की पदवी कह पावै।।
आंखि मीच मग सूझ न जाई।।
ताहि अनंत मिलै किम भाई।।62।।

शब्दार्थ : आंधर–अंधा।

भावार्थ : जो आँखे बंद कर के पाखंड करता है उसको अंधे की पदवी दी जाती है। आँखे बंद करके चलने वाला अपना रास्ता नहीं देख सकता। फिर उस मनुष्य को परमपिता परमात्मा की प्राप्ति कैसे हो सकती है।

बहु बिसथार कह लउ कोई कहै।।
समझत बाति थकति हुऐ रहै।।
रसना धरै कई जौ कोटा।।
तदप गनत तिह परत सु तोटा।।63।।

शब्दार्थ : कह लउ–कहाँ तक। थकति–थक जाना। कोटा–करोड़। तदप–तभी।

भावार्थ : इतना विस्तृत वर्णन कोई कहाँ तक करेगा ? जो भी इन बातों को समझ लेता है वह हार कर चुप हो जाता है। यदि कोई करोड़ों जीवन भी धारण कर ले तो भी प्रभु की महिमा का वर्णन करने में असमर्थ है।

।।दोहरा।।

जब आइसु प्रभ को भयो जनमु धरा जग आइ।।
अब मै कथा संछेपते सभहू कहत सुनाइ।।64।।

शब्दार्थ : आइसु–आज्ञा।

भावार्थ : जब उस प्रभु की आज्ञा हुई तब मैंने इस संसार में जन्म धारण किया। अब मैं आगे की कथा सबको संक्षेप रूप में सुनाता हूँ।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे आगिआ काल जग प्रवेस करन नाम खटमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।6।। अफजू।।279।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक में काल की आज्ञा अनुसार संसार में प्रवेश करने वाला छठा अध्याय समाप्त हुआ है। शुभ है, कुल छंद 269 पूरे हो चुके हैं।

7 कवि का जन्म

इस अध्याय मे श्री गुरु गोबिंद सिंह जी अपने अवतार धारण करने के बारे में बताते हैं। उनके माता-पिता पूर्व दिशा की ओर चल पड़े तथा अनेक तीर्थों के स्नान किए। त्रिवेणी के संगम, इलाहाबाद पहुँच कर उन्होंने बहुत दान-पुण्य किये। इसी के फलस्वरूप गुरु गोबिंद सिंह जी ने पटना में अवतार लिया। वहाँ उनका पालन-पोषण बड़े उत्तम ढंग से किया गया तथा अनेक प्रकार की शिक्षा दी गई। अभी श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने ज़रा सा होश संभाला ही था कि उनके पिता श्री गुरु तेग बहादुर जी महान बलिदान देकर देव लोक सिधार गए। इस अध्याय में तीन चौपाइयाँ हैं।

अथ कबि जनम कथनं।।

अब श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के अवतार धारण करने का वर्णन हैं।

।।चौपई।।

मुर पित पूरब कीयसि पयाना।।
भांति भांति के तीरथि नाना।।
जब ही जात त्रिबेणी भए।।
पुंन दान दिन करत बितए।।1।।

शब्दार्थ : मुर–मेरे। पित–पिता। पयाना–गए। तीरथि नाना–तीर्थ स्नान।

भावार्थ : मेरे पिता श्री गुरु तेग बहादुर जी ने धर्म प्रचार के

लिए पूर्व दिशा जाने की तैयारी की। तरह तरह के तीर्थ स्नान करने के लिए गए। वे त्रिवेणी, गंगा, यमुना सरस्वती के संगम पर स्नान करने के लिए प्रयाग पहुँचे और दान-पुण्य करते हुए दिन बिताये।

तही प्रकास हमारा भयो।।
पटना सहर बिखै भव लयो।।
मद्र देस हमको ले आए।।
भांति भांति दाईअन दुलराए।।2।।

शब्दार्थ : प्रकास–रौशनी। भयो–जन्म। मद्र–जेहलम दरिया के बीच का देश। दाईअन–दाईयाँ। दुलराए–लाड़ प्यार करना।
भावार्थ : प्रयागराज में हमारा प्रकाश हुआ अतः पटना साहिब में मेरा जन्म हुआ। फिर मुझे पंजाब में ले आए। यहाँ दाइयों ने अनेक प्रकार के लाड़ प्यार से मेरा पालन पोषण किया।

कीनी अनिक भांति तन रच्छा।।
दीनी भांति भांति की सिच्छा।।
जब हम धरम करम मो आए।।
देवलोक तब पिता सिधाए।।3।।

शब्दार्थ : रच्छा–रक्षा। सिच्छा–शिक्षा। देवलोक–स्वर्ग।
भावार्थ : माता पिता ने मेरे शरीर की अनेक प्रकार से रक्षा की। तरह-तरह की शिक्षाएँ दी। जब मैंने होश सम्भाला तथा धर्म-कर्म के कार्यों में लगा तब पिताजी दिल्ली में शहीदी प्राप्त कर स्वर्गधाम को चले गए।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे सपतमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।7।।282।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ मे प्रसिद्ध कवि के जन्म का वर्णन करने वाला अध्याय समाप्त हुआ। शुभ है तथा 282 छंद पूरे हो गये हैं।

8 भंगाणी का युद्ध

श्री गुरु गोबिंद सिंह जी का नाहन के राजा मेदनी प्रकाश के साथ बहुत प्यार था। उसने सद्‌गुरु जी को पत्र लिख कर अपनी रियासत में आने का निमंत्रण भेजा। उसके निमंत्रण पर सद्‌गुरु जी 17 वैशाख संवत 1742 में अपने परिवार के साथ नाहन पहुँचे। नाहन पहुँच कर सद्‌गुरु जी ने यमुना के किनारे एक सुंदर स्थान अपने रहने के लिए चुना। वहाँ राजा ने उनके लिए बड़ा सुंदर महल बनवा दिया तथा उस स्थान का नाम पांउटा साहिब रखा। पांउटा साहिब से 7 मील दूर गांव भंगाणी था। गुरु जी ने उस गांव में मोंचा गाड़ दिया तथा अंतर्यामी गुरु जी युद्ध की प्रतीक्षा करने लगे। पहाड़ी फौजों के आने से युद्ध आरंभ हो गया। गुरु जी की ओर से कई वीर युद्ध करने के लिए आ डटे। संगोशाह, जीतमल, गाजी गुलाब, माहरी चंद, लाल चंद, मामा कृपाल दास तथा साहिब चंद। पहाड़ियों की ओर से निम्नलिखित योद्धाओं ने युद्ध मे भाग लिया। फते चंद, भीम चंद, गुपाल, हरी चंद, केसरी चंद, मसंदर शाह, गाजी चंद, नजाबत ख़ान, हयात ख़ान, तथा भीखन ख़ान। बहुत भयानक युद्ध हुआ। गुरु जी स्वयं इस युद्ध मे आ डटे। अंत में गुरु गोबिंद सिंह जी विजयी हुए और पहाड़ी राजा भाग गये। गुरु जी का यह पहला युद्ध था जो 18 वैशाख संवत 1746 में हुआ। इस अध्याय में 4 चौपाइयाँ 4 दोहे, 14 भुजंग प्रयात, 7 भुजंग, 9 रसावल छंद, कुल मिलाकर 38 छंद हैं।

अथ राज साज कथनं।।

अब गुरु गोबिंद सिंह के राजपाट के बारे में वर्णन करते है।

।।चौपई।।

राज साज हम पर जब आयो।।
जथासकत तब धरम चलायो।।
भांति भांति बन खेल सिकारा।।
मारे रीछ रोझ झंखारा।।1।।

शब्दार्थ : राज साज–संवत् 1733 विक्रमी, 1 वैशाख को गुरुगद्दी संभाली। आयो–संभाला। झंखारा–बारहसिंगा।

भावार्थ : पिता जी के शहीद होने के बाद राजपाट का भार हमें सौंपा गया। हमने अपनी शक्ति के अनुसार धर्म का प्रचार किया। वनों में अनेक प्रकार का शिकार खेला तथा रीछ, रोक्ष और बारहसिंगे मारे।

देसचाल हम ते पुनि भई।।
सहर पावटा की सुधि लई।।
कालिंद्री तटि करे बिलासा।।
अनिक भांत के पेखि तमासा।।2।।

शब्दार्थ : तटि–किनारा। कालिंद्री–यमुना। बिलासा–खेल तमाशा।

भावार्थ : फिर अपने देश आनंदपुर साहिब से नाहन रियासत पांउटा साहिब की ओर चल पड़े। वहाँ पहुँचकर यमुना नदी के किनारे कई खेल तमाशे किए।

तह के सिंघ घने चुनि मारे।।
रोझ रीछ बहु भांति बिदारे।।
फतेसाह कोपा तबि राजा।।
लोह परा हम सो बिनु काजा।।3।।

शब्दार्थ : सिंघ–शेर। बिदारे–मारे। फतेसाह–श्री नगर गढ़वाल का राजा।

भावार्थ : उस जंगल के शेर मैंने चुन-चुन कर मार दिये। कई प्रकार के रीछ, रोक्ष भी मारे। अचानक फतेशाह श्री नगर गढ़वाल के राजा ने बिना किसी कारण हम पर हमला कर दिया।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

तहा साह स्रीसाह संग्राम कोपे।।
पंचो बीर बंके प्रिथी पाइ रोपे।।
हठी जीतमल्लं सु गाजी गुलाबं।।
रणं देखीऔ रंगरूपं सहाबं।।4।।

शब्दार्थ : पंचो बीर–पाँच शूरवीर, श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की भुआ के पाँच बांके शूरवीर सपुत्र–संग्राम शाह, जीतमल, गुलाब राय, माहरी चंद और गंगा राम। सहाबं–लाल।

भावार्थ : इस युद्ध में श्री संगोशाह बड़े क्रोधित होकर लड़े। पाँचो शूरवीर भाइयों ने अपने पाँव धरती पर जमा लिये। रणभूमि देख कर जीत मल और गुलाब चंद के चेहरे वीररस से लाल हो गये।

हठियो माहरी चंदयं गंग रामं।।
जिने कितीयं जितीयं फौज तामं।।
कुपे लाल चंदं कीए लाल रूपं।।
जिनै गंजीयं गरब सिंघं अनूपं।।5।।

शब्दार्थ : कितीयं–कितनी। तामं–उन्होंने। गंजीयं–गर्जना। गरब–अहंकार।

भावार्थ : माहरी चंद बड़ा हठीला जवान था। गंगा राम ने जाने कितने ही शत्रुओं को मार गिराया था। लाल चंद क्रोध से लाल हो कर युद्ध के मैदान में डट गया, जिसकी गरज से शेरों का

अहंकार भी टूट गया।

कुपिओ माहरू काहरू रूप धारे।।
जिनै खांन खावीनीयं खेत मारे।।
कुपिओ देवतेसं दयाराम जुद्धं।।
कीयो द्रोण की जिंउ महां जुद्ध सुद्धं।।6।।

शब्दार्थ : माहरू–माहरी चंद। काहरू–प्रलय। खावीनीयं–खानों के खान। खेत–युद्ध का मैदान। कुपिओ–क्रोधित। देवतेसं–ब्राह्मण। द्रोण–द्रोणाचार्य।

भावार्थ : महारी चंद प्रलय का रूप धार कर बड़े क्रोध से आया। जिसने बड़े-बड़े खूनी ख़ानों को युद्ध में मार गिराया। उत्तम ब्राह्मण दयाराम बड़े क्रोध से युद्ध के मैदान में आए और द्रोणाचार्य जैसे महान् युद्ध किया।

क्रिपाल कोपीयं कुतको संभारी।।
हठी खानहयात के सीस झारी।।
उठी छिच्छि इच्छं कढा मेझ जोरं।।
मनो माखनं मट्टकी कान फोरं।।7।।

शब्दार्थ : कुतको–लाल रंग का मोटा लठ। छिच्छि–छींटे। इच्छं–इस प्रकार। मेझ–चरबी। जोरं–जोर से।

भावार्थ : कृपाल नामक वीर अपना लठ पकड़कर बड़े जोश से युद्ध के मैदान में आया। उसने लठ हयात ख़ान के सिर पर जोर से मारा। उसकी खोपड़ी फूट गई और खोपड़ी में से चरबी की छीटें ऐसे उड़ीं जैसे श्री कृष्ण जी ने माखन की मटकी फोड़ दी हो।

तहां नंद चंदं कीयो कोपु भारो।।
लगाई बरच्छी क्रिपाणं संभारो।।

तुटी तेग त्रिक्खी कढे जम्मदढ्ढं।।
हठी राखीयं लज्ज बंसं सनढ्ढं।।8।।

शब्दार्थ : तुटी–टूटी। त्रिक्खी–तेज। जम्मदढ्ढं–कटार। बंसं–वश। सनढ्ढं–सोढ़ी।

भावार्थ : उधर युद्ध के मैदान में दीवान नंद चंद ने बड़े क्रोध से अपनी बरछी अपने अंग से लगा ली और तलवार भी संभाल ली। युद्ध करते समय उसकी तलवार टूट गई। उसने फिर कटार से युद्ध किया। इस प्रकार शूरवीर योद्धाओं ने सोढी वंश की लाज रख ली।

तहां मातलेयं क्रिपालं क्रुद्धं।।
छकियो छोभ छत्री करयो जुद्ध सुद्धं।।
सहे देह आपं महाबीर बाणं।।
करो खान बानीन खाली पलाणं।।9।।

शब्दार्थ : मातलेयं–मामा। छकियो–खाना। छोभ–गुस्सा। बानीन–बाण चलाने वाले। पलाणं–घोड़े की काठी।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी के मामा कृपाल चंद जी ने युद्ध के मैदान में बड़ा रोष दिखाया। उस सूरमे वीर ने बड़ा भयानक युद्ध किया। उस शूरवीर ने अपने शरीर पर बड़े तीर सहे तथा बाँके पठानों के घोड़ो की काठियों को खाली कर दिया अर्थात अनेक पठानों को मौत के घाट उतार दिया।

हठियो साहबं चंद खेतं खत्रियाणं।।
हने खान खूनी खुरासान भानं।।
तहां बीर बंके भली भांति मारे।।
बचे प्रान लैकै सिपाही सिधारे।।10।।

शब्दार्थ : खेतं–युद्ध का मैदान। खत्रियाणं–क्षत्रिय।

भावार्थ : वहाँ शूरवीर क्षत्रियों की आन को रखने वाला साहिब

चंद युद्ध के मैदान में आकर खड़ा हो गया। उसने हठीले ख़ान मार दिये तथा खुरासान के कई बड़े-बड़े पठानों को मार गिराया, उसकी मार से जो बच गए, वे अपनी जान बचा कर युद्ध के मैदान से भाग खड़े हुए।

तहां साह संग्राम कीने अखारे।।
धने खेत मो खान खूनी लतारे।।
न्रिपं गोपलायं खरो खेत गाजै।।
म्रिगा झुंड मद्ध्यिं मनो सिंघ राजै।।11।।

शब्दार्थ : अखारे–युद्ध का मैदान (अखाड़ा)। म्रिगा झुंड–हिरणों का समूह। सिंघ–शेर।

भावार्थ : इस युद्ध क्षेत्र में संगोशाह ने बड़े-बड़े करतब दिखाए। उसने बड़े-बड़े योद्धाओं के दलों को अपने पैरों के नीचे रौंद डाला। दूसरी ओर राजा गोपाल चंद गुलेरिया मैदान में आकर ऐसे गर्जने लगा जैसे हिरनों के झुण्ड में शेर गर्जता है।

तहां एक बीरं हरीचंद कोपयो।।
भली भांति सो खेत मो पाव रोपयो।।
महां क्रोध कै तीर तीखे प्रहारे।।
लगै जौनि के ताहि पारै पधारे।।12।।

शब्दार्थ : तीखे–तेज। प्रहारे–चोट। जौनि के–जिसके।

भावार्थ : उस युद्ध में राजा हरी चंद भी आकर गर्जना करने लगा। उसने युद्ध में अपना पैर जमा लिया। उसने बड़े क्रोध से तीर चलाये, वे तीखे तीर जिसको लगते, शरीर के आर-पार हो जाते।

।।रसावल छंद।।

हरीचंद क्रुद्धं।।हने सूर सुद्धं।।
भले बाण बाहे।।बडे सैन गाहे।।13।।

शब्दार्थ : सुद्धं–अच्छा (पवित्र)।
भावार्थ : राजा हरी चंद जी को बहुत क्रोध आ गया उसने अच्छे-अच्छे योद्धाओं को मार गिराया। उन्होंने बड़ी योग्यता से तीर चलाये और अनेक योद्धाओं को मार डाला।

रसं रुद्र राचे।। महां लोह माचे।।
हने ससत्रधारी।। लिटे भूप भारी।।14।।

शब्दार्थ : रसं रुद्र–रौद्र रस (क्रोधित होकर)। लिटे–गिर गए।
भावार्थ : राजा हरी चंद जी रौद्र रस में डूबे, लोहे के समान लाल हो कर चमके। उन्होंने बड़े-बड़े शस्त्रधारियों को मार गिराया। बंड़े-बड़े राजा युद्ध के मैदान मे मर कर गिर गये।

तबै जीत मल्लं।। हरीचंद भल्लं।।
ह्रिदै अैंच मारयो।। सु खेतं उतारयो।।15।।

शब्दार्थ : अैंच–खींचकर। उतारयो–नीचे गिरा देना।
भावार्थ : हरी चंद जी ने उस समय जीत मल पर बड़ी ज़ोर से नेज़ा मारा जो उसकी छाती में लगा तथा वह रणभूमि में गिर गया।

लगे बीर बाणं।। रिसियो तेजि माणं।।
समुह बाज डारे।। सुवरगं सिधारे।।16।।

शब्दार्थ : माणं–अभिमान। बाज–घोड़े। सुवरगं–स्वर्ग।
भावार्थ : जब भी शूरवीर को बाण लगता उसका अभिमान वहीं पर चूर हो जाता और वह घोड़े को छोड़ कर स्वर्ग सिधार जाता।

।।भुजंग प्रयात छंद।।
खुलै खान खूनी खुरासान खग्गं।।

परी ससत्र धारं उठी झाल अग्गं।।
भई तीर भीरं कमाणं कड़क्के।।
गिरे बाज ताजी लगे धीर धक्के।।17।।

शब्दार्थ : खुलै–मियान में से तलवार निकालना (खोलना)। बाज–घोड़े।

भावार्थ : खूनी पठानों ने खुरासान की तलवारें निकाल ली। शस्त्र जब एक दूसरे से टकराते हैं तो उनमें से आग की लपटें निकलती है वहाँ तीरों की भीड़ लग गई थी और तलवारें कड़क रही थीं। घोड़े भी घायल हो कर गिर रहे थे तथा योद्धाओं को एक दूसरे के धक्के लग रहे थे।

बजी भेर भुंकार धुक्के नगारे।।
दुहू ओर ते बीर बंके बकारे।।
करे बाहु आघात ससत्रं प्रहारं।।
डकी डाकणी चांवडी चीतकारं।।18।।

शब्दार्थ : भेर–छोटे नगाड़े। भुंकार–भू-भू कर के। बकारे–गर्जन। आघात–चोट। प्रहारं–मारना। डाकणी–चुड़ैल। चांवडी–चीलें। चीतकारं–चीकना।

भावार्थ : रणभूमि में छोटे नगाड़े की आवाज़ हुई तथा नगाड़े गूँजे। दोनों ओर के योद्धा एक-दूसरे को ललकार रहे थे। शूरवीर अपने बाहु बल से शस्त्रों के साथ वार कर रहे थे। चुडैल और चीलें चीख रही थीं।

।।दोहरा।।

कहा लगे बरनन करौ मचियो जुद्धु अपार।।
जे लुज्झे जुज्झे सभे भज्जे सूर हजार।।19।।

शब्दार्थ : अपार–भारी युद्ध। लुज्झे–लड़े।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि मैं कहाँ तक युद्ध

का वर्णन करुँ। बड़ा भयानक युद्ध हुआ। जो आमने-सामने हो कर लड़े वे शहीद हो गए। हज़ारों भीरू योद्धा डर कर युद्ध के मैदान से भाग खड़े हुए।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

भजियो साह पाहाड़ ताजी त्रिपायं।।
चलियो बीरीया तीरीया ना चलायं।।
जसो डढ्ढवालं मधुक्कर सु साहं।।
भजे संगि लै कै सु सारी सिपाहं।।20।।

शब्दार्थ : पाहाड़–पर्वत। साहं–राजा। सिपाहं–फौज।

भावार्थ : अंत में पहाड़ी राजा शाह अपने घोड़ों को युद्ध के मैदान से भगा ले गया। वीर सिंह भी भाग गया तथा तीर न चला सका। फिर जसवाल के केसरी चंद और डढवाल का मधुकर शाह भी अपनी सेना को लेकर युद्ध के मैदान से भाग खड़ा हुआ।

चक्क्रत चैपियो चंद गाजी चंदेलं।।
हठी हरीचंदं गहे हाथ सेलं।।
करियो सुआमि धरमं महा रोस रुज्झियं।।
गिरियो टूक टूक है इसो सूर जुज्झियं।।21।।

शब्दार्थ : चक्क्रत–हैरान, चकित होना। चैपियो–जोश में आ कर। सुआमि धरमं–वफादारी, नमक हलाली। रुज्झियं–जुट गये।

भावार्थ : राजा बहादुर चंदेलिया हैरान हो कर, जोश में आया। उधर हठी हरी चंद राजा भी हाथ में बरछा पकड़ कर युद्ध के लिये आया। वह अपने स्वामी धर्म की पालना करते हुये, क्रोधित हो युद्ध करने लगा। युद्ध में उसे वीरगति प्राप्त हुई।

तहां खान नैजाबतै आन कै कै।।
हनिओ साह संग्राम को ससत्र लै कै।।
कितै खान बानीनहूं असत्र झारे।।
सही साह संग्राम सुरगं सिधारे।।22।।

शब्दार्थ : हनिओ–मार देना। बानीनहूं–प्रधान। सही–ठीक।

भावार्थ : वहाँ नजाबत खाँ ने युद्ध के मैदान में आकर संगोशाह पर वार किये। कई प्रधान ख़ानों (पठानों) को शस्त्रों, तीर तथा बरछियों से मारा। अंत मे संगोशाह भी शहीद होकर स्वर्ग को चले गए।

।।दोहरा।।

मारि नजाबत खांन कौ संगो जुझै जुझार।।
हाहा इह लोकै भइओ सुरग लोक जैकार।।23।।

शब्दार्थ : जुझार–शहीद। इह लोकै–धरती लोक। सुरग–स्वर्ग।

भावार्थ : नजाबत खाँ को मारकर संगोशाह स्वयं भी शहीद हो गया। उसके शहीद होने से इस लोक में हाहाकार मच गया पर स्वर्गलोक मे जय जयकार हुई।

।।भुजंग छंद।।

लखे साह संग्राम जुज्झे जुझारं।।
तवं कीट बाणं कमाणं संभारं।।
हनियो एक खानं खिआलं खतंगं।।
डसियो सत्रु को जानु सयामं् भुजुंगं।।24।।

शब्दार्थ : लखे–देखे। जुझारं–शहीद। खिआलं–ध्यान। सयामं–काले। भुजंगं–नाग।

भावार्थ : श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि संगोशाह को शहीद होते देख कर मैंने अपना धनुष्य बाण संभाला। एक पठान को निशाना बनाकर बाण चलाया। ऐसे प्रतीत हुआ जैसे दुश्मन को काले नाग ने डस लिया हो।

गिरियो भूम सो बाण दूजो संभारयो।।
मुखं भीखनं खान के तान मारयो।।
भजियो खान खूनी रहियो खेत ताजी।।
तजे प्राण तीजे लगे बाण बाजी।।25।।

शब्दार्थ : तजे–त्याग दिए। बाजी–घोड़ा।

भावार्थ : वह पठान धरती पर गिर गया। फिर दूसरा बाण चलाया तो वह अपने आपको संभाल कर युद्ध के मैदान से भाग खड़ा हुआ। पीछे केवल उसका घोड़ा ही रह गया। मेरा तीसरा बाण घोड़े को लगा। उसने अपने प्राण त्याग दिए।

छुटी मूरछना हरीचंदं संभारे।।
गहे बाण कामाण भे अैच मारे।।
लगे अंग जांके रहे ना संभारं।।
तनं तिआगते देवलोकं पधारं।।26।।

शब्दार्थ : मूरछना–बेहोशी। अैच–खींचकर।

भावार्थ : उसी समय हरी चंद को होश आया और वह फिर युद्ध के मैदान में आ डटा। उसने कमान से बाण खींच कर चलाये। जिसके शरीर पर बाण लगते उसको होश नही रहती थी और वह प्राण त्याग कर स्वर्ग को चला जाता।

दुयं बाण खैचे इकं बार मारे।।
बली बीर बाजीन ताजी बिदारे।।
जिसै बान लागै रहै न संभारं।।
तनं बेधि कै ताहि पारं सिधारं।।27।।

शब्दार्थ : बिदारे–मारे। तनं बेधि कै–शरीर के आर पार हो जाना।

भावार्थ : राजा हरी चंद इतना वीर योद्धा था कि दो-दो बाणों को कमान पर रख कर खींच लेता था। वह इतना बलवान था

कि उसने बड़े-बड़े वीर तथा उनके घोड़े मार दिए। हरी चंद का बाण जिसको भी लगता उसका होश उड़ जाता और वह वहीं प्राण त्याग कर स्वर्ग सिधार जाता।

सभै सव्राम धरमं सु बीरं संभारे।।
डकी डाकणी भूत प्रेतं बकारे।।
हसै बीर बैताल औ सुद्ध सिद्धं।।
चवी चावडीयं उडी ग्रिद्ध ब्रिद्धं।।28।।

शब्दार्थ : सव्राम–स्वामी। डाकणी–चुड़ैल। बैताल–राक्षस का नाम। सिद्धं–करामाती साधु।

भावार्थ : श्रेष्ठ योद्धा हरी चंद ने अपने स्वामीधर्म का पालन किया। युद्ध के मैदान से सारी सेना भाग गई। भूत-प्रेत गरज रहे थे। सारे वीर, बेताल तथा सिद्ध अठहास कर रहे थे। चीलें तथा गिद्ध मुर्दों का मास खाने के लिए उड़ रही थीं।

हरीचंद कोपे कमाणं संभारं।।
प्रथम बाजीयं ताण बाणं प्रहारं।।
दुतीय ताक कै तीर मो कौ चलायं।।
रखिओ दईव मै कान छुवै कै सिधायं।।29।।

शब्दार्थ : बाजीयं–घोड़े। मो कौ–मुझपर। दईव–प्रभु। छुवै–छूकर।

भावार्थ : हरी चंद ने बड़े आवेश से कमान संभाली और बाण मेरे घोड़े को मारा। दूसरा बाण मुझे मारा। तीर मेरे कान को छु कर निकल गया और मुझे उस परम पिता परमात्मा ने बचा लिया।

त्रितीय बाण मारयो सु पेटी मझारं।।
बिधिअं चिलकतं दुआल पारं पधारं।।
चुभी चिंच चरमं कछु घाइ न आयं।।

कलं केवलं जान दासं बचायं।।30।।

शब्दार्थ : त्रितीय–तीसरा। चरमं–चमड़ी। कलं–काल। केवलं–सिर्फ।

भावार्थ : हरी चंद ने तीसरा बाण मेरी कमर की पेटी पर मारा। वह तीर पेटी को चीरता हुआ निकल गया। उस तीर की नोक थोड़ी मेरी चमड़ी पर लगी पर कोई विशेष चोट नही पहुँची। उस प्रभु ने मुझे अपना दास समझ कर बचा लिया।

।।रसावल छंद।।

जबै बाण लागयो।। तबै रोस जागयो।।
करं लै कमाणं।। हनं बाण ताणं।।31।।

शब्दार्थ : रोस–क्रोध। करं–हाथ। हनं–मारना।

भावार्थ : जब मुझे हरी चंद का बाण लगा तो मुझ में वीर रस जागृत हो गया। मैंने कमान हाथ में पकड़ कर बाण चलाया।

सभै बीर धाए।। सरोघं चलाए।।
तबै ताकि बाणं।। हनयो एक जुआणं।।32।।

शब्दार्थ : सरोघं–बहुत सारे तीर।

भावार्थ : जब मैने बाणों की वर्षा की तब सब वीर मैदान छोड़ भाग खड़े हुये। फिर मैंने एक जवान को निशाना बनाकर बाण चलाया तथा उसको मार गिराया।

हरीचंद मारे।। सु जोधा लतारे।।
सु कारोड़ रायं।। वहै काल धायं।।33।।

शब्दार्थ : रायं–राजा। धायं–मार दिया।

भावार्थ : मैंने राजा हरी चंद को मार दिया तथा उसके योद्धाओं को लताड़ दिया। कारोड़ के राजा को भी काल ने मार दिया।

रणं तिआगि भागे।। सभै त्रास पागे।।
भई जीत मेरी।। क्रिपा काल केरी।।34।।

शब्दार्थ : त्रास–डर। पागे–भाग गये।

भावार्थ : सब राजा डर के मारे युद्ध भूमि छोड़ कर भाग खड़े हुये। हे अकाल पुरुष ! तेरी कृपा से ही मुझे विजय प्राप्त हुई है।

रणं जीति आए।। जयं गीत गाए।।
धनं धार बरखे। सभै सूर हरखे।।35।।

शब्दार्थ : जयं–जय-जयकार। धनं धार–धन की वर्षा। हरखे–खुश हो गए।

भावार्थ : युद्ध में विजयी होकर सभी शूरवीर अपने डेरे पर आ गए। विजय की खुशी में जयघोष होने लगा। मैंने सभी बहादुर योद्धाओं को धन बाँटा जिससे सभी योद्धा प्रसंन हो गए।

।।दोहरा।।

जुद्ध जीत आए जबै टिकै न तिन पुर पाव।।
काहलूर मै बांधियो आन अनंदपुर गाव।।36।।

शब्दार्थ : बांधियो–बसाया।

भावार्थ : युद्ध में जीत की प्रसंनता से वीरों के पैर पाँउटा साहिब में नही टिक रहे थे। फिर काहलूर की रियासत में आकर आनंदपुर गांव बसाया।

जे जे नर तह्ह ना भिरे दीने नगर निकार।।
जे तिह ठउर भले भिरे तिनै करी प्रतिपार।।37।।

शब्दार्थ : तह्ह–वहाँ। निकार–निकाल। प्रतिपार–पालन पोषण।

भावार्थ : जो योद्धा इस भंगाणी के युद्ध में नहीं लड़े उनको हमने नगर से बाहर निकाल दिया। जिन्होंने युद्ध में आमने-सामने होकर मुकाबला किया उसका अच्छी तरह आदर सत्कार किया।

।।चउपई।।

बहुत दिवस इह भांति बिताए।।
संत उबार दुसट सभ घाए।।
टांग टांग करि हने निदाना।
कूकर जिमि तिन तजे पराना।।38।।

शब्दार्थ : उबार–रक्षा करना। हने–मारना। निदाना–अज्ञानी। कूकर–कुत्ता।

भावार्थ : इस प्रकार हमने बहुत समय सुखपूर्वक बिताया। संत जनों की रक्षा की तथा दुष्टों का नाश किया। उन अज्ञानी दुष्टों को टांग कर मार दिया तथा उन्होंने कुत्तों के समान प्राण त्याग दिये।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे भंगाणी जुद्ध बरननं नाम
असटमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।8।।
अफजू।।320।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ का भंगाणी युद्ध वर्णन करने वाला आठवां अध्याय समाप्त हुआ। शुभ है।

9 नदौन का युद्ध

नदौन कांगड़े के जिले हमीरपुर की तहसील खाना दोआबा के गांव कटौच राजपूतों की राजधानी है। यह स्थान कांगड़े से दक्षिण पूर्व में 2 मील की दूरी पर दरिया ब्यास के किनारे है। पहाड़ी राजाओं ने औरंगज़ेब की सरकार को तीन वर्ष से कर (टैक्स) नहीं दिया। इस कर को इकट्ठा करने के लिए औरंगज़ेब ने मियां ख़ान को संवत 1746 में भेजा। मियाँ ख़ान स्वयं तो जम्मू की ओर चला गया तथा अपने भतीजे अल. फ ख़ान को फौज देकर पहाड़ी राजाओं की ओर भेज दिया। अलफ़ ख़ान ने कांगड़े जाकर रुपये पैसे देकर समझौता कर लिया। उसने अलफ़ ख़ान को कहा कि सबसे बड़ा राजा भीम चंद है इसलिए सबसे पहले उससे मुआवज़ा लिया जाए। दयाल चंद बिजड़वालिये ने इस बात की पुष्टि कर दी। इनकी प्रेरणा से अलफ़ ख़ान ने कहलूर पर आक्रमण कर दिया। उसने भीम चंद को संदेश भेजा कि वह तीन साल का कर भुगतान करे अन्यथा युद्ध के लिए तैयार हो जाए। भीम चंद ने कर तो नहीं दिया परंतु युद्ध के लिए तैयार हो गया। उसने अपनी सहायता के लिए और राजाओं को बुला भेजा। भीम चंद चाहे श्री गुरु गोबिंद सिंह का विरोधी था परंतु इस अवसर पर उसने सभी वैर भाव त्याग कर गुरु जी से सहायता मांगी। गुरु जी ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली तथा नदौन पहुँच गए। बड़ा भयानक युद्ध हुआ जिसमें कई शूरवीर योद्धा शहीद हो गए तथा अलफ़ ख़ान ने नदी के पार डेरा डाल लिया। अंत में

जलती हुई आग को छोड़कर और धौंसे बजते हुए छोड़कर वहाँ से भाग गया। भीम चंद ने विजय के उन्माद में गुरु जी को अपने पास आठ दिन तक रखा। गुरु जी उसको अपार खुशियाँ देकर स्वयं आनंदपुर साहिब लौट आए। रास्ते में वे आलसून गाँव पहुँचे जहाँ के लोग सिक्खों को बहुत तंग करते थे। उनको लूट कर उजाड़ दिया। दूसरी ओर भीम चंद कृपाल चंद कटोचिये तथा दयाल चंद बिजड़वालिये के साथ समझौता करने के लिए चल पड़ा। इस अध्याय में 3 चौपाइयाँ, 2 दोहे, 12 भुजंग, 3 मधुभार, 4 रसावल छंद मिलाकर कुल 24 छंद हैं।

।।अथ नदउन का जुद्ध बरननं।।

।। अब नदौन का युद्ध वर्णन ।।

।।चौपई।।

बहुत कालि इह भांति बितायो।।
मीआखान जंमू कह आयो।।
अलफखान नादौण पठावा।।
भीम चंद तन बैर बढावा।।1।।

शब्दार्थ : बहुत कालि–पांउटा साहब से वापिस आने से पहले 2 1/2 वर्ष का समय। बितायो–व्यतीत करना। तन–साथ। बैर–विरोध।

भावार्थ : इस प्रकार आनंदपुर साहब में बहुत समय सुख शांति से व्यतीत किया। औरंगज़ेब ने मियां ख़ान को कर (टैक्स) इकट्ठा करने के लिए जम्मू भेजा। उसने अपने साथी अलफ़ ख़ान को नदौन भेजा। कर इकट्ठा करने के लिए उसने भीम चन्द के साथ शत्रुता बढ़ा ली।

जुद्ध काज न्रिप हमै बुलायो।।
आपि तवन की ओर सिधायो।।
तिन कठगड़ नवरस पर बांधो।।
तीर तुफंग नरेसन सांधो।।2।।

शब्दार्थ : न्रिप–राजा भीम चंद। कठगड़–लकड़ी का किला। नवरस–टीला। तुफंग–बंदूक। नरेसन–राजा।

भावार्थ : राजा भीम चंद ने अलफ़ ख़ान के साथ युद्ध करने के लिए गुरु जी को बुलाया। स्वयं उसके साथ समझौता करने के लिए चल पड़ा। उस अलफ़ ख़ान ने नवरस के टीले पर किला बना लिया। इधर राजाओं ने अपने हथियार तीर तथा बंदूक संभाल लिए।

।।भुजंग छंद।।

तहा राज सिंघं बली भीमचंदं।।
चड़िओ राम सिंघं महां तेजवंदं।।
सुखंदेव गाजी जसारोट राजं।।
चड़ो क्रुद्ध कीने करे सरब काजं।।3।।

शब्दार्थ : बली–बलवान। सुखंदेव–जसारोट का राजा सुखदेव।

भावार्थ : भीम चंद की सहायता के लिए वीर योद्धा राज सिंह तथा राम सिंह अपनी अपनी सेना लेकर युद्ध के मैदान में आ गए। सुखदेव जसरोटीया राजा भी बड़े आवेश के साथ युद्ध करने के लिए पहुँच गया।

प्रिथी चंद चड़िओ डढे डढवारं।।
चले सिध हुऔ काज राजं सुधारं।।
करी ढूक ढोअं किरपालचंदं।।
हटाए सभै मारि कै बीर ब्रिंदं।।4।।

शब्दार्थ : डढवारं–डढवालिये। ब्रिंदं–योद्धाओं का समूह।

भावार्थ : गढ़वाल का राजा पृथ्वी चंद भी युद्ध की तैयारी करके रणक्षेत्र में पहुँच गया। ये सब राजा भीम चंद का काम संवारने (सहायता करने) के लिए एक होकर युद्ध के मैदान में पहुँच गए। इन्होंने अपना पड़ाव युद्ध के मैदान के निकट कर लिया, कृपाल चंद ने डटकर मुकाबला किया। उसने बड़े-बड़े योद्धाओं को खदेड़ कर पीछे हटा दिया।

दुतीय ढोअ ढूकै वहै मारि उतारी।।
खरे दांत पीसै छुभै छत्रधारी।।
उतै वै खरे बीर बंबै बजावैं।।
तरे भूप ठांढे बडो सोकु पावैं।।5।।

शब्दार्थ : दुतीय–दूसरी। छूभै–गुस्से में दाँत पीसना। छत्रधारी –राजा। भूप–राजा।

भावार्थ : दूसरी बार शूरवीर फिर आगे बढ़े। उन्होंने दुश्मनों को खदेड़ कर पीछे धकेल दिया। पहाड़ी राजा नीचे खड़े दाँत पीसते रह गए। उधर शूरवीर विजय की खुशी में धौंसे बजा रहे थे, इधर पहाड़ी राजा नीचे खड़े शोक मना रहे थे।

तबै भीमचंदं कीयो कोप आपं।।
हनूमान के मंत्र को मुख जापं।।
सभै बीर बोले हमै भी बुलायं।।
तबै ढोअ कै कै सु नीके सिधायं।।6।।

शब्दार्थ : कोप–गुस्सा। ढोअ–इकट्ठे।

भावार्थ : उस समय भीम चंद बहुत क्रोधित हुआ। उसने हनुमान जी के मंत्र का जाप किया। उसने सब योद्धाओं को बुला लिया तथा गुरु गोबिंद सिंह जी को भी बुला भेजा। उस समय सब इकट्ठे होकर युद्ध क्षेत्र को चल पड़े और आक्रमण कर दिया।

सभै कोप कै कै महांबीर ढूके।।
चले बारिबे बारको जिउ भभूके।।
तहां बिझुड़िआलं हठियो बीर दयालं।।
उठियो सैन लै संगि सारी क्रिपालं।।7।।

शब्दार्थ : बारिबे–जलाने के लिए। भभूके–आग की लपटे।
भावार्थ : समस्त वीर क्रोधित हो कर युद्ध के लिए आगे बड़े। ऐसे लग रहा था जैसे बाड़ को जलाने के लिए अग्नि की लपटें बड़ रहीं हों। दूसरी ओर बिजड़वालिया दयाल चंद और क़ांगड़े का कृपाल चंद सेना लेकर आगे बड़ा।

।।मधुभार छंद।।
कुप्पिओ क्रिपाल।। नच्चे मराल।।
बज्जे बजंत।। क्रूरं अनंत।।8।।

शब्दार्थ : कुप्पिओ–क्रोध। मराल–हँस जैसे घोड़े। बज्जे–बजना।
भावार्थ : कृपाल चंद बड़ा क्रोधित होकर अपने हँस जैसे घोड़े नचाने लगा। बाजे बज रहे थे तथा उनका नाद बहुत भयानक था।

जुज्झंत जुआण।। बाहै क्रिपाण।।
जीअ धारि क्रोध।। छड्डे सरोघ।।9।।

शब्दार्थ : जुज्झंत–लड़ना। क्रिपाण–तलवार। सरोघ–बाणों की वर्षा करना।
भावार्थ : वीर योद्धा लड़ रहे थे तथा तलवारें चला रहे थे, वे क्रोधित होकर बाणों की वर्षा करने लगे।

लुज्झै निदाण।। तज्जंत प्राण।।
गिर परत भूम। जणु मेघ झूम।।10।।

शब्दार्थ : लुज्झै–लड़ते थे। मेघ–बादल।

भावार्थ : वीर योद्धा लड़ते-लड़ते प्राण त्याग देते थे, वे भूमि पर ऐसे गिर पड़ते थे जैसे बादल धरती पर झुक गया हो।

।।रसावल छंद।।

क्रिपाल कोपियं।। हठी पाव रोपियं।
सरोघं चलाए।। बडे बीर घाए।।11।।

शब्दार्थ : कोपियं–क्रोध। पाव–पैर। रोपियं–गाड़ देना।

भावार्थ : कृपाल चंद को बड़ा क्रोध आ गया। उसने युद्ध में अपने पैर गाड़ दिए। उसने अनेक बाण चलाए तथा बड़े-बड़े योद्धाओं को मार गिराया।

हणे छत्रधारी।। लिटे भूप भारी।।
महां नाद बाजे।। भले सूर गाजे।।12।।

शब्दार्थ : हणे–मर गए। छत्रधारी–राजा। लिटे–लेट गए।

भावार्थ : बड़े-बड़े छत्रधारी राजा मृत होकर भूमि पर गिर पड़े (लेट गए)। बड़े मारु बाजे बज रहे थे तथा बड़े-बड़े योद्धा गरज रहे थे।

क्रिपालं क्रुधं।। कीयो जुद्ध सुद्धं।।
महांबीर गज्जे।। महां सार बज्जे।।13।।

शब्दार्थ : क्रुधं–क्रोध। सार–शस्त्र।

भावार्थ : कृपाल चंद ने बड़े क्रोध से युद्ध किया, बड़े-बड़े वीर गरज रहे थे। शस्त्र पर शस्त्र बज रहे थे।

करियो जुद्ध चंडं।। सुणियो नाव खंडं।।
चलियो ससत्र बाही। रजौती निबाही।।14।।

शब्दार्थ : करियो–किया। चंडं–तेज। नाव खंडं–नव खण्ड। ससत्र–शस्त्र। रजौती–राजपूत धर्म।

भावार्थ : इतना भयानक युद्ध हुआ कि नव खण्ड में उसका वर्णन होने लगा। वह शस्त्र चलाता हुआ आगे बढ़ता गया। राजपूती आन को निभाया।

।।दोहरा।।

कोप भरे राजा सभै कीनो जुद्ध उपाइ।।
सैन कटोचन की तबै घेर लई अरराइ।।15।।

शब्दार्थ : कोप–क्रोध।

भावार्थ : सभी राजा क्रोधित हो गए तथा उन्होने युद्ध करने के सभी उपाय किए। कृपाल चंद ने कटोचियों की सेना को ललकार कर घेर लिया।

।।भुजंग छंद।।

चले नांगलू पांगलू वेदड़ोलं।।
जसवारे गुलेरे चले बांध टोलं।।
तहां एक बाजियो महांबीर दयालं।।
रखी लाज जौनै सभै बिझड़वालं।।16।।

शब्दार्थ : नांगलू–नंगल कहलूर के राजा मधर चंद का बेटा। पांगलू–चंबे के राजा के पांगली इलाके के राजपूत। वेदड़ोलं–गौत के राजपूत। जसवारे–जसवाल राजपूत। गुलेरे–कटौच की एक शाखा। बाजियो–डटकर सामना करना।

भावार्थ : नांगलू, पांगलू तथा वेद डौल जाति के राजा युद्ध के लिए चल पड़े। जसवारे तथा गुलेरे भी टोलियाँ बना कर चल पड़े। दूसरी ओर महायोद्धा दयाल चंद अलफ़ ख़ान की सहायता करने के लिए युद्ध के मैदान में डट गया। उसने सारे बिजड़वालियों की लाज रख ली।

तवं कीट तौलौ तुफंगं संभारो।।

हिदे एक रावंत के तक्कि मारो।।
गिरियो झूम भूमै करियो जुद्ध सुद्धं।।
तऊ मारि बोलियो महां मानि क्रुद्धं।।17।।

शब्दार्थ : तवं–तुम्हारा। कीट–दास। तुफंगं–बंदूक। मारि–मारो। महां मानि–महाबली।

भावार्थ : हे मेरे प्रभु ! मैंने, तुम्हारे दास ने, भी बंदूक संभाल ली तथा निशाना लगा कर एक राजा की छाती में गोली मारी। गोली लगते ही वह धरती पर गिर गया। फिर भी उसने युद्ध का ध्यान किया और मारो-मारो ही बोलता रहा।

तजियो तुपकं बान पानं संभारे।।
चतुर बानयं लै सु सब्बियं प्रहारे।।
त्रियो बाण लै बाम पाणं चलाए।।
लगे या लगे ना कछू जानि पाए।।18।।

शब्दार्थ : तजियो–छोड़कर। तुपकं–बंदूक। चतुर–चार। बानयं–बाण। सब्बियं–दाया हाथ। बाम–बाया। पाणं–हाथ।

भावार्थ : फिर मैंने बंदूक छोड़कर हाथ में तीर कमान संभाल लिया। चार तीर पकड़ कर दायीं ओर चला दिया तथा तीन तीर बायीं ओर चला दिये। यह तीर किसी को लगे या न लगे कोई यह जान नहीं सका।

सु तउलउ दईव जुद्ध कीनो उझारं।।
तिनै खेद कै बारि के बीच डारं।।
परी मार बुंगं छुटी बाण गोली।।
मनो सूर बैठे भली खेल होली।।19।।

शब्दार्थ : दईव–अकाल पुरुष। उझारं–समाप्त करना। खेद कै–खदेड़ कर। बारि–पानी। बुंगं–फौज का उँचा स्थान। सूर–शूरवीर।

भावार्थ : उसी समय परमपिता परमात्मा ने युद्ध का पासा पलट दिया। युद्ध समाप्त कर दिया। राजाओं की सेना ने अलफ़ खान के योद्धाओं को खदेड़कर नदी के पानी में बहा दिया। उस उँचे टीले पर गोलियों की वर्षा होने लगी। उस समय ऐसे प्रतीत हो रहा था जैसे शूरवीर होली खेल रहे हों।

गिरे बीर भूमं सरं सांग पेलं।।
रंगे स्रोण बसत्रं मनो फाग खेलं।।
लीयो जीति बैरी कीया आन डेरं।।
तेऊ जाइ पारं रहे बारि केरं।।20।।

शब्दार्थ : भूमं–धरती। स्रोण–खून। बसत्रं–कपड़े। फाग–होली। तेऊ–वह। बारि–नदी। केरं–पाड़।

भावार्थ : शूरवीर योद्धा बरछी तथा तीरों से सने हुए भूमि पर गिर रहे थे। उनके वस्त्र खून से ऐसे रंगे हुए थे जैसे बसंत ऋतु मे होली खेल रहे हों। शत्रुओं को जीत लिया तथा अपने डेरे में आकर विश्राम किया। अलफ़ ख़ान तथा कटौचिये नदी के पार चले गए।

भई रात्र गुबार के अरध जामं।।
तबै छोरिगे बार देवै दमामं।।
सभै रात्रि बीती उदियो दिउसराणं।।
चले बीर चालाक खग्गं खिलाणं।।21।।

शब्दार्थ : अरध–आधी। जामं–पहिर। छोरिगे–छोड़कर। उदियो–निकलना। दिउसराणं–दिन का राजा सूर्य। चालाक–चतुर। खिलाणं–खिलाने वाला।

भावार्थ : जब आधी रात बीत गई तो अलफ़ ख़ान अपने सैनिकों सहित भाग गया। जाते समय वह कुछ सैनिकों को आग जला कर रखने तथा नगाड़े बजाने के लिए छोड़ गया ताकि दुश्मनों

को यही अंदेशा रहे कि दुश्मन अपने डेरे में है। दिन निकलने पर योद्धा हाथ में हथियार लेकर युद्ध करने के लिए चल पड़े।

भज्जयो अलफखानं न खाना संभारियो।
भजे और बीरं न धीरं बिचारियो।।
नदी पै दिनं असट कीने मुकामं।।
भलीभांति देखे सभै राज धामं।।22।।

शब्दार्थ : भज्जयो–भाग गया। खाना–भोजन।

भावार्थ : अलफ़ ख़ान भाग गया। उसको घर बार तथा भोजन की भी सुध-बुध न रही। और योद्धा भी भाग गये। उन्होंने रति भर भी धैर्य नहीं रखा। हमने आठ दिन तक नदी के किनारे अपना डेरा रखा तथा विश्राम किया तथा भीम चंद के महलों को अच्छी तरह देखा।

।।चौपई।।

इत हम होइ बिदा घरि आए।।
सुलह नमित वै उतहि सिधाए।।
संधि इनै उनकै संगि कई।।
हेत कथा पूरन इत भई।।23।।

शब्दार्थ : वै–भीम चंद। संधि–समझौता। हेत–इसलिए। इत–यहाँ पर।

भावार्थ : इधर हम (श्री गुरु गोबिंद सिंह जी) भीम चंद से विदा लेकर अपने निवास स्थान पर पहुँच गए। उधर समझौता करने के लिए वे अलफ़ ख़ान के पास चले गए। इन्होंने उनके साथ समझौता कर लिया। इस युद्ध की सारी कथा प्रेम पूर्वक समाप्त हुई।

।।दोहरा।।

आलसून कहह मारिकै इह दिसि कीयो पियान।।

भांति अनेकन के करे पुर अनंद सुख आन।।24।।

शब्दार्थ : आलसून–नदौना के पास एक गाँव।

भावार्थ : आलसून को लूटकर वह हमारी ओर चल पड़ा तथा आनंदपुर साहिब पहुँच कर कई प्रकार के सुख प्राप्त किए।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे नदौन जुद्ध बरननं नाम नौमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।9।।अफजू।।344।।

यहाँ श्री बचित्र नाटक ग्रंथ में नदौन युद्ध का युद्ध वर्णन करने वाला नवां अध्याय समाप्त हुआ। शुभ है। शेष 344 छंद पूर्ण हो चुके हैं।

10 खानजादे का आगमन

अलफ़ ख़ान हार कर लाहौर लौट गया। उसका हाल सुनकर दिलावर खां ने अपने बेटे को आनंदपुर साहिब भेजा। रात्रि का समय था, उसने चुपचाप नदी किनारे पर अपना डेरा डाल लिया। सरदार आलम सिंह ने जाकर श्री गुरु गोबिंद सिंह जी को सारा समाचार सुनाया। गुरु जी की आज्ञानुसार उस समय नगाड़े बजने लगे। इधर शोर सुनकर मुसलमानी सेना को पूर्ण विश्वास हो गया कि उनके आने की खबर श्री गुरु गोबिंद सिंह जी को मिल गई है। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी। वे बहुत परेशान थे तथा गुरु जी की फौज का धमाका सुनकर वे वहाँ से भाग खड़े हुए। रास्ते में उन्होंने बरवाँ गाँव को लूटा। फिर मलान की ओर बढ़ गए। इस अध्याय में 4 चौपाइयां, 2 दोहे, 2 नराज छंद, 2 भुजंग प्रयात छंद तथा कुल मिलाकर 10 छंद है।

।।चौपई।।

बहुत बरख इह भांति बिताए।।
चुनि चुनि चोर सभै गहि घाए।।
केतकि भाजि शहिर ते गए।।
भूख मरत फिरि आवत भए।।1।।

शब्दार्थ : बरख–वर्ष।

भावार्थ : आनंदपुर साहिब में कई वर्ष सुखपुर्वक बीते। आस-पास के चोर और बदमाशों को चुन-चुन कर मारा। कितने ही नगर छोड़कर भाग गए। जब वे भूखे मरने लगे तो वे शहर में वापिस आ गए।

तब लौ खान दिलावर आए।।
पूत अपन हम ओर पठाए।।
द्वैक घरी बीती निसि जबै।।
चड़त करी खानन मिलि तबै।।2।।

शब्दार्थ : पूत–बेटा। द्वैक–दो (2)। निसि–रात। खानन–पठान। मिलि–इकट्ठे हो कर।

भावार्थ : अलफ़ ख़ान हार कर दिलावर खान के पास लाहौर पहुँचा। उसने अपने बेटे रुस्तम ख़ान को लड़ाई करने भेजा। रात्रि की दो घड़ी बीतने पर पठानों ने इकट्ठे हो कर चढ़ाई कर दी।

जब दल पार नदी के आयो।।
आन आलमै हमै जगायो।।
सोरु परा सभही नर जागे।।
गहि गहि ससत्र बीर रिस पागे।।3।।

शब्दार्थ : आलमै–ड्यूटी के सरदार आलम सिंह। सोरु–शोर। गहि–पकड़ कर।

भावार्थ : जब पठानों का दल नदी के पार पहुँच गया तो आलम सिंह ने हमें जगाकर सेना के आने का समाचार सुनाया। चारों

ओर शोर मच गया और सब लोग जाग गए। सारे वीर योद्धा शस्त्र पकड़ कर गुस्से में भर गये।

छूटन लगी तुफंगै तबही।।
गहि गहि ससत्र रिसाने सबही।।
क्रूर भांति तिन करी पुकारा।।
सोरु सुना सरता के पारा।।4।।

शब्दार्थ : तुफंगै–बंदूक। रिसाने–क्रोधित होकर। क्रूर–निर्दयी। सरता–नदी।

भावार्थ : उसी समय बंदूके चलने लग गई। सब योद्धा शस्त्र पकड़ कर क्रोधित मुद्रा में दिखाई दे रहे थे। वे बड़े भयानक रूप से गरजे। नदी पार पठानों का शोर सुनाई देने लगा। शोर सुनकर पठानों ने हल्ला मचा दिया।

।।भुजंग प्रयात छंद।।
बजी भेर भुंकार धुंके नगारे।।
महांबीर बानैत बंके बकारे1।
भए बाहु आघात नच्चे मरालं।।
क्रिपा सिंधु काली गरज्जी करालं।।5।।

शब्दार्थ : बानैत–बाणधारी। आघात–चोट।

भावार्थ : भेरियां तथा छोटे नगाड़ो की आवाज़ गुँजने लगी। सुंदर बाँके जवान ललकारते हुए मैदान में आ गए। दोनों ओर से हमला शुरु हो गया। घोड़े नाचने लगे। डरावनी कालका आ कर मैदान में नाचने लगी।

नदीयं लखियो कालरात्रं समानं।।
करे सूरमा सीत पिंगं प्रमानं।।
इते बीर गज्जे भए नाद भारे।।

भजे खान खूनी बिना ससत्र झारे।।6।।

शब्दार्थ : कालरात्रं–मौत की रातं। सीत–सरदी। पिंगं–पिंगले। झारे–चलाये।

भावार्थ : पठानों ने नदी को मौत की रात के समान समझा। सर्दी इतने जोरों की पड़ रही थी कि वीर योद्धा सुन्न हो गए और पिंगलों जैसे हो गए। इधर वीर योद्धा गरज रहे थे, उनकी आवाज़ का शोर बहुत ऊँचा हो रहा था। इस भयानक शोर गुल को सुनकर कातिल पठान शस्त्र चलाये बिना ही भाग गए।

।।नाराज छंद।।

निलज्ज खान भज्जियो।।
किनी न ससत्र सज्जियो।।
सु तिआग खेत कौ चले।।
सु बीर बीरहा भले।।7।।

शब्दार्थ : निलज्ज–बेशर्म। बीरहा–वीरों को मारने वाले।

भावार्थ : बेशर्म पठान मैदान छोड़कर भाग गए। किसी ने भी शस्त्र नही चलाया। वे शूरवीर जो बलवान योद्धाओं को मारने वाले थे बिना युद्ध किये मैदान छोड़कर भाग गए।

चले तुरे तुराइकै।।
सके न ससत्र उठाइकै।।
न लै हथिआर गज्जही।।
निहार नारि लज्जही।।8।।

शब्दार्थ : तुराइकै–भाग कर। निहार–देखकर। नारि–स्त्री।

भावार्थ : वे घोड़े भगाकर ले गए, वे न तो शस्त्र उठा सके और न ही वे शस्त्र पकड़ कर गरजे। वे स्त्रियों से बढ़कर शर्मसार (लज्जित) हो गए।

।।दोहरा।।

बरवा गांउ उजार कै करे मुकाम भलान।।
प्रभ बल हमै न छुइ सकै भाजत भए निदान।।9।।

शब्दार्थ : मुकाम–पड़ाव। प्रभ बल–परमात्मा की कृपा से। निदान–मूर्ख।

भावार्थ : भागते हुए पठानों ने रास्ते मे बरवा गांव उजाड़ दिया तथा भलान गांव में अपना पड़ाव (डेरा) डाल लिया। प्रभु की कृपा से वे मूर्ख हमें छु तक नही सके और अंत में वे भाग गए।

तव बल ईहां न पर सकै बरवा हना रिसाइ।।
सालिन रस जिम बानीयो रोरन खात बनाइ।।10।।

शब्दार्थ : हना–लूटना। रिसाइ–गुस्सा। सालिन–नमक वाली सब्जी। रोरन–रोड़े।

भावार्थ : हे प्रभु ! आपके प्रताप से शत्रु हम पर आक्रमण न कर सका। भागते-भागते उन्होंने बरवा गाँव को लूट लिया। जैसे नमक का स्वाद लेने के लिए बनिया कंकर की सब्जी ही बनाकर खा लेता है। भाव यह है कि पठानों का जोर जब गुरु गोबिंद सिंह जी पर नहीं पड़ा तो गरीब गाँव वालों को ही लूट लिया।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे खानजादे को आगमन त्रासित उठि जैबो बरननं नाम दसमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।10।।अफजू।।354।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ का ख़ान के बेटे का आना और डर कर भाग जाना प्रसिद्ध दसवें अध्याय का वर्णन समाप्त है। शुभ है, तथा 354 छंद यहाँ आ चुके है।

11 हुसैनी युद्ध

जिस समय दिलावर ख़ान का बेटा रुस्तम ख़ान हार कर लाहौर पहुँचा तो उसके पिता ने उसको बहुत फटकारा तथा भरे दरबार मे ललकार कर कहा कि कोई ऐसा वीर है जो पहाड़ी राजाओं तथा गुरु गोबिंद सिंह जी का मुकाबला कर सके। यह ललकार सुनकर हुसैनी ख़ान युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। दिलावर ख़ान ने उसकी सहायता के लिए 2000 पठानों की फौज देकर उसे विदा किया। पहाड़ो में पहुँचते ही उसने लूट मार करनी शुरु कर दी, सबसे पहले उसने मधुकर शाह डढ़वालिए को अपने अधीन कर लिया। फिर कहलूर की ओर चल पड़ा। उसके आने का समाचार पाकर भीम चंद कहलूरिया तथा कृपाल चंद कटौचिया उसको भेंट देने के लिए उसके पास पहुँचे। यह देखकर हुसैनी को बहुत अहंकार आ गया। उसने आनंद पुर साहिब को लूटने का विचार किया। इस बात की खबर गुरु गोबिंद सिंह जी को पहुँच गई। हुसैनी जब आनंदपुर साहिब की ओर आ रहा था तो रास्ते में गुलेरिया राजा गोपाल 4000 रुपये लेकर हुसैनी को मिला। कटौचिए ने हुसैनी को भड़काया कि वह गोपाल से 4000 रुपये न लेकर 10000 रुपयों की मांग करे। हुसैनी इस चाल को न समझ सका। उसने गोपाल को पकड़ लेने का फैसला कर लिया। गोपाल उसकी चाल को समझ गया। उसने हुसैनी को कहा कि वह घर से उसे 10000 रुपये लाकर दे देगा। वह घर जाकर वापस नही आया। इससे हुसैनी को बहुत

क्रोध आया और उसने गोपाल को पंद्रह प्रहर किले में घेर कर रखा। उस समय गोपाल ने गुरु गोबिंद सिंह जी से सहायता मांगी। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने संगतिआ सिंह को हुसैनी के साथ समझौता करने के लिए दूत बनाकर भेजा। संगतिआ सिंह को आया देख भीम चंद ने विचार किया कि अब गोपाल को गुरु जी की सहायता मिल गई है। उसने एक चाल चली। उसने संगतिया सिंह को धर्म की सौगंध देकर कहा कि वह गोपाल को उनके पास ले आए। उसने सौगंध पर भरोसा कर लिया और गोपाल को उनके पास ले आया। उनके हृदय में मक्कारी तो पहले से ही थी। उन्होंने गोपाल को पकड़ लेने की योजना बनाई। गोपाल यह सारी चाल समझ गया तथा भागकर अपनी फौज में शामिल हो गया। सगंतिआ सिंह को बहुत क्रोध आया, वह शस्त्र उठाकर युद्ध के मैदान मे पहुँच गया। बड़ा भयानक युद्ध हुआ। सगंतिआ अपने सैनिकों के साथ युद्ध में शहीद हो गया। अंत में भीम चंद हुसैनी को मरवा कर युद्ध भूमि से भाग गया। युद्ध के मैदान में हिम्मता घायल होकर भूमि पर पड़ा हुआ था। गोपाल ने उसको सारी लड़ाई का कारण समझा तथा उसे मौत के घाट उतार दिया। इस प्रकार गोपाल ने युद्ध जीत लिया। युद्ध समाप्त होने के बाद श्री गुरु गोबिंद सिंह जी ने उस परम पिता परमात्मा का धन्यवाद किया। इस अध्याय मे 13 चौपाइयां, 1 त्रिभंगी, 6 दोहरे, 5 नराज, 2 पादड़ी, 18 भुजंग प्रयात, 9 मधुभार तथा 15 रसावल छंद मिलाकर कुल 69 छंद है।

।।हुसैनी जुद्ध कथनं।।

हुसैनी के साथ युद्ध का कथन।

।।भुजंग प्रयात छंद।।

गयो खानजादा पिता पास भज्जं।।
सकै जवाबु दै ना हने सूर लज्जं।।
तहा ठोक बाहा हुसैनी गरज्जियं।।
सभै सूर लै कै सिला साज सज्जियं।।1।।

शब्दार्थ : खानजादा–दिलावर ख़ान का बेटा। लज्जं–शर्मिन्दा। सिला–युद्ध का साज सामान। सज्जियं–सजाकर।

भावार्थ : दिलावर ख़ान का बेटा रुस्तम ख़ान बिना युद्ध किये भाग कर अपने पिता के पास पहुँचा। वह शर्म से अपने पिता के सामने बोल न सका। उस दरबार में हुसैनी नामक योद्धा उठा। वह अपनी भुजाएँ ठोक कर युद्ध में जाने के लिए तैयार हो गया। उसने योद्धाओं को तैयार किया और अस्त्र शस्त्र इकट्ठे कर लिए।

करियो जोर सैनं हुसैनी पयानं।।
प्रथम कूटिकै लूट लीने अवानं।।
पुरनि डढ्ढवालं कीयो जीत जेरं।।
करे बंदिकै राजपुत्रानं चेरं।।2।।

शब्दार्थ : जोर–इकट्ठा करना। पयानं–चढ़ाई करना। कूटिकै–पहाड़ी। अवानं–आम लोग। पुनरि–फिर। जेरं–अधीन। चेरं–दास।

भावार्थ : हुसैनी सेना इकट्ठी कर के युद्ध करने के लिए चल पड़ा। सबसे पहले पहाड़ियों के घर लूटे। फिर डढ़वाल के राजा मधुकर शाह को जीत लिया तथा अपने अधीन कर लिया राजपुत्रों को बंदी बना कर अपना दास बना लिया।

पुनरि दून को लूट लानो सुधारं।।
कोई सामुहे है सकियो न गवारं।।
लीयो छीन अंनं दलं बांटि दीयं।।
महांमूड़ियं कुतसतं काज कीयं।।3।।

शब्दार्थ : पुनरि–फिर। दून–पहाड़ी मैदान। अंनं–अनाज। महांमूड़ियं–महामूर्ख। कुतसतं–बुरे।

भावार्थ : फिर उसने दून के इलाके को अच्छी तरह लूटा। कोई भी मूर्ख राजा उनका सामना न कर सका। उनसे सारा अनाज छीन कर सेना में बाँट दिया। महामूर्ख हुसैनी ने यहाँ बहुत उपद्रव मचाकर अहितकर काम किया।

।।दोहरा।।

कितक दिवस बीतत भए करत उसै उतपात।।
गुआलेरीयन की परत भी आन मिलन की बात।।4।।

शब्दार्थ : कितक–कितने। दिवस–दिन। उतपात–उपद्रव। परत–आवश्यकता।

भावार्थ : इस प्रकार हुसैनी को उपद्रव करते हुए कई दिन बीत गए। अब गुलेरियों को उसके साथ संधि करने की आवश्यकता प्रतीत हुई।

जौ दिन दुइक न वे मिलत तब आवत अरराइ।।
कालि तिनू के घर बिखै डारी कलह बनाइ।।5।।

शब्दार्थ : दुइक–दो। न–नही। अरराइ–शत्रु। तिनू–उनके।

भावार्थ : पहाड़ी राजा उसके साथ दो दिन और न समझौता करता तो शत्रु ने हम पर आक्रमण कर देना था। परंतु काल ने उनके घर बहाना बना कर कलह करवा दी।

।।चौपई।।

गुआलेरीया मिलन कह आए।।
रामसिंघ भी संगि सिधाए।।
चतरथ आन मिलत भए जामं।।
फूटि गई लखि नजरि गुलामं।।6।।

शब्दार्थ : चतरथ–चौथा। जामं–पहिर। लखि–देखकर। गुलामं–हुसैनी।

भावार्थ : गुलेरिया राजा गोपाल हुसैनी को मिलने के लिए आया। राम सिंह जसवालिया भी वार्ता के लिए उसके साथ चल पड़ा। दिन के चौथे पहिर (संध्या) के समय वे हुसैनी से आ मिले। उनको अपने पास आया देखकर हुसैनी की नियत बदल गई। वह अहंकार में अंधा हो गया।

।।दोहरा।।

जैसे रवि के तेज ते रेत अधिक तपताइ।।
रवि बल छुद्र न जानई आपन ही गरबाइ ।।7।।

शब्दार्थ : रवि–सुर्य। तपताइ–गर्म हो जाना। छुद्र–तुच्छ। गरबाइ–अहंकार।

भावार्थ : जैसे सूर्य के तेज से रेत बहुत गर्म हो जाती है और सूर्य के तेज को कुछ नही समझती और अपने पर अहंकार करने लगती है।

।।चौपई।।

तैसे ही फूल गुलाम जाति भयो।।
तिनै न द्रिसट तरे आनत भयो।।
कहलूरीया कटौच संगि लहि।।
जाना आन न मो सरि महि महि।।8।।

शब्दार्थ : तिनै–उसने। द्रिसट–दृष्टि। तरे–नीचे। आन–और कोई दूसरा। महि–पृथ्वी। महि–में।

भावार्थ : ठीक रेत के समान गुलाम हुसैनी भी अहंकार में फूल गया। उसने गुलेरिया राजा तथा उसके साथी की कोई परवाह नहीं की। कहिलूर के राजा भीम चंद तथा कटौच का राजा कृपाल चंद को इकट्ठे देखकर हुसैनी ने समझा कि उस जैसा इस भूमि पर कोई है ही नहीं।

तिन जो धन आनो सो साथा।।
ते दे रहे हुसैनी हाथा।।
देत लेत आपन कुरराने।।
ते धनि लै निजि धाम सिधाने।।9।।

शब्दार्थ : तिन–उन गुलेरियो ने। ते–वह। कुरराने–लड़ने। ते–वे।

भावार्थ : गोपाल तथा राम सिंह जो धन हुसैनी को देने के लिए अपने साथ लाये थे वह देने लेने में आपस में झगड़ा कर बैठे। अंत वे दोनों धन वापस लेकर अपने घर लौट गए।

चेरो तबै तेज तन तयो।।
भला बुरा कछु लखत न भयो।
छंदबंद नह नैकु बिचारा।।
जात भयो दे तबहि नगारा।।10।।

शब्दार्थ : चेरो–गुलाम हुसैनी। तन–शरीर। तयो–तप जाना। लखत–देखा। नैकु–जरा सा।

भावार्थ : गुलाम हुसैनी क्रोध से लाल हो गया। उसको भले बुरे की कोई पहचान न रही। उसने राजनीति पर विचार नहीं किया तथा धौंसा बजाकर गुलेरियो पर चढ़ाई कर दी।

दाव घाव तिन नैकु न करा।।
सिंघहि घेरि ससा कहु डरा।।

पंद्रह पहरि गिरद तिह कीयो।।
खान पान तिन जान न दीयो।।11।।

शब्दार्थ : सिंघहि–शेर। घेरि–घेरा। ससा–खरगोश। गिरद–घेरा।

भावार्थ : गुलाम हुसैनी ने राजनीति के नियमों पर ध्यान नहीं दिया। क्या कभी ऐसे हो सकता है कि खरगोश शेर को घेर कर डरा सके। उसने गोपाल को जा घेरा। उसने पंद्रह प्रहर किले को घेरे रखा। उसने कोई भी खाने पीने की सामग्री को भीतर नहीं जाने दिया।

खान पान बिनु सूर रिसाए।।
साम करन हित दूत पठाए।।
दास निरख संगि सैन पठानी।।
फूलि गयो तिन की नही मानी।।12।।

शब्दार्थ : खान पान–भोजन। साम–समझौता। पठाए–भेजे। दास–गुलाम हुसैनी। निरख–देखकर। फूलि–घमण्ड।

भावार्थ : भोजन के बिना योद्धा बड़े क्रोधित हुए। फिर भी उन्होंने समझौता करने के लिए दूत भेजे। हुसैनी अपने साथ पठानों की सेना को देखकर अहंकार में आ गया। उसने उनकी एक भी न मानी।

दस सहंस्र अबही कै दैहू।।
नातर मीच मूंड पर लैहू।।
सिंघ संगतीया तहा पठाए।।
गोपालै सु धरमु दे लयाए।।13।।

शब्दार्थ : दस सहंस्र–दस हजार। अबही–अभी। नातर–नही तो। मीच–मौत। मूंड–सिर। सिंघ संगतीया–गुरु का सिक्ख, संगतिया। गोपालै–गुलेरिया राजा।

भावार्थ : हुसैनी ने कहा–या तो मुझे दस हजार रुपये दे दो

नहीं तो अपने सिर पर मौत को सवार होते देखो। यह सुनकर भीम चंद ने संगतिया सिंह को गोपाल के पास भेजा। संगतिया सिंह गोपाल को धर्म की सौगंध दिलाकर भीम चंद के पास ले आया।

तिनके संगि न उनकी बनी।।
तब क्रिपाल चित मो इह गनी।।
अैसि घाति फिरि हाथ न अैहै।।
सभहूं फेरि समो छलि जैहै।।14।।

शब्दार्थ : अैसि घाति–मौका। छलि–ठग।

भावार्थ : पठानों के साथ गोपाल की सुलह न हो सकी। तभी कृपाल चंद कटौचिए ने मन में सोचा कि ऐसा मौका फिर हाथ नहीं आएगा जो कुछ करना है अभी कर लेना चाहिए।

गोपालै सु अबै गहि लीजै।।
कैद कीजिअै कै बध कीजै।।
तनक भनक जब तिन सुन पाई।।
निज दल जात भयो भटराई।15।।

शब्दार्थ : गहि–पकड़। बध–कत्ल। भनक–पता चलना। भटराई–बहादुरी।

भावार्थ : कृपाल चंद ने यह विचार किया कि गोपाल को अभी पकड़ लेना चाहिए। या तो उसको कैद कर लिया जाए या जान से मार दिया जाए। इस बात की खबर गोपाल को लग गई तब वह बहादुर राजा झटपट अपने दल में जा मिला।

।।मधुभार छंद।।

जब गयो गुपाल।। कुप्पिओ क्रिपाल।।
हिंमत हुसैन।। जुंमै लुझैन।।16।।

शब्दार्थ : कुप्पिओ–क्रोध। लुझैन–लड़ने के लिए।
भावार्थ : जब गोपाल चंद इनसे बचकर निकला तो कृपाल चंद कटौचिए को बहुत क्रोध आया। गोपाल चंद हिम्मत जुटा कर हुसैनी के साथ लड़ने के लिए चल पड़ा।

करिकै गुमान।। जुंमै जुआन।।
बज्जे तबल्ल।। दुंदभ दबल्ल।।17।।

शब्दार्थ : तबल्ल–ढ़ोल। दुंदभ–नगारे। दबल्ल–जोर से।
भावार्थ : बड़ा अभिमान करके नौजवान योद्धा युद्ध करने के लिए चल पड़े। ढ़ोल तथा नगाड़े बड़े ज़ोर से बजने लगे।

बज्जे निसाण।। नच्चे किकाण।।
बाहै तड़ाक।। उठ्ठै कड़ाक।।18।।

शब्दार्थ : निसाण–नगाड़े। किकाण–घोड़े।
भावार्थ : नगाड़े बजने शुरु हो गए। घोड़े नाचने लगे। तड़-तड़ गोलियों की आवाज़ हो रही थी।

बज्जे निसंग।। गज्जे निहंग।।
छुट्टै क्रिपान।। लिट्टै जुआन।।19।।

शब्दार्थ : निसंग–बिना झिझक। निहंग–शूरवीर। लिट्टै–लेट जाना।
भावार्थ : युद्ध में योद्धा बेझिझक हो कर लड़ रहे थे। शूरवीर शहीद होकर धरती पर लेट रहे थे।

तुप्पक तड़ाक।। कैबर कड़ाक।।
सैहथी सड़ाक।। छौही छड़ाक।।20।।

शब्दार्थ : तुप्पक–छोटी बंदूकें। कैबर–तीर। सैहथी–लंबे दस्ते वालान नेजा। छौही–छवी।

भावार्थ : बंदूके तड़-तड़ कर रही थी। तीर कड़क रहे थे। बरछियां सरर-सरर कर के बज रहीं थी। छवियां छाड़-छाड़ करके चल रही थीं।

गज्जे सु बीर।। बज्जे गहीर।।
बिचरे निहंग।। जैसे पिलंग।।21।।

शब्दार्थ : गहीर–नगाड़े। निहंग–शूरवीर। पिलंग–चीता।
भावार्थ : युद्ध के मैदान में वीर गरज रहे थे। नगाड़े बज रहे थे। युद्ध के मैदान में वीर सिपाही ऐसे घूम रहे थे जैसे वन में चीता घूमता है।

हुक्के किकाण।। धुक्के निसाण।।
बाहै तड़ाक।। झल्लै झड़ाक।।22।।

शब्दार्थ : हुक्के–हिनहिनाना। किकाण–घोड़े। धुक्के–धौसे।
भावार्थ : घोड़े हिनहिना रहे थे। धौंसे बज रहे थे। सूरमे ताड़-ताड़ शस्त्र चलाने लगे। सामने से योद्धा उन शस्त्रों का जवाब शस्त्रों से देने लगे।

जुज्झे निहंग।। लिट्टे मलंग।।
खुल्ले किसार।। जनु जटा धार।।23।।

शब्दार्थ : जुज्झे–लड़े। निहंग–जवान। मलंग–मस्त रहने वाला। किसार–केश।
भावार्थ : वीर शहीद होकर धरती पर लोट गए जैसे मस्त हुए मलंग धरती पर लेटे हुए हों। उनके केश खुले हुए थे, ऐसा प्रतीत होता था जैसे जटाधारी लेटे हुए हों।

सज्जे रजिंद्र।। गज्जे गजिंद्र।।
उत्तरि खान।। लै लै कमान।।24।।

शब्दार्थ : रजिंद्र–बड़े-बड़े राजा। गजिंद्र–हाथी। उत्तरि–उतरना।
भावार्थ : महान राजा सजे हुए थे। बड़े-बड़े हाथी गरज रहे थे। बड़े-बड़े ख़ान पठान हाथ में तीर कमान लेकर युद्ध भूमि में उतर पड़े।

।।त्रिभंगी छंद।।

कुपियो किरपालं सज्जि मरालं बाह बिसालं धरि ढालं।।
धाए सभ सूरं रूप करूरं चमकत नूरं मुखि लालं।।
लै लै सु क्रिपानं बान कमानं सज्जे जुआनं तन तत्तं।।
रणि रंग कलोलं मारही बोलं जनु गज डोलं बन मत्तं।।25।।

शब्दार्थ : सज्जि–सजकर। मरालं–घोड़े। बिसालं–लम्बी भुजा वाला। करूरं–भयानक रूप वाला। तत्तं–क्रोध से गरम। रणि रगं–युद्ध के मैदान में। कलोलं–कलोल करते हुए। मत्तं–मस्त।
भावार्थ : युद्ध के मैदान में कृपाल चंद बड़ा क्रोधित हुआ। वह सफेदं घोड़े के ऊपर सजा हुआ था। उसने अपनी लम्बी बाहों में ढ़ाल पकड़ी हुई थी। बड़े भयानक रूप वाले योद्धा युद्ध करने के लिए चल पड़े, जिनका मुख लाल था और उनके मुख से तेज (नूर) चमक रहा था। बड़े-बड़े बांके जवान अपने हाथ में तलवार तथा तीर कमान लेकर आ रहे थे। उनके मन में जोश ठाठें मार रहा था। वे युद्धभूमि में कलोल करते हुए मारो-मारो ही चिल्ला रहे थे जैसे वन में मस्त हाथी घूम रहे हों।

।।भुजंग छंद।।

तबै कोपियं कांगड़ेसं कटोचं।।
मुखं रकत नैनं तजे सरब सोचं।।
उतै उठि्ठयं खान खेतं खतंगं।।
मनो बिहचरे मास हेतं पिलंगं।।26।।

शब्दार्थ : कटोचं–कृपाल चंद कटोच। रकत–लाल। तजे–

छोड़कर। खान–हुसैनी का साथी। खेतं–मैदान में।
भावार्थ : कांगड़े का राजा कृपाल चंद बड़े क्रोध से युद्ध के मैदान में आया। उसका मुख तथा आँखे लाल थी। उसने सभी सोच विचार को त्याग दिया था। दूसरी ओर पठान भी तीर कमान लेकर युद्ध के मैदान में खड़े थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मास खाने के लिए चीते वन में घूम रहे हो।

बजी भेर भुंकार तीरं तड़क्के।।
मिले हथ्थि बथ्थं क्रिपानं कड़क्के।।
बजे जंग नीसाण कथ्थे कथीरं।।
फिरै रुंड मुंडं तनं तछ्छ तीरं।।27।।

शब्दार्थ : भेर–नगाड़े। तड़क्के–कड़ कड़। नीसाण–नगाड़े। कथीरं–कथा करने वाला। रुंड मुंडं–सिर के बिना धड़।
भावार्थ : नगाड़ों की ध्वनी हो रही है। तीरों की कड़-कड़ हो रही है। कहीं वीर मल युद्ध कर रहे हैं और उन्हें उत्तेजित करने के लिए वीर रस से परिपूर्ण कथाओं का गायन हो रहा है तो कहीं योद्धा तलवारों से युद्ध कर रहे हैं। युद्ध में नगाड़े बज उठे। कहीं तीरों से घायल शरीर बिखरे पड़े हैं।

उठै टोप टूकं गुरज्जै प्रहारे।।
रुले लुत्थ जुत्थं गिरे बीर मारे।।
परै कतीयं घात निरघात बीरं।।
फिरै रुंड मुंडं तनं तच्छ तीरं।।28।।

शब्दार्थ : टूकं–टुकड़े। गुरज्जै–गरज। प्रहारे–मारा। लुत्थ जुत्थं–लाशो के ढ़ेर। कतीयं–पतली तलवार। घात–वार। निरघात–अकट योद्धे।
भावार्थ : कहीं गुरजों के प्रहार से सिर के टोपों के टुकड़े बिखरे हुए है तो कहीं लाशों के ढ़ेर पड़े है, तो कहीं मृत योद्धा गिरे

पड़े है। कहीं तीरों से सने हुए शरीर, कहीं धड़ तो कहीं सिर बिखरे पड़े है।

बही बाहु आघात निरघात बाणं।।
उठे नद्द नादं कड़क्के क्रिपाणं।।
छके छोभ छत्री तजै बाण राजी।।
बहे जाहि खाली फिरै छूछ ताजी।।29।।

शब्दार्थ : आघात–वार। निरघात–लगातार। नादं–नगाड़ो की आवाज। छोभ–क्रोघ। छत्री–क्षत्री। छूछ–खाली।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में अनेक बाणों की वर्षा हो रही है। तलवारों के चलने से कड़-कड़ की गंभीर आवाज़ हो रही है। क्रोध से भरे वीर तीर चला रहे हैं। यह तीर कभी तो खाली चलते थे तो कभी घोड़ों को खाली कर देते थे, अर्थात् योद्धाओं को मार देते थे।

जुटे आप मै बीर बीरं जुझारे।।
मनो गज्ज जुट्टे दंतारे दंतारे।।
किधो सिंघ सो सारदूलं अरुज्झे।।
तिसी भांति किरपाल गोपाल जुज्झे।।30।।

शब्दार्थ : आप मै–आपस मे। दंतारे–दातो वाले। सारदूलं–शेर। जुज्झे–लड़े।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में वीर आपस में लड़ने लगे। वे ऐसे लग रहे थे मानो दांतो वाले हाथी दांतो के साथ जुट गए हों। जैसे शेर के साथ शेर लड़ता है ऐसे ही कृपाल चंद कटोचिए के साथ गोपाल चंद गुलेरिया लड़ रहा था।

हरी सिंघ धायो तहां एक बीरं।।
सहे देह आपं भली भांति तीरं।।

महां कोप कै बीर ब्रिंदं संघारे।।
बडो जुद्ध कै देवलोकं पधारे।।31।।

शब्दार्थ : आपं–अपनी। ब्रिंदं–बहुत सारे वीर।

भावार्थ : वहाँ एक वीर योद्धा हरी सिंह रणभूमि में आया। उसने अपने शरीर पर बाणों की वर्षा को झेला। उसने आवेश में आकर अनेक वीरों को मारा। उसने युद्ध में प्रलय मचा दी और अंत में वह स्वयं भी देव लोक सिधारा।

हठियो हिंमतं किंमतं लै क्रिपानं।।
लए गुरज चल्लं सु जल्लाल खानं।।
हठे सूरमा मत्त जोधा जुझारं।।
परी कुट्ट कुट्टं उठी ससत्र झारं।।32।।

शब्दार्थ : हिंमतं–हिम्मत सिंह। किंमतं–कीमत सिंह। मत्त–मस्त। कुट्टं–लगातार। झारं–शस्त्रो के वार से उपजी आग।

भावार्थ : राजाओं की ओर से हिम्मत सिंह तथा कीमत सिंह तलवार लेकर युद्ध के मैदान में उतरे। उधर हुसैनी की ओर से भी एक जलाल ख़ान गुरज ले कर युद्ध के मैदान में आ डटा। यह दोनों वीर युद्ध में मस्त हो कर अच्छी तरह लड़े। शस्त्रों से शस्त्र टकरा रहे थे तथा उनमें से आग की चिंगारियाँ निकल रही थीं।

।।रसावल छंद।।

जसंवाल धाए।। तुरंगं नचाए।।
लयो घेरि हुसैनी।। हनयो सांग पैनी।।33।।

शब्दार्थ : जसंवाल–जसवाल का राजा केसरी चंद। सांग–बरछी। पैनी–तेज धार वाली।

भावार्थ : जसवाल का राजा केसरी चंद घोड़ा भगाता हुआ रणभूमि में आया। उसने हुसैनी को घेर लिया तथा तीखी बरछी मारी।

तिनू बाण बाहे।। बडे सैन गाहे।।
जिसै अंगि लागयो।। तिसै प्राण तयागयो।।34।।

शब्दार्थ : तिनू–हुसैनी ने।

भावार्थ : हुसैनी ने तीर चलाये। बड़े-बड़े सेना के टोले मार गिराए। जिस वीर को उसका तीर लग जाता वे प्राण त्याग देता।

जबै घाव लागयो।। तबै कोप जागयो।।
संभारी कमाणं।। हणे बीर बांण।।35।।

शब्दार्थ : हणे–मारे। बीर–योद्धा।

भावार्थ : जब हुसैनी को चोट लगी तब उसका गुस्सा जागृत हो गया। फिर उस योद्धा हुसैनी ने कमान संभाल कर बाणों के साथ अनेकं योद्धाओं को मार दिया।

चहूं ओर ढूके।। मुखं मार कूके।।
त्रिभै ससत्र बाहैं।। दोऊ जीत चाहैं।।36।।

शब्दार्थ : चहूं–चारो। त्रिभै–निडर।

भावार्थ : चारों ओर से योद्धा आगे बढ़ते थे तथा मुख से मारो-मारो की आवाज़ें निकालते थे, वे निडर होकर शस्त्र चलाते थे। दोनों ओर के सैनिक अपनी विजय की कामना करते थे।

रिसे खानजादे।। महां मद्द मादे।।
महां बाण बरखे।। सभै सूर हरखे।।37।।

शब्दार्थ : रिसे–क्रोधित। खानजादे–खान के बेटे। मद्द–अहंकार। हरखे–खुश हुए।

भावार्थ : पठानों के बेटे बड़े क्रोध से भरे हुए थे। वे अहंकार में डूबे हुए तीरों की वर्षा कर रहे थे। सब वीर बड़े प्रसंनचित

होकर लड़ रहे थे।

करै बाण अरचा।। धनुर बेद चरचा।।
सु सांगं समालं।। करै तउन ठामं।।38।।

शब्दार्थ : अरचा–पूजा। बेद–ज्ञान। ठामं–स्थान।

भावार्थ : वे बाणों के साथ पूजा करते थे। धनुष के ज्ञान की चर्चा करते थे। उस जगह अच्छी तरह बरछियों तथा धनुष की संभाल करते थे।

बली बीर रुज्झे।। समुह ससत्र जुज्झे।।
लगै धीर धक्कै।। क्रिपाणं झनक्कै।।39।।

शब्दार्थ : जुज्झे–लड़े। क्रिपाणं–तलवार। झनक्कै–तलवार चलाने की आवाज़।

भावार्थ : बहादुर योद्धा युद्ध करने में लगे हुए थे। वे शस्त्र चला रहे थे। धैर्यवान योद्धा एक दूसरे से गुत्थे हुए थे तथा तलवारें चलने की आवाज आ रही थी।

कड़क्कै कमाणं।। झणंके क्रिपाणं।।
कड़क्कार छुट्टै।। झणंकार उठ्ठै।।40।।

शब्दार्थ : कमाणं–धनुष बाण। झणंकार–चमकना।

भावार्थ : कहीं कमानों के कड़कने की आवाज़ आ रही थी तो कहीं तलवारें चमक रही थीं। हथियारों के कड़-कड़ की आवाज़ हो रही थी, कहीं शस्त्रों से शोले उठ रहे थे।

हठी ससत्र झारै।। न संका बिचारै।।
करै तीर मारं।। फिरै लोह धारं।।41।।

शब्दार्थ : झारै–मारना। संका बिचारै–झिझकना।

भावार्थ : हठी योद्धा तीर चलाते समय अपने मन में कोई शंका

नहीं रखते थे। कहीं तीरों की मार हो रही थी तो कहीं तलवार धारण किये योद्धा घूम रहे थे।

नदी स्रोण पूरं।। फिरं गैण हूरं।।
उभे खेत पालं।। बके बिक्करालं।।42।।

शब्दार्थ : स्रोण–खून। पूरं–भर गई। गैण–आकाश में। हूरं–अप्सरा। खेत पालं–राजा।

भावार्थ : रणभूमि में खून की नदियाँ बह रही थीं। आकाश में अप्सराएँ भ्रमण रही थीं। दोनों ओर के योद्धा युद्ध करने वाले भयानक बोल बोल रहे थे।

।।पाधड़ी छंद।।

तह हड़हड़ाइ हस्से मसाण।।
लिट्टे गजिंद्रि छुट्टे किकाण।।
जुट्टे सु बीर तह कड़क जंग।।
छुट्टी क्रिपाण बुठ्ठे खतंग।।43।।

शब्दार्थ : गजिंद्रि–हाथी। खतंग–तीर।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में प्रेत ऊँचे स्वर में अट्टहास कर रहे थे। बड़े-बड़े हाथी मारे गए तथा घोड़े खुले घूम रहे थे। वीर युद्ध में जुटे हुए थे बहुत भारी युद्ध हो रहा था। तलवारें चल रही थी और तीर बरस रहे थे।

डाकन डहक्कि चावड चिकार।।
काकं कहक्कि बज्जै दुधार।।
खोलं खड़क्कि तुपकि तड़ाकि।।
सैथं सड़क्क धक्कं धहाकि।।44।।

शब्दार्थ : डाकन–डायन। डहक्कि–घूमना। चावड–चुड़ैल। चिकार–चीकना। काकं–कौवे। कहक्कि–कांव-कांव करना।

भावार्थ : युद्ध के मैदान में कहीं डायने बोल रही थीं तो कहीं चुडैलें चीख रही थीं। कहीं कौवे कांव-कांव कर रहे थे तो कहीं दोनों ओर के वीर लड़ रहे थे। कहीं लोहे के टोपों की खनक सुनाई दे रही थी, कहीं बंदूके चल रही थीं, कहीं बरछियां चल रही थीं तो कहीं धक्का-मुक्की हो रही थी।

।।भुजंग छंद।।

तहा आप कीनो हुसैनी उतारं।।
सभू हाथ बाणं कमाणं संभारं।।
रुपे खान खूनी करै लाग जुद्धं।।
मुखं रकत नैणं भरे सूर क्रुद्धं।।45।।

शब्दार्थ : उतारं–आ गया। रुपे–डटकर। रकत–लाल।

भावार्थ : हुसैनी स्वयं रणभूमि में आ गया। सबने अपने हाथ में तीर कमान संभाल लिए। हत्यारा पठान युद्धभूमि में डटकर खड़ा हो गया तथा युद्ध करने लगा। उन वीरों के मुंह तथा आँखे लाल थीं तथा वे क्रोध से भरे हुए थे।

जगियो जंग जालम सु जोधं जुझारं।।
बहे बाण बांके बरच्छी दुधारं।।
मिले बीर बारं महां धीर बंके।।
धका धक्कि सैथं क्रिपाणं झनंके।।46।।

शब्दार्थ : जगियो–भयानक युद्ध होना। धीर–धैर्यवान। क्रिपाणं–तलवारें।

भावार्थ : लड़ाकू वीरों का भयानक युद्ध हो रहा था। दोनों ओर से तीर तथा बरछियां चल रही थीं। दोनों ओर के योद्धा बड़े साहस से मिलकर भयानक युद्ध कर रहे थे। कहीं तलवारों की छन-छन हो रही थी तो कहीं बरछियां चल रही थी।

भए ढोल ढंकार नद्‌दं नफीरं।।
उठै बाहु आघात गज्जै सु बीरं।।
नभं नद्‌द नीसान बज्जे अपारं।।
रुले तच्छ मुच्छं उठी ससत्र झारं।।47।।

शब्दार्थ : ढंकार–आवाज। नद्‌दं–आवाज। आघात–वार। नभं–आकाश। झारं–चमक।

भावार्थ : ढ़ोल की ढ़मकार हो रही हैं। तूतियां बज रही हैं। अपनी भुजाओं के बल से प्रहार करने वाले वीर गरज रहे हैं। नये-नये नगाड़ों के बजने की आवाज़ सुनाई दे रही है, कटे हुए शरीर मैदान में बिखरे पड़े है। शस्त्रों से आग की चिंगारियाँ निकल रही हैं।

टकाटुक टोपं ढका ढुक्क ढालं।।
महांबीर बानैत बंकै बिक्रालं।।
नचे बीर बैतालयं भूत प्रेतं।।
नची डाकिणी जोगणी उरध हेतं।।48।।

शब्दार्थ : बिक्रालं–भयानक। नचे–खुश हुये। उरध–ऊपर। हेतं–नीचे।

भावार्थ : टोपों के टुकड़े-टुकड़े हो कर गिर रहे थे। ढ़ालों की ढुक-ढुक की आवाज़ हो रही थी। बड़े-बड़े शूरवीर भयानक रूप धारण किए हुए थे। मैदान में वीर बेताल तथा भूत-प्रेत नाच रहे थे। डायनें तथा योगनियाँ नीचे ऊपर, चारों ओर नाच रही थीं।

छुटी जोग तारी महांरुद्र जागे।।
डगियो धिआन ब्रहमं सभै सिद्ध भागे।।
हसे किंनरं जच्छ बिद्‌दआ धरेयं।।
नची अच्छरा पच्छरा चारणेयं।।49।।

शब्दार्थ : तारी–समाधि। डगियो–डोलना। अच्छरा–इस लोक की

अप्सरा। पच्छरा–स्वर्ग लोक की अप्सरायें। चारणेयं–हँसाने वाला।
भावार्थ : शिवजी महाराज के योग की समाधि भंग हो गई तथा वे जाग गए। ब्रह्मा का ध्यान भी भंग हो गया। जिसके ध्यान में सिद्ध लीन थे वे अपनी समाधि से विचलित हुए। मृत्युलोक तथा देवलोक की अप्सराएँ खुशी से नाच उठीं।

परिओ घोर जुद्धं सु सैना परानी।।
तहां ख़ान हुसैनी मंडिओ बीरबानी।।
उतै बीर धाए सु बीरं जसवा्रं।।
सभै बिउत डारे बगा से असवा्रं।।50।।

शब्दार्थ : परानी–भाग गई। बिउत–काटना। बगा–कपड़े।
भावार्थ : इतना भयानक युद्ध हो रहा था कि हुसैनी की सारी सेना भाग खड़ी हुई। हुसैनी ने बड़ा भयानक युद्ध किया। उधर जसवालिए के वीर योद्धा धावा बोलते हुये आगे बढ़े। उन्होंने सारे सवारों को ऐसे काटकर रख दिया, जैसे दरजी कपड़े काटता है।

तहां ख़ान हुसैनी रहियो एक ठाढं।।
मनो जुद्ध खंभं रणं भूम गाडं।।
जिसै कोप कै कै हठी बाणि मा्रयो।।
तिसे छेदकै पैल पारे पधारियो।।51।।

शब्दार्थ : ठाढं–खड़ा रहा। गाडं–डटे रहना। पैल पारे–दूसरी तरफ (परली तरफ)।
भावार्थ : जब हुसैनी के बहुत सारे साथी मारे गये तब एक हुसैनी ही मैदान में डटा रहा जैसे खंभा गड़ा हो। वह जिसको क्रोधित होकर तीर मारता, तीर उसके शरीर को छेदते हुए पार निकल जाते।

सहे बाण सूरं सभै आण ढूकै।।
चहूं ओर ते मारही मार कूकै।।
भली भांति सो असत्र अउ ससत्र झारे।।
गिरे भिसत को ख़ान हुसैनी सिधारे।।52।।

शब्दार्थ : भिसत–स्वर्ग।

भावार्थ : सारे सूरवीर बाणों की चोट सहन करते हुए हुसैनी के निकट पहुँच गए। चारों ओर से मारो-मारो की आवाज गूँज रही थी, हुसैनी ने प्रत्येक प्रकार के शस्त्रों से युद्ध किया, अंत में वह मृत हो कर गिर पड़ा और स्वर्ग सिधार गया।

।।दोहरा।।

जबै हुसैनी जुज्झियो भयो सूर मन रोसु।।
भाजि चले अवरै सभै उठियो कटोचन जोसु।।53।।

शब्दार्थ : जुज्झियो–मारा गया। रोसु–रोष (क्रोध)।

भावार्थ : जब हुसैनी युद्ध में मारा गया तब उसके सैनिकों के मन में बड़ा क्रोध आया और सब तो मैदान छोड़कर भाग गये। परंतु कटोचिए के मन में जोश भर गया।

।।चौपई।।

कोपि कटोचि सभै मिलि धाए।।
हिंमति किंमति सहित रिसाए।।
हरीसिंघ तब कीया उठाना।।
चुनि चुनि हने पखरीया जुआना।।54।।

शब्दार्थ : कोपि–क्रोध। उठाना–जिंमेवारी। हने–मारे।

भावार्थ : सब कटोचिए क्रोध से आक्रमण कर के आगे बढ़े। हिम्मत तथा किंमत भी बड़े जोश से रणभूमि में आ गए। हरी सिंह ने भी धावा बोल दिया। घोड़े पर सवार शत्रुओं के सभी योद्धाओं को मार दिया।

।।नराज छंद।।

तबै कटोच कोपीयं।। संभार पाव रोपीयं।।
सरक्क ससत्र झारही।। सु मारि मारि उचारही।।55।।

शब्दार्थ : पाव–पैर। रोपियं–गाड़ देना। उचारही–बोलना।

भावार्थ : उस समय कटोचिए को बहुत क्रोध आया। उसने मैदान में अपने पैर अच्छी तरह जमा लिए। वे तीव्रता से शस्त्र चलाने लगे और मारो-मारो के शब्द उच्चारने लगे।

चंदेल चौपीयं तबै।। रिसात धात भे सबै।।
जिते गए सु मारीयं।। बचे तिते सिधारीयं।।56।।

शब्दार्थ : चौपीयं–जोश। रिसात–गुस्सा करना।

भावार्थ : गोपाल की ओर से चंदेलिया बड़े क्रोध से रणभूमि में आ गया, क्रोधित होकर सभी मैदान की ओर दौड़े। जितने भी वीर आगे बड़े वे सब मारे गए। जो बच गए वे युद्धभूमि से भाग गए।

।।दोहरा।।

सात सवारन के सहित जूझै संगत राइ।।
दरसो सुनि जुज्झै तिनै बहुर जुझत भयो आइ।।57।।

शब्दार्थ : जूझै–लड़ मरे।

भावार्थ : संगतिआ राय सात सवारों समेत शहीद हो गया। जब दरसो ने सुना तो वह भी युद्ध करके शहीद हो गया।

हिंमत हूं उतरियो तहां बीर खेत मंझार।।
केतन के तनि घाइ सहि केतनि के तनि झार।।58।।

शब्दार्थ : खेत–युद्धभूमि। घाइ–घाव।

भावार्थ : युद्धभूमि में हिम्मत नाम का योद्धा भी युद्ध करने के लिए आ गया। उसने अपने शरीर पर कई वार सहे। कितने

वीरों पर शस्त्रों से प्रहार किया।

बाज तहां जूझत भयो हिंमत गयो पराइ।।
लोथ क्रिपालहि की नमित कोपि परे अरराइ।।59।।

शब्दार्थ : बाज–घोड़ा। पराइ–भाग जाना। लोथ–लाश।
भावार्थ : हिम्मत का घोड़ा मर गया तथा वह युद्धभूमि से भाग गया। उधर कृपाल चंद का शव उठाने के लिए कटोचिए क्रोध में गरजते हुए आए।

।।रसावल छंद।।

बली बैर रुज्झै।। समुहि सार जुज्झै।।
क्रिपाराम गाजी।। लरियो सैन भाजी।।60।।

शब्दार्थ : बली–वीर योद्धा। सार–सामने। भाजी–भाग गई।
भावार्थ : योद्धा वैर भावना से युद्ध कर रहे थे। वे आमने-सामने होकर तलवार चला रहे थे। कृपा राम वीर बड़े जोश से लड़ा। उस के सामने सारी सेना भाग गई।

महांसैन गाहै।। त्रिभै ससत्र बाहै।।
घनियो काल कै कै।। चलै जस्स लै कै।।61।।

शब्दार्थ : त्रिभै–निडर। कै कै–करके। जस्स–प्रशंसा।
भावार्थ : कृपा राम सेना को लताड़ता हुआ बड़ी निडरता से शस्त्र चला रहा था। वह अनेक योद्धाओं को मार कर अंत में स्वयं भी यश प्राप्त कर वीरगति को प्राप्त हो गया।

बजे संख नादं।। सुरं निरबिखादं।।
बजे डौर डढ्ढं।। हठे ससत्र कढ्ढं।।62।।

शब्दार्थ : नादं–बिगुल। निरबिखादं–लगातार। डढ्ढं–जोर से। हठे–डट गए।

भावार्थ : शंख तथा धौंसे के बजने की आवाज़ आ रही थीं। डमरु तथा डफलियां जोर से बज रहे थे। हठी वीर शस्त्र निकाल रहे थे।

परी भीर भारी।। जुझै छत्र धारी।।
मुखं मुछ्छ बंकं।। मंडे बीर हंकं।।63।।

शब्दार्थ : बंकं–सुंदर। बीर–योद्धा। हंकं–ललकारना।
भावार्थ : युद्ध के मैदान में बड़ी भीड़ दिखाई पड़ रही है, छत्रधारी राजा लड़ रहे हैं। मुख पर टेड़ी (सुंदर) मूँछे करके लड़ रहे थे व ललकार रहे थे।

मुखं मारि बोलै।। रणं भूमि डोलै।।
हथियारं संभारै।। उभै बाज डारै।।64।।

शब्दार्थ : डारै–छोड़ दिये।
भावार्थ : युद्ध में वीर अपने मुँह से मारो-मारो बोल रहे हैं और युद्धभूमि में झूम रहे हैं। वह अपने शस्त्र संभाल रहे हैं। दोनों तरफ से वीर घोड़ों को दौड़ा रहे हैं।

।।दोहरा।।

रण जुज्झत किरपाल कै नाचत भयो गुपाल।।
सैन सभै सिरदार दै भाजत भई बिहाल।।65।।

शब्दार्थ : बिहाल–दुखी।
भावार्थ : कांगडे का राजा कृपाल चंद की मृत्यु से गोपाल खुशी से नाच उठा। हुसैनी तथा कृपाल चंद के बलिदान से सारी सेना युद्धभूमि से भाग गई।

खान हुसैन क्रिपाल के हिंमत रण जूझंत।।
भाजि चले जोधा सभै जिम दे मुकट महंत।।66।।

शब्दार्थ : जिम–जैसे।

भावार्थ : हुसैनी ख़ान, कृपाल तथा हिम्मत की मृत्यु के उपरांत सारे योद्धा ऐसे भागे जैसे कोई महंत अपने चेले को गद्दी देकर स्वयं वनों को चला जाए।

।।चौपई।।

इह बिध सत्रु सभै चुनि मारे।।
गिरे आपने सूर संभारे।।
तह घाइल हिंमत कह्‌ह लहा।।
रामसिंघ गोपाल सिउं कहा।।67।।

शब्दार्थ : बिध–इस प्रकार। लहा–देखा।

भावार्थ : गोपाल ने अपने सभी शत्रुओं को चुन-चुन कर मारा तथा अपने गिरे हुए योद्धा संभाल लिए। वहाँ उसने घायल अवस्था में हिम्मत को देखा। राम सिंह ने गोपाल को कहा।

जिन हिंमत अस कलह बढायो।।
घाइल आजु हाथ वह आयो।।
जब गुपाल अैसे सुनि पावा।।
मारि दियो जीअत न उठावा।।68।।

शब्दार्थ : अस–इतनी।

भावार्थ : जिस हिम्मत ने इस लड़ाई को बढ़ाया वह युद्धभूमि में घायल अवस्था में पड़ा है। जब गोपाल ने यह बात सुनी तब उसने हिम्मत को वहीं मार दिया।

जीत भई रन भयो उजारा।।
सिम्रिति करि सभ घरो सिधारा।।
राखि लियो हम को जगराई।।
लोह घटा अन तै बरसाई।।69।।

शब्दार्थ : उजारा–खाली होना। सिम्रिति–याद करना। जगराई–जगत के राजा। लोह घटा–युद्ध के बादल।
भावार्थ : गोपाल की जीत हो गई। मैदान खाली हो गया। सब अपने-अपने घरों की ओर चल पड़े। श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि उस जगत पिता ने हमारी रक्षा की तथा शस्त्रों के बादल किसी और स्थान पर बरसा दिए।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे हुसैनी बधह क्रिपाल हिंमत संगतीआ बध बरननं नाम गिआरमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।11।।अफजू।।423।।

यहाँ सुंदर नाटक ग्रंथ का हुसैनी ख़ान, कृपाल चंद, हिमत ख़ान तथा संगतिया सिंह को वर्णन करने वाला प्रसिद्ध ग्यारहवां अध्याय समाप्त। 423 छंद समाप्त हुआ।

12 जुझार सिंह युद्ध

हुसैनी खां के मरने का समाचार सुन कर दिलावर खां ने उसी समय सेना देकर रुस्तम खां को लड़ने के लिए भेजा। उसकी सहायता के लिए चंदन राय तथा जुझार सिंह रणभूमि में जुट गए। इन्होंने भलान गाँव को लूट लिया। गज सिंह जसवालिए को जब ज्ञात हुआ तो उसने रुस्तम खाँ तथा उसकी सेना को भगा दिया। रुस्तम खाँ तथा चंदन राय ने बड़े जोश से जसवालिये पर हमला कर दिया, बड़ा भयानक युद्ध हुआ। अंत में चंदन राय तथा जुझार सिंह युद्ध में मारे गये तथा शाही सेना वापस लाहौर चली गई। इस अध्याय मे 6.चौपाईयां, 2 दोहे तथा 3 रसावल छंद मिलाकर कुल 12 छंद है।

।।चौपई।।

जुद्ध भयो इह भांति अपारा।।
तुरकन को मारयो सिरदारा।।
रिस तन खान दिलावर तए।।
इतै सऊर पठावत भए।।1।।

शब्दार्थ : रिस–क्रोध। तन–साथ। तए–तन गया। इतै–इधर। सऊर–लश्कर।

भावार्थ : इस प्रकार बड़ा भयानक युद्ध हुआ। मुसलमान पठानों का सरदार हुसैनी युद्ध में मारा गया। उसके मरने का समाचार

सुन कर दिलावर खां को बहुत क्रोध आया। उसने सारी सेना में क्रोध भर कर इधर भेज दिया।

उतै पठिओ उन सिंघ जुझारा।।
तिह्‌ह भलान ते खेद निकारा।।
इत गजसिंघ पंमा दल जोरा।।
धाइ परे तिन ऊपर भोरा।।2।।

शब्दार्थ : उतै–उधर। उन–दिलावर खां। खेद–खदेड़। पमां–परमानंद पुरोहित। भोरा–प्रातःकाल।

भावार्थ : उसने उधर पहाड़ी राजाओं की ओर से जुझार सिंह नामक योद्धा भेजा। उसने भलान गाँव मे पहुँच कर शाही सेना को उठा दिया। उधर भीम चंद के सेनापती गज सिंह ने परमानंद को भेजा। जिन्होंने सेना इकट्ठी करके भलान गाँव में जुझार सिंह पर प्रातःकाल ही आक्रमण कर दिया।

उतै जुझार सिंघ भयो आडा।।
जिम रन खंभ भूमि रनि गाडा।।
गाडा चलै न हाडा चलि है।।
सामुहि सेल समर मो झलिहै।।3।।

शब्दार्थ : आडा–तैयार हो गया। गाडा–गड़ जाना। हाडा–राजपूत जुझार सिंह। सेल–बरछे।

भावार्थ : उधर रणभूमि में जुझार सिंह ऐसे खड़ा हो गया जैसे युद्धभूमि में खंभा गाड़ा हो। खंभा चाहे हिल जाए पर राजपूत वीर रणभूमि में से नही हिल सकता। वह सामने होकर शस्त्रों के वार सहन करता है।

बाट चड़ै दल दोऊ जुझारा।।
उतै चंदेल इतै जसवारा।।

मंडिओ बीर खेत मो जुद्धा।।
उपजियो समर सूर मन क्रुद्धा।।4।।

शब्दार्थ : बाट–बांट कर। समर–युद्ध।

भावार्थ : राजाओं के दोनों ओर के योद्धा दल में बंट गए। एक ओर चंदेल का राजा तथा दूसरी ओर जसवाल का राजा रणभूमि में आ गए। रणभूमि में योद्धाओं ने क्रोध में आकर युद्ध आरंभ कर दिया।

कोप भरे दोऊ दिस भट भारे।।
इतै चंदेल उतै जसवारे।।
ढोल नगारे बजे अपारा।।
भीम रूप भैरो भभकारा।।5।।

शब्दार्थ : रूप–भयानक रूप।

भावार्थ : दोनों ओर के योद्धा क्रोध से भरे हुए थे। इधर चंदेल तथा उधर जसवाल वीर क्रोधित हो उठे। बेअंत ढोल तथा नगाड़े बज रहे थे। बड़े भयानक रूप वाला युद्ध का देवता भैरों ललकार रहा था।

।।रसावल छंद।।

धुणं ढोल बज्जे।। महां सूर गज्जे।।
करे ससत्र घावं।। चड़े चित चावं।।6।।

शब्दार्थ : धुणं–आवाज। सूर–योद्धा।

भावार्थ : ढोलों की ध्वनी हुई तथा वीर योद्धा मैदान में आ धमके। वे शस्त्रों से वार कर रहे थे। उनके मन में युद्ध करने का बड़ा चाव था।

त्रिभै बाज डारै।। परग्घै प्रहारै।।
करे तेग घायं।। चड़े चित चायं।।7।।

शब्दार्थ : त्रिभै–निडर। बाज–घोड़े। परग्घै–लोहे की गदा।
भावार्थ : योद्धा निडर होकर घोड़े दौड़ा रहे थे तथा कुल्हाड़े चला रहे थे। वे तलवारों से वार कर रहे थे तथा उनके मन उत्साह से भरे हुए थे।

बकै मार मारं।। न संका बिचारं।।
रुलै तच्छ मुछं।। करै सुरग इछं।।8।।

शब्दार्थ : संका–शंका। सुरग–स्वर्ग।
भावार्थ : वीर मारो-मारो चिल्ला रहे थे। उनके मन में किसी प्रकार की कोई शंका नही थी। टुकड़े-टुकड़े हुए योद्धा रणभूमि में पड़े हुए थे। उनके मन में मर कर स्वर्ग जाने की इच्छा थी।

।।दोहरा।।
नैक न रन ते मुरि चले करै निडर ह्वै घाइ।।
गिर गिर परै पवंग ते बरे बरंगन जाइ।।9।।

शब्दार्थ : नैक–जरा सा। पवंग–तेज चाल वाला घोड़ा। बरंगन–अप्सरा।
भावार्थ : वीर मैदान से जरा भी पीछे नहीं हटे। वे निडर होकर एक दूसरे को घायल कर रहे थे। वे घोंड़ों से गिर जाते थे और अप्सराएं उनको वर लेती थीं।

।।चौपई।।
इह बिधि होत भयो संग्रामा।।
जूझे चंद नराइन नामा।।
तब जुझार एकल ही धयो।।
बीरन घेरि दसो दिस लयो।।10।।

शब्दार्थ : संग्रामा–युद्ध।
भावार्थ : इस प्रकार बड़ा भयानक युद्ध हुआ। नारायण चंद नाम

का योद्धा मारा गया। उधर जुझार सिंह अकेला ही लड़ने के लिए आगे बढ़ा। उसको विरोधी राजाओं ने चारों ओर से घेर लिया।

।।दोहरा।।

धसयो कटक मै झटक दै कछू न संक बिचार।।
गाहत भयो सुभटन बड बाहति भयो हथिआर।।11।।

शब्दार्थ : धसयो–सेना में जाना। कटक–फौज।

भावार्थ : जुझार सिंह स्फुर्ति से सेना के बीच चला गया। उसके मन में किसी प्रकार की शंका नहीं थी। उसने बड़े-बड़े योद्धाओं को खदेंड़ दिया तथा शस्त्र चलाता रहा।

।।चौपई।।

इह बिधि घने .घरन को गारा।।
भांति भांति के करि हथियारा।।
चुनि चुनि बीर पखरीआ मारे।।
अंति देवपुर आप पधारे।।12।।

शब्दार्थ : गारा–नष्ट। पखरीआ–घुड़सवार। अंति–अंत।

भावार्थ : इस प्रकार कई प्रकार के शस्त्रों के वार कर के योद्धाओं ने कई घरों को नष्ट कर दिया। उसने कई घुड़सवारों को मार दिया तथा अंत मे स्वयं भी स्वर्ग सिधार गया।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे जुझार सिंघ जुद्ध बरननं नाम द्वदसमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।12।।
अफजू।।435।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ जुझार सिंह के प्रसिद्ध युद्ध का वर्णन करने वाला बारहवां अध्याय समाप्त है। शुभ है। कुल 434 छंद यहाँ पर आ चुके है।

13 शहजादे का आगमन

मुसलमानी सेना की बार-बार हार का समाचार सुनकर औरंगज़ेब ने अपने बेटे मुअजम ख़ान को इस युद्ध को विजय करने के लिए भेजा। शहजादे के आगमन का समाचार सुनकर कई कायर पहाड़ो में जा छुपे। कुछ डरपोक लोगो ने गुरु जी के आत्म बल को गिराने का प्रयास कर रहे थे तथा सलाह देने लगे कि वे भी तूफान से डर कर किसी और स्थान पर चले जाएँ। मुअज़म खां स्वयं तो लाहौर चला गया तथा अपने एक सहायक मिर्जा जाफ़र बेग को आनंदपुर साहिब भेज दिया। मिर्जा जाफ़र बेग बड़े अच्छे स्वभाव का था। वह गुरु गोबिंद सिंह जी की नगरी पहुँच कर उनसे बहुत प्रभावित हुआ। उसने गुरु जी से जो बेमुख हुए थे उनके घर गिरा दिए तथा उन्हें दण्ड दिया। वह बेमुखों को सुधार कर वापिस चला गया। इस के उपरांत औरंगज़ेब ने अपने चार योद्धा और भेजे। उन्होंने भी जो बेमुख शेष बच गये थे उनके घर उजाड़ दिए तथा दण्डित किया तथा वापिस चले गए। गुरु जी ने उस परमपिता का धन्यवाद किया कि प्रभु जी ने स्वयं उनकी रक्षा की है। इस अध्याय में 22 चौपाइया, 3 दोहे तथा 2 चारनी दोहे मिलाकर कुल 25 छंद है।

सहजादे को आगमन मद्र देस।।

।। शहजादे का आगमन मद्र देश।।

।।चौपई।।

इह बिधि सो बध भयो जुझारा।।
आन बसे तब धाम लुझारा।।
तब अउरंग मन माहि रिसावा।।
मद्द देस को पूत पठावा।।1।।

शब्दार्थ : बध–मारा गया। जुझारा–योद्धा। धाम–घर। अउरंग–औरंगज़ेब। रिसावा–क्रोधित हुए। पूत–शहजादा मुअज़म शाह।

भावार्थ : इस प्रकार जुझार सिंह युद्ध में मारा गया तथा योद्धा अपने अपने घरों को चले गए। यह देखकर औरंगज़ेब बड़ा क्रोधित हुआ। उसने अपने बेटे मुअज़म खां को सेना देकर पहाड़ देश की ओर भेजा।

तिह आवत सभ लोक डराने।।
बडे बडे गिर हेर लुकाने।।
हमहूं लोगन अधिक डरायो।।
काल करम को मरम न पायो।।2।।

शब्दार्थ : गिर–पर्वत। हेर–देखना। करम–चमत्कार। मरम–भेद।

भावार्थ : शहजादा मुअज़म खां के आने से सब लोग पहाड़ों में जा छिपे। मुझे (गुरु गोबिंद सिंह जी) भी लोगों ने बहुत डराया। परंतु उस परम पिता परमात्मा की गति का कोई भेद नही पा सकता।

कितक लोक तजि संगि सिधारे।।
जाइ बसे गिरवर जहृ भारे।।
चित मूजीयन को अधिक डराना।।

तिनै उबार न अपना जाना।।3।।

शब्दार्थ : गिरवर–बड़े-बड़े। मूजीयन–कायर। उबार–बचाना।
भावार्थ : कई लोग भय के कारण हमारा (गुरु गोबिंद सिंह का) साथ छोड़ गए तथा जहाँ विशाल पर्वत थे वहाँ जाकर बस गए। उन्होंने हमारे साथ (श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की शरण में) रहना ठीक न समझा।

तब अउरंग जीअ मांझ रिसाए।।
एक अहदीआ ईहां पठाए।।
हम ते भाजि बिमुख जे गए।।
तिनके धाम गिरावत भए।।4।।

शब्दार्थ : अउरंग–औरंगज़ेब। जीअ–दिल में। पठाए–भेजे।
भावार्थ : उस समय औरंगज़ेब ने मन ही मन बहुत क्रोध किया। उसने अपना एक फौजी आनंदपुर साहिब की ओर भेजा। जो लोग श्री गुरु गोबिंद सिंह जी से बेमुख होकर भाग गए थे, उस फौजी (औरंगजेब के अहिलकार) ने उन सब के घर गिरा (तोड़) दिए।

जे अपने गुर ते मुख फिरहै।।
इहां ऊहां तिनके ग्रिह गिर है।।
इहां उपहास न सुरपुर बासा।।
सभ बातन ते रहै निरासा।।5।।

शब्दार्थ : उपहास–मजाक। सुरपुर–स्वर्ग।
भावार्थ : जो मनुष्य अपने गुरु से बेमुख हो जाते हैं उन लोगों के घर लोक और परलोक में गिर जाते हैं, भाव यह है कि गुरु से विमुख होकर किसी को लोक और परलोक में कहीं स्थान नहीं मिलता। इस संसार में लोग उनका उपहास करते हैं और स्वर्ग में उनको कहीं स्थान नही मिलता। वे बेमुख चारों ओर से निराश हो जाते हैं।

दूख भूख तिन को रहै लागी।।
संत सेव ते जो है तिआगी।।
जगत बिखै कोई काम न सरही।।
अंतहि कुंड नरक की परही।।6।।

शब्दार्थ : दूख–दुःख।

भावार्थ : उन बेमुख मनुष्यों को दुख और भूख सदैव ही तड़पाती रहती है। जो महापुरुषों का साथ तथा सेवा त्याग देते हैं उनका इस संसार में कोई मनोरथ पूरा नही होता। अंत में वे नरक कुंड मे जाकर गिरते हैं।

तिन को सदा जगत उपहासा।।
अंतहि कुंड नरक की बासा।।
गुर पग ते जे बिमुख सिधारे।।
ईहां ऊहां तिन के मुख कारे।।7।।

शब्दार्थ : उपहासा–मजाक। गुर पग–गुरु जी के चरण। कारे–काले।

भावार्थ : ऐसे बेमुख लोगों का सारा संसार उपहास करता है। अंत में वे नरक के कुंड में गिरते हैं। जो मनुष्य गुरु के चरणों से बेमुख हो जाते हैं उनका लोक परलोक में मुख काला होता है अर्थात् वे कहीं के नहीं रहते।

पुत्र पउत्र तिनके नही फरै।।
दुख दै मात पिता कौ मरै।।
गुर दोखी सग की म्रित पावै।।
नरक कुंड डारे पछुतावै।।8।।

शब्दार्थ : पुत्र पउत्र–बेटे और पोते। फरै–फलना फूलना। गुर दोखी–गुरु जी के विरोधी।

भावार्थ : उन बेमुख मनुष्यों का वंश कभी फलता फूलता

नहीं। वे अपने माता पिता को दुख देकर मरते हैं। गुरु जी का विरोध करने वाला अत्यंत कष्ट भोगकर मरता है अर्थात् बुरा अंत प्राप्त करता है। उनको नरक की अग्नि में झोंका जाता है और अंत में वह पश्चाताप करता है।

बाबे के बाबर के दोऊ।।
आप करे परमेसर सोऊ।।
दीन साह इनको पहिचानो।।
दुनी पत्ति उनकौ अनुमानो।।9।।

शब्दार्थ : बाबे–गुरु नानक देव जी की गद्दी के वारिस। बाबर–बाबर बादशाह के तखत के वारिस। साह–धरम के बादशाह, सच्चे पातशाह। दुनी पत्ति–दुनिया के बादशाह, स्वामी।
शब्दार्थ : श्री गुरु नानक देव जी की गद्दी के वारिस तथा बाबर बादशाह की गद्दी के वारिस, इन दोनों को परमपिता परमात्मा जी ने उत्पन्न किया है। गुरु नानक देव जी के उतराधिकारी को धर्म के रक्षक कह कर जानो तथा बाबर के उतराधिकारी दुनिया के स्वामी हैं।

जो बाबे के दाम न दैहै।।
तिनते गहि बाबर के लैहै।।
दै दै तिन को बडी सजाइ।।
पुनि लैहै ग्रिह लूटि बनाइ।।10।।

शब्दार्थ : दाम–माया। गहि–जबरदस्ती।
भावार्थ : जो पुरुष गुरु घर के लिए माया (दमड़ी) नही देगें उनसे बाबर के आदमी छल-बल से छीन कर ले जायेंगे। उनको कठोर दण्ड दे कर उनके घर लूट लेंगे।

जब है है बेमुख बिना धन।।

तब चड़िहै सिक्खन कह मांगन।।
जे जे सिक्ख तिनै धन दैहैं।।
लूटि मलेछ तिनू कौ लैहैं।।11।।

शब्दार्थ : बिना धन–धन. हीन। सिक्खन–सिक्ख।

भावार्थ : जब बेमुख लोग धनहीन हो जायेंगे तब वे सिक्खों से माँगने चल पड़ेंगे। जो सिक्ख़ उन बेमुख लोगों को धन देते हैं उन (सिक्ख) धन देने वालों को तुर्की लोग लूट लेते हैं।

जब हुइ है तिन दरब बिनासा।।
तब धरिहै निज गुर की आसा।।
जब ते गुर दरसन को अैहैं।।
तब तिनको गुर मुख न लगै हैं।।12।।

शब्दार्थ : दरब–धन। बिनासा–नष्ट होना।

भावार्थ : जब उनका सारा धन नष्ट हो जाएगा। तब वे अपने गुरु जी से आशा रखेंगे। उस समय धनहीन हुए बेमुख गुरु के दर्शन के लिए जायेंगे। तब गुरु जी इनको मुख नही लगाएँगे।

बिदा बिना जैहैं तब धामं।।
सरिहै कोई न तिनको कामं।।
गुर दर ढोई न प्रभ पुर वासा।।
दुहूं ठउर ते रहे निरासा।।13।।

शब्दार्थ : बिदा बिना–आज्ञा लिए बिन। दुहूं ठउर–लोक परलोक।

भावार्थ : उस समय वे गुरु की आज्ञा के बिना ही अपने घर वापिस चले जाएँगे। उनका कोई भी काम पूरा नहीं होगा। न ही उनको गुरु के घर कोई सहारा मिलता है और न ही उस प्रभु के घर में वास मिलता है। वे दोनों घरों से निराश ही रह जाता है।

जे जे गुर चरनन रत है हैं।।
तिन को कसटि न देखन पै हैं।।
रिद्ध सिद्ध तिन के ग्रिह माहीं।।
पाप ताप छ्वै सकै न छाहीं।।14।।

शब्दार्थ : रत–जुड़े हुए। कसटि–कष्ट। पाप–बुरे काम। ताप–कष्ट दुख।

भावार्थ : जो गुरु चरणों से प्रीत करते हैं उनको कभी किसी प्रकार का कोई कष्ट नहीं होता। उनको किसी प्रकार का दुख तथा रोग छू तक नहीं सकता।

तिह्ह मलेछ छ्वै है नही छाहां।।
असट सिद्ध है है घरि माहां।।
हास करत जो उदम उठै है।।
नवो निधि तिन के घरि अै है।।15।।

शब्दार्थ : असट–आठ। नवो निधि–नौ निधि।

भावार्थ : दुष्ट लोग उनकी परछाई को नहीं छू सकते, उनके घर में आठ सिद्धियाँ निवास करती हैं। जो पुरुष सहजवास से किसी के भले के लिए उद्धम करेगें उनके घर नौ निधियाँ अपने आप ही चली आएँगी।

मिरजाबेग हुतो तिह नामं।।
जिन ढाहे बेमुखन के धामं।।
सभ सनमुख गुर आप बचाए।।
तिनके बार न बांकन पाए।।16।।

शब्दार्थ : सनमुख–गुरु जी की सेवा मे रहने वाले लोग। बांकन–टेड़े।

भावार्थ : जिस का नाम मिर्जा बेग था, जिसने बेमुख लोगों के घरों को गिराया था। गुरु जी के समुख रहने वाले सिक्खों को

गुरु जी ने अपने आप ही बचा लिया तथा उनका कोई बाल भी बांका न कर सका।

उत अउरंग जीय अधिक रिसायो।।
चार अहदीयन अउर पठायो।।
जे बेमुख तांते बचि आए।।
तिनके ग्रिह पुनि इनै गिराए।।17।।

शब्दार्थ : रिसायो—क्रोधित। तांते—मिर्जा बेग। ग्रिह—घर। इनै—चार योद्धा जो औरंगज़ेब ने भेजे थे।

भावार्थ : उधर औरंगज़ेब बड़ा क्रोधित हुआ। उसने चार अहिलकारों को और भेज दिया। जो बेमुख उस मिर्जा बेग से बच गए उनके घरों को इन अहिलकारों ने गिरा दिया।

जे तजि भजे हुते गुर आना।।
तिन पुनि गुरू अहदीअहि जाना।।
मूत्र डार तिन सीस मुंडाए।।
पाहुरि जानि ग्रिहहि लै आए।।18।।

शब्दार्थ : जे—जो लोग। आना—और जगह पर। पाहुरि—पाहुल ग्रिहहि—घर।

भावार्थ : जो गुरु की शरण छोड़कर अन्य स्थानो पर चले गए थे उन्होंने अहिलकारों को ही अपना गुरु समझ लिया होगा। उनके सिर पर पेशाब डालकर बाल कटवा दिए (सिर मुडंवा दिए) और वे पाहुल समझ कर वापिस घर में ले आये।

जे जे भाज हुते बिनु आइसु।।
कहो अहदीअहि किनै बिताइसु।।
मूंड मूंडि करि सहरि फिराए।।
कार भेट जनु लैन सिधाए।।19।।

शब्दार्थ : आइसु–आ गया। मुंड–सिर। मूंडि–मुंडवा कर।
भावार्थ : जो बेमुख होकर गुरु की आज्ञा के बिना भाग गए थे उनके बारे में जानकारी किस ने दी ? अहिलकारों ने उनके सिर मुंडवा कर सारे शहर में घुमाया। इस तरह प्रतीत हो रहा था जैसे वे कर भेंट ईकट्ठा करने के लिए गये हो।

पाछै लागि लरिकवा चले।।
जानुक सिक्ख सखा हैं भले।।
छिके तोबरा बदन चड़ाए।।
जनु ग्रिह खान मलीदा आए।।20।।

शब्दार्थ : लरिकवा–लड़के। जानुक–मानो। तोबरा–घोड़ों के मुँह पर चढ़ाने वाले थैले। मलीदा–चूरमा।
भावार्थ : उन बेमुखों के पीछे लड़के लग गए जैसे यह उनके अच्छे प्रेमी सिक्ख हों। उनके मुख पर लीद के तोबरे चढ़ाये हुए थे। मानो उनके खाने के लिए चूरमा आया हो।

मसतक सुभे पनहीयन घाइ।।
जनु करि टीका दए बनाइ।।
सीस ईट के घाइ करेही।।
जनु तिनु भेट पुरातन देही।।21।।

शब्दार्थ : मसतक–माथा। सुभे–शोभायमान। पनहीयन–जूते। घाइ–घाव। जनु–मानो।
भावार्थ : उनके माथे पर जूतों के घाव ऐसे लग रहे थे मानो अच्छी तरह तिलक लगा दिया हो। उनके सिर पर ईंट लगने के घाव ऐसे लग रहे थे मानो उनको कोई पुरानी भेंट मिली हो।

।।दोहरा।।
कबहू रण जूझयो नही कछु दै जसु नहि लीन।।

गांव बसति जानयो नही जम सो किन कहि दीन।।22।।

शब्दार्थ : जसु–यश।

भावार्थ : जिस मनुष्य ने कभी युद्ध नही किया तथा कोई दान देकर कभी यश नहीं प्राप्त किया, जिसे गाँव में बसते हुए कोई जानता तक नहीं फिर बड़ी हैरानी की बात है कि यम को उसकी खबर किसने दे दी।

।।चौपई।।

इह बिध तिनो भयो उपहासा।।
सभ संतन मिलि लखियो तमासा।।
संतन कसट न देखन पायो।।
आप हाथ दै नाथ बचायो।।23।।

शब्दार्थ : उपहासा–निरादर। लखियो–देखा।

भावार्थ : इस तरह उनका उपहास उड़ाया गया। सब संतो ने इकट्ठे होकर यह तमाशा देखा। गुरुमुखों को कोई दुख कष्ट नहीं हुआ। उस परम पिता परमात्मा ने आप ही हाथ दे कर उनकी रक्षा की।

।।चारणी।।दोहिरा।।

जिसनो साजन राखसी दुसमन कवन बिचार।।
छवै् न सकै तिह छाहिकौ निहफल जाइ गवार।।24।।

शब्दार्थ : साजन–प्रभु। राखसी–रक्षा। निहफल–निष्फल।

भावार्थ : जिसकी प्रभु स्वयं रक्षा करता है, शत्रु उसका क्या बिगाड़ सकता है। जो मूर्ख उसको दुख देने का प्रयत्न करता है, उस मूर्ख का सारा प्रयत्न व्यर्थ हो जाता है।

जे साधू सरनी परे तिनके कवण बिचार।।
दंत जीभ जिम राखि है दुसट अरिसट संघार।।25।।

शब्दार्थ : सरनी–शरण। दुसट–दुष्ट।
भावार्थ : जो मनुष्य संतो की शरण में जाते हैं वे कभी दुखी नहीं होते। उनको कोई कष्ट नहीं होता। जिस प्रकार दाँतों में जीभ की रक्षा होती है उनके दुखों तथा कष्टों का निवारण हो जाता है।

इति स्री बचित्र नाटक ग्रंथे साहजादे व अहदीआ गमन बरननं नाम त्रोदसमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु ।।13।।अफजू।।460।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथे शहज़ादे तथा अहिदियों के आने का वर्णन करने वाला तेरहवां अध्याय समाप्त होता है और 460 छंद यहाँ आ चुके है।

14 सरब काल से बेनती

इस अध्याय में श्री गुरु गोबिंद सिंह जी कहते हैं कि प्रभु अपने भक्तों की सभी प्रकार के संकटों से रक्षा करते हैं। भक्तों के शत्रुओं का विनाश करते हैं। उस प्रभु ने श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की भी अपना सेवक जान कर सहायता की। अपना हाथ देकर संकटों से बचाया। उस प्रभु की कृपा का उन्हें गर्व है जिससे वे सब का रक्षक बन कर गर्व महसूस करते हैं। इस अध्याय मे 11 चौपाइयाँ हैं।

।।चौपई।।

सरबकाल सभ साध उबारे।।
दुखु दै कै दोखी सभ मारे।।
अदभुति गति भगतन दिखराई।।
सभ संकट ते लए बचाई।।1।।

शब्दार्थ : अदभुति–अशचरज (अनोखा)। गति–लीला। भगतन–प्रभु के सेवक।

भावार्थ : उस सर्वशक्तिमान परमात्मा ने प्रत्येक समय अपने भक्तों की रक्षा की है। भक्तों के शत्रुओं को दुख देकर मार दिया है। प्रभुं जी ने अपनी अदभुत लीला दिखाई तथा उनको हर प्रकार के संकट से बचाया।

सभ संकट ते संत बचाए।।
सभ कंटक कंटक जिम घाए।।
दास जान मुरि करी सहाइ।।
आप हाथु दै लयो बचाइ।।2।।

शब्दार्थ : कंटक–शत्रु। कंटक–संकट।

भावार्थ : प्रभु जी ने सभी संकटों से अपने भक्तों की रक्षा की है। भक्तों के सभी शत्रुओं को कांटे के समान नष्ट कर दिया। उस प्रभु जी ने मेरी (श्री गुरु गोबिंद सिंह जी की) भी अपना सेवक जान कर सहायता की। अपना हाथ देकर संकटों से बचाया।

अब जो जो मै लखे तमासा।।
सो सो करो तुमै अरदासा।।
जो प्रभ क्रिपा कटाछ दिखै है।।
सो तव दास उचारत जै है।।3।।

शब्दार्थ : तमासा–कौतुक। अरदासा–भेंट। कटाछ–मेहर की नजर।

भावार्थ : अब तक जो-जो कौतुक देखे हैं, मैं (श्री गुरु गोबिंद सिंह जी) उनका वर्णन करता हूँ। हे प्रभु ! यदि आप मुझ पर कृपा करोगे तभी मैं आपका सेवक सारे कौतुकों का वर्णन कर सकूँगा।

जिह जिह बिधि मै लखे तमासा।।
चाहत तिनको कीयो प्रकासा।।
जो जो जनम पूरबले हेरे।।
कहिहो सु प्रभु प्राक्रम तेरे।।4।।

शब्दार्थ : प्रकासा–प्रक्ट होना। पूरबले–पूर्व (पहले)।

भावार्थ : जिस प्रकार के कौतुक मैंने देखे मैं उन सबको प्रकट

करना चाहता हूँ। अपने बर्जुगों के जो जो जन्म मैंने पहले देखे हैं, हे प्रभु ! उन सबका वर्णन आपकी कृपा से करूँगा।

सरब काल है पिता अपारा।।
देबि कालका मात हमारा।।
मनूआ गुर मुरि मनसा माई।।
जिनि मोको सुभ क्रिआ पड़ाई।।5।।

शब्दार्थ : देबि कालका–महाशक्ति।

भावार्थ : वह सर्वशक्तिमान परमात्मा मेरे पिता हैं। महाशक्ति मेरी माता है। शुद्ध मन मेरा गुरु है तथा शुद्ध बुद्धि माता है जिसने मुझे अच्छी शिक्षा एवम् संस्कार दिए।

जब मनसा मन मया बिचारी।।
गुर मनूआ कह कहयो सुधारी।।
जे जे चरित पुरातन लहे।।
ते ते अब चहीअत हैं कहे।।6।।

शब्दार्थ : मया–कृपा। पुरातन–पुराने कौतुक।

भावार्थ : जब बुद्धि ने मुझ पर कृपा दृष्टि की तब गुरु मन की आज्ञा से सब कथा बड़े अच्छे ढंग से कहूँगा। जो-जो कौतुक मैंने अब तक देखे हैं उन सब का वर्णन करना चाहता हूँ।

सरबकाल करणा तब भरे।।
सेवक जानि दया रस ढरे।।
जो जो जनमु पूरबलो भयो।।
सो सो सभ सिमरण कर दयो।।7।।

शब्दार्थ : सरबकाल–परमेश्वर। करणा–दया।

भावार्थ : उस सर्वशक्तिमान ने मेरे ऊपर दया की, मुझे अपना सेवक जान कर कृपा के रंग मे रंग दिया। जो-जो रूप मैंने

पूर्वजन्म में धारण किए वे सब मुझे प्रभु ने याद दिला दिए।

मो को इती हुती कह सुद्धं।।
जस प्रभ दई क्रिपा करि बुद्धं।।
सरबकाल तब भए दइआला।।
लोह रच्छ हमको सभ काला।।8।।

शब्दार्थ : सुद्धं–खबर।

भावार्थ : मुझ में इतनी समझ (बुद्धि) कहाँ है। प्रभु की महिमा का वर्णन करने की बुद्धि प्रभु की कृपा से ही मिली है। अकाल पुरुष मुझ पर बड़े दयालु हुए। प्रभु मेरी हर समय रक्षा करते हैं।

सरबकाल रच्छा सभ काला।।
लोह रच्छ सरबदा बिसाला।।
ढीठ भयो तव क्रिपा लखाई।।
अँडो फिरो सभन भयो राई।।9।।

शब्दार्थ : सरबकाल–प्रभु। सरबदा–हर प्रकार से। ढीठ–निडर। अँडो–मान। राई–राज़ा।

भावार्थ : वह परमपिता परमात्मा मेरा हर समय रक्षक है। उस महाशक्ति देवी की भी मेरे ऊपर बड़ी कृपा है। जब मैंने आपकी अपार कृपा के बारे में समझ लिया तब मैं निर्भय हो गया। आपकी कृपा का मुझे गर्व है जिससे मैं सब का रक्षक बन कर गर्व महसूस करता हूँ।

जिह जिह बिध जनमन सुधि आई।।
तिम तिम कहे गरंथ बनाई।।
प्रथमे सतिजुग जिह बिधि लहा।।
प्रथम देबि चरित को कहा।।10।।

शब्दार्थ : प्रथमे–पहले। देबि–देवी।
भावार्थ : जिस प्रकार मुझे अपने पूर्वजन्म के बारे में ज्ञान हुआ, उसी प्रकार मैंने ग्रंथ बना कर उसका वर्णन किया। सतयुग में जो कौतुक मैंने जाना उसका वर्णन देवी के पहले चरित्र में किया है।

पहिले चंडी चरित बनायो।।
नख सिख ते क्रम भाख सुनायो।
छोर कथा तब प्रथम सुनाई।।
अब चाहत फिर करौ बडाई।।11।।

शब्दार्थ : नख–नाखून। सिख–सिर। बडाई–प्रसंशा करना।
भावार्थ : मैंने पहले चंडी चरित्र की रचना की। आदि से लेकर अंत तक उसका वर्णन किया है। उस समय मैंने संक्षेप में वर्णन किया था अब विस्तार से करना चाहता हूँ।

इति स्त्री बचित्र नाटक ग्रंथे सरब काल की बेनती बरननं नाम चौदसमो धिआइ समापत मसतु सुभ मसतु।।14।।अफजू ।।471।।

यहाँ सुंदर बचित्र नाटक ग्रंथ का सरब काल परमेश्वर की प्रार्थना करने वाला प्रसिद्ध चौदहवां अध्याय समाप्त है शुभ हुआ, तथा 471 छंद भी लिखे जा चुके हैं तथा समाप्त हो चुके हैं।



प्रि० बेअंत कौर

प्रि० बेअंत कौर जी का साहित्य और शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण स्थान है। आपने पंजाबी, अंग्रेजी तथा हिन्दी भाषा में अनेकों विषयों पर अपनी सुंदर लेखनी द्वारा अनूठी छाप छोड़ी है। अपनी भाषा को सुदृढ़ बनाने हेतु ही आपने पंजाबी, अंग्रेजी में एम. ए. किया एवम् हिंदी में साहित्य रत्न की डिग्री प्राप्त की।

आपने अध्यापन के क्षेत्र में रहकर भी शिक्षा को एक नया आयाम दिया। आपको विभिन संस्थाओं में कार्य करने का अवसर मिला और आपने अपने अनुभव का भरपूर प्रदर्शन भी किया। अध्यापन कार्य और साहित्यिक योगदान के लिए आपको कई बार सम्मानित भी किया गया।

आपकी साहित्य में रूचि बहुत छोटी उम्र से पनपने लगी थी। आपकी अनेको रचनाएँ राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहीं हैं, जो क्रम आज भी जारी है। आपने कई पुस्तकें लिखकर साहित्य को अपने ढंग से समृद्ध किया है। आपने गुरु गोबिंद सिंह जी की लगभग सभी रचनाओं का सूक्ष्म रूप से अध्ययन किया है। यही उनका लक्ष्य भी है और साधना का विषय भी, जिस ने उनको एक नई जीवन दिशा और प्रेरणा दी।